

Yoga Vasishtha, Book 2 — Mumukṣu

The Seeker. Sanskrit with English and Hindi.

From yogavasishtha.com — edition of 28 September 2026. The Sanskrit is in the public domain. The English and Hindi translations were made with a language model and have not been reviewed by a Sanskrit scholar: read them as a study aid, not as an authority. Each verse gives the Sanskrit in Devanagari and IAST, then the English, then the Hindi.

Chapter 1

2.1.1

वाल्मीकिरुवाच इति नादेन महता वचस्युक्ते सभागतैः राममग्रगतं प्रीत्या विश्वामित्रोऽभ्यभाषत ॥ १ ॥

vālmīkiruvāca iti nādena mahatā vacasyukte sabhāgataiḥ rāmamagragataṁ prītyā viśvāmitro'bhyabhāṣata || 1 ||

Valmiki said: When the people gathered in the assembly had said this loudly, Vishvamitra lovingly spoke to Rama, who sat in front of him.

वाल्मीकि ने कहा: सभा में बैठे लोगों ने जब यह बात ज़ोर से कही, तो विश्वामित्र ने प्रेम से राम से बात की, जो उनके सामने बैठे थे।

2.1.2

न राघव तवास्त्यन्यज्ज्ञेयं ज्ञानवतां वर स्वयैव सूक्ष्मया बुद्ध्या सर्वं विज्ञातवानसि ॥ २ ॥

na rāghava tavāstyanyajñeyaṁ jñānavatāṁ vara svayaiva sūkṣmayā buddhyā sarvaṁ vijñātavānasi || 2 ||

Raghava, there is nothing else left for you to know, best of the wise. With your own subtle mind you have already understood everything yourself.

हे राघव, तुम्हारे लिए अब जानने को कुछ और शेष नहीं है, हे ज्ञानियों में श्रेष्ठ। तुमने अपनी सूक्ष्म बुद्धि से स्वयं ही सब कुछ जान लिया है।

2.1.3

केवलं मार्जनामात्रं मनागेवोपयुज्यते स्वभावविमले नित्यं स्वबुद्धिमुकुरे तव ॥ ३ ॥

kevalaṁ mārjanāmātraṁ manāgevopayujyate svabhāvavimale nityaṁ svabuddhimukure tava || 3 ||

Only a small wiping is needed - just a little - for the mirror of your mind, which by its own nature is always spotless.

केवल थोड़ा सा पोंछना ही चाहिए - बस थोड़ा सा - तुम्हारी बुद्धि रूपी दर्पण के लिए, जो अपने स्वभाव से सदा निर्मल है।

2.1.4

भगवद्व्यासपुत्रस्य शुकस्येव मतिस्तव विश्रान्तिमात्रमेवान्तर्ज्ञातज्ञेयापेक्षते ॥ ४ ॥

bhagavadvyāsaputrasya śukasyeva matistava viśrāntimātramevāntarjñātajñeyāpekṣate || 4 ||

Your mind, like that of Shuka, the son of the blessed Vyasa, has already known within itself what there was to know - now it needs only rest.

तुम्हारा मन, भगवान व्यास के पुत्र शुक के मन की तरह, भीतर ही जानने योग्य को जान चुका है - अब उसे केवल विश्राम चाहिए।

2.1.5

श्रीराम उवाच भगवद्व्यासपुत्रस्य शुकस्य भगवन्कथम्ज्ञेयेऽप्यादौ न विश्रान्तं विश्रान्तं च धिया पुनः ॥ ५ ॥

śrīrāma uvācabhagavadvyāsaputrasya śukasya bhagavankathamjñeये'pyādaу na viśrāntaṁ viśrāntaṁ ca dhiyā punaḥ || 5 ||

Rama said: Venerable one, how is it that the mind of the blessed Vyasa's son Shuka, even after knowing what was to be known, did not find rest at first, and only found rest afterward, through thought?

श्रीराम ने कहा: हे भगवन, यह कैसे हुआ कि भगवान व्यास के पुत्र शुक का मन, जानने योग्य को जान लेने पर भी, पहले शांत नहीं हुआ, और फिर बुद्धि से सोच-विचार करने पर शांत हुआ?

2.1.6

विश्वामित्र उवाच । आत्मोदन्तसमं राम कथ्यमानमिदं मया । शृणु व्यासात्मजोदन्तं जन्मनामन्तकारणम् ॥ ६ ॥

viśvāmitra uvāca | ātmoudantasamaṃ rāma kathyamānamidaṃ mayā | śṛṇu vyāsātmajoudantaṃ janmanāmantakāraṇam || 6 ||

Vishvamisra said: Rama, what I am about to tell you is just like your own story. Listen to the story of Vyasa's son, which is the cause that ends birth after birth.

विश्वामित्र ने कहा: हे राम, जो मैं अब कहने जा रहा हूँ, वह ठीक तुम्हारी अपनी कहानी जैसा है। व्यास के पुत्र की वह कथा सुनो, जो जन्म-जन्म के अंत का कारण है।

2.1.7

योऽयमञ्जनशैलाभो निविष्टो हेमविष्टरे । पार्श्वे तव पितुर्व्यासो भगवान्भास्करद्युतिः ॥ ७ ॥

yo'yamañjanaśailābho niviṣṭo hemaviṣṭare | pārsve tava pituḥvyāso bhagavānbhāskaradyutiḥ || 7 ||

This one here, dark like a mountain of black collyrium, seated on a golden seat beside your father, is the blessed Vyasa, shining like the sun.

यह जो यहाँ बैठे हैं, काजल के पहाड़ जैसे श्याम, सोने के आसन पर, तुम्हारे पिता के पास - यही भगवान व्यास हैं, सूर्य के समान तेजस्वी।

2.1.8

अस्याभूदिन्दुवदनस्तनयो नयकोविदः । शुको नाम महाप्राज्ञो यज्ञो मूर्त्येव सुस्थितः ॥ ८ ॥

asyābhūdinduvadanastanayo nayakovidāḥ | śuko nāma mahāprājño yajño mūrtyeva susthitaḥ || 8 ||

He had a son with a face like the moon, wise in right conduct, named Shuka - a man of great wisdom, as steady and pure as if the sacrifice itself had taken a body.

उनका एक पुत्र था, जिसका मुख चाँद जैसा था, जो नीति में निपुण था, नाम शुक - महाबुद्धिमान, मानो यज्ञ ने स्वयं शरीर धारण कर लिया हो, इतना स्थिर और शुद्ध।

2.1.9

प्रविचारयतो लोकयात्रामलमिमां हृदि । तवेव किल तस्यापि विवेक उद्भूदयम् ॥ ९ ॥

pravicārayato lokayātrāmalamimāṃ hṛdi | taveva kila tasyāpi viveka udbhūdayam || 9 ||

As he reflected deeply in his heart on this course of worldly life, the very discernment that had arisen in you arose in him too.

जब उसने अपने हृदय में संसार की इस गति पर गहराई से विचार किया, तो उसमें भी वैसा ही विवेक जागा जैसा तुममें जागा था।

2.1.10

तेनासौ स्वविवेकेन स्वयमेव महामनाः । प्रविचार्य चिरं चारु यत्सत्यं तदवाप्तवान् ॥ १० ॥

tenāsau svavivekena svayameva mahāmanāḥ | pravicārya ciraṃ cāru yatsatyam tadavāptavān || 10 ||

By his own discernment, that great-hearted one reflected long and carefully by himself, and he attained what is true.

अपने ही विवेक से, वह महान हृदय वाला व्यक्ति स्वयं देर तक भली प्रकार विचार करके, जो सत्य है उसे पा गया।

2.1.11

स्वयं प्राप्ते परे वस्तुन्यविश्रान्तमनाः स्थितः । इदं वस्त्विति विश्वासं नासावात्मन्युपाययौ ॥ ११ ॥

swayaṃ prāpte pare vastunyaviśrāntamanāḥ sthitaḥ | idaṃ vastviti viśvāsaṃ nāsāvātmanyupāyayau || 11 ||

Even though he himself had reached the highest reality, his mind stayed restless; within himself he never came to the certainty, 'This is it.'

यद्यपि उसने स्वयं परम तत्त्व को पा लिया था, फिर भी उसका मन अशांत ही रहा; उसे भीतर यह विश्वास नहीं हुआ कि 'यही वह वस्तु है।'

2.1.12

केवलं विररामास्य चेतो विगतचापलम् । भोगेभ्यो भूरिभङ्गेभ्यो धाराभ्य इव चातकः ॥ १२ ॥

kevalaṃ virarāmasya ceto vigatacāpalam | bhogebhyo bhūribhaṅgebhyo dhārābhyo iva cātakaḥ || 12 ||

Only this happened: his mind, no longer restless, turned away from pleasures that are full of interruptions, just as the chataka bird turns away from running streams.

बस इतना हुआ कि उसका मन, अब चंचल न रहकर, उन सुखों से मुँह मोड़ बैठा जो बार-बार टूटते हैं - ठीक वैसे ही जैसे चातक पक्षी बहती धाराओं से मुँह मोड़ लेता है।

2.1.13

एकदा सोऽमलप्रज्ञो मेरावेकान्तसुस्थितम् । पप्रच्छ पितरं भक्त्या कृष्णद्वैपायनं मुनिम् ॥ १३ ॥

ekadā so'malaprajño merāvekāntasusthitam | papraccha pitaraṃ bhaktyā kṛṣṇadvaiṇāyanaṃ munim || 13 ||

One day this man of pure understanding devotedly asked his father, the sage Krishnadvaipayana, who sat alone in a quiet place on Mount Meru.

एक दिन उस निर्मल बुद्धि वाले शुक ने भक्तिपूर्वक अपने पिता, मुनि कृष्णद्वैपायन (व्यास) से पूछा, जो मेरु पर्वत पर एकांत में शांत बैठे थे।

2.1.14

संसाराडम्बरमिदं कथमभ्युत्थितं मुने । कथं च प्रशमं याति कियत्कस्य कदेति वा ॥ १४ ॥

saṃsārāḍambaramidaṃ kathamabhyutthitaṃ mune | kathaṃ ca praśamaṃ yāti kiyatkasya kadeti vā || 14 ||

Sage, how did this whole show of worldly life come about? And how does it come to an end? How much of it is there, whose is it, and when does it happen?

हे मुने, यह संसार का यह सारा तमाशा कैसे उठ खड़ा हुआ? और यह कैसे शांत होता है? यह कितना है, किसका है, और कब होता है?

2.1.15

इति पृष्टेन मुनिना व्यासेनाखिलमात्मजे । यथावदमलं प्रोक्तं वक्तव्यं विदितात्मना ॥ १५ ॥

iti prṣṭena muninā vyāsenākhilamātmaje | yathāvadaamalaṃ proktaṃ vaktavyaṃ viditātmanā || 15 ||

Asked in this way, the sage Vyasa, who had realized the self, told his son everything that needed to be said, exactly as it was, plainly and clearly.

इस प्रकार पूछे जाने पर, आत्मज्ञानी मुनि व्यास ने अपने पुत्र को जो कुछ कहने योग्य था, वह सब ठीक-ठीक और साफ़ शब्दों में बता दिया।

2.1.16

आऽज्ञासिषं पूर्वमेतदहमित्यथ तत्पितुः । स शुकः शुभया बुद्ध्या न वाक्यं बह्वमन्यत ॥ १६ ॥

ā'jñāsiṣaṃ pūrvametadahamityatha tatpituḥ | sa śukaḥ śubhayā buddhyā na vākyaṃ bahvamanyata || 16 ||

Shuka thought, 'I already knew this myself before.' So, with his clear and healthy mind, he did not think much of his father's words.

शुक ने सोचा, 'यह तो मैं पहले से ही जानता था।' इसलिए अपनी निर्मल बुद्धि से उसने अपने पिता की बात को बहुत महत्व नहीं दिया।

2.1.17

व्यासोऽपि भगवान्बुद्ध्वा पुत्राभिप्रायमीदृशम् । प्रत्युवाच पुनः पुत्रं नाहं जानामि तत्त्वतः ॥ १७ ॥

vyāso'pi bhagavānbuddhāvā putrābhiprāyamīdṛśam | pratyuvāca punaḥ putraṃ nāhaṃ jānāmi tattvataḥ || 17 ||

The blessed Vyasa, sensing this attitude in his son, spoke to him again: 'In truth, I myself do not really know this.'

भगवान् व्यास ने भी अपने पुत्र के मन का यह भाव समझकर, फिर से पुत्र से कहा: 'सच तो यह है कि मैं इसे तत्त्व से नहीं जानता।'

2.1.18

जनको नाम भूपालो विद्यते वसुधातले । यथावद्वेत्यसौ वेद्यं तस्मात्सर्वमवाप्स्यसि ॥ १८ ॥

janako nāma bhūpālo vidyate vasudhātale | yathāvadvettyasau vedyam tasmātsarvamavāpsyasi || 18 ||

There is a king named Janaka on this earth; he truly knows what is to be known. Go to him, and you will obtain everything.

इस पृथ्वी पर जनक नाम का एक राजा है; वह जानने योग्य को ठीक-ठीक जानता है। उसी से तुम्हें सब कुछ प्राप्त होगा।

2.1.19

पित्रेत्युक्ते शुकः प्रायात्सुमेरोर्वसुधातले । विदेहनगरीं प्राप जनकेनाभिपालिताम् ॥ १९ ॥

pitreti'ukte śukaḥ prāyātsumerorvasudhātale | videhanagarīṃ prāpa janakenābhipālītām || 19 ||

When his father had said this, Shuka left Mount Sumeru and went down to the earth. He arrived at the city of Videha, which was ruled by Janaka.

पिता के यह कहने पर शुक सुमेरु पर्वत से पृथ्वी की ओर चल पड़ा। वह विदेह नगरी में पहुँचा, जिस पर जनक राज करते थे।

2.1.20

आवेदितोऽसौ याष्टीकैर्जनकाय महात्मने । द्वारि व्याससुतो राजञ्शुकोऽत्र स्थितवानिति ॥ २० ॥

āvedito'sau yāṣṭīkairjanakāya mahātmane | dvāri vyāsasuto rājañśuko'tra sthitavāniti || 20 ||

The doorkeepers with their staffs announced him to the great King Janaka: 'O King, Shuka, the son of Vyasa, is standing here at the gate.'

लाठीधारी द्वारपालों ने महान राजा जनक को सूचना दी: 'हे राजन, व्यास के पुत्र शुक यहाँ द्वार पर खड़े हैं।'

2.1.21

जिज्ञासार्थं शुकस्यासावास्तामेवेत्यवज्ञया उत्त्वा बभूव जनकस्तूष्णीं सप्त दिनान्यथ ॥ २१ ॥

jijñāsārthaṃ śukasyāsāvāstāmevetyavajñayā uktvā babhūva janakastūṣṇīm sapta dinānyatha || 21 ||

To test Shuka, Janaka said, as if dismissing him, 'Just let him wait there,' and then Janaka remained silent for seven days.

शुक की परीक्षा लेने के लिए जनक ने उपेक्षा से कह दिया, 'उसे वहीं ठहरने दो,' और फिर जनक सात दिनों तक चुप रहे।

2.1.22

ततः प्रवेशयामास जनकः शुकमङ्गणम् तत्राहानि स सप्तैव तथैवावसदुन्मनाः ॥ २२ ॥

tataḥ praveśayāmāsa janakaḥ śukam aṅgaṇam tatrāhāni sa saptaiṣa tathaiṣāvasad unmanāḥ || 22 ||

Then Janaka had Shuka brought into the courtyard. There too he stayed for another seven days in the same way, his mind unsettled.

फिर जनक ने शुक को आँगन में बुलवा लिया। वहाँ भी वह सात दिनों तक उसी तरह ठहरा रहा, मन में बेचैन।

2.1.23

अथ प्रवेशयामास जनकोऽन्तःपुरं शुकम् राजा न दृश्यते तावदिति सप्त दिनानि च ॥ २३ ॥

atha praveśayāmāsa janako'ntaḥpuram śukam rājā na dṛśyate tāvad iti sapta dināni ca || 23 ||

Then Janaka had Shuka brought into the inner chambers of the palace. For seven more days, the king was nowhere to be seen.

फिर जनक ने शुक को अंतःपुर में भिजवा दिया। सात और दिनों तक राजा कहीं दिखाई नहीं दिए।

2.1.24

तत्रोन्मदाभिः कान्ताभिर्भोजनैर्भोगसंचयैः जनको लालयामास शुकं शशिसमाननम् ॥ २४ ॥

tatrānmadābhiḥ kāntābhir bhojanair bhogasaṁcayaiḥ janako lālayāmāsa śukam śāśisamānanam || 24 ||

There, with intoxicating women, with feasts, and with heaps of pleasures, Janaka pampered Shuka, whose face was like the moon.

वहाँ जनक ने मादक स्त्रियों, तरह-तरह के भोजनों और सुखों के ढेर से शुक को लाड़-प्यार से रखा, जिसका मुख चाँद जैसा सुंदर था।

2.1.25

ते भोगास्तानि दुःखानि व्यासपुत्रस्य तन्मनः नाजहुर्मन्दपवना बद्धपीठमिवाचलम् ॥ २५ ॥

te bhogās tāni duḥkhāni vyāsaputrasya tanmanaḥ nājahnur mandapavanā baddhapīṭham ivācalam || 25 ||

Those pleasures and those pains could not shake the mind of Vyasa's son, just as gentle breezes cannot move a mountain firmly fixed on its base.

वे सुख और वे दुख व्यास के पुत्र के मन को हिला नहीं सके, ठीक वैसे ही जैसे हल्की हवा अपने आधार पर जमे पर्वत को हिला नहीं सकती।

2.1.26

केवलं सुसमः स्वस्थो मौनी मुदितमानसः । अतिष्ठत्स शुकस्तत्र संपूर्ण इव चन्द्रमाः ॥ २६ ॥

kevalam susamaḥ svastho maunī muditamānasaḥ | atiṣṭhats sa śukastatra sampūrṇa iva candramāḥ || 26 ||

Shuka simply stayed there - perfectly balanced, at ease within himself, silent, and joyful in mind - like the moon at its full.

शुक बस वहाँ ऐसे ही रहा - पूरी तरह संतुलित, स्वयं में स्थिर, मौन, और मन में प्रसन्न - जैसे पूर्ण चंद्रमा।

2.1.27

परिज्ञातस्वभावं तं शुकं स जनको नृपः । आनीतं मुदितात्मानमवलोक्य ननाम ह ॥ २७ ॥

parijñātasvabhāvaṁ taṁ śukam sa janako nṛpaḥ | ānītaṁ muditātmānamavalokya nanāma ha || 27 ||

King Janaka saw Shuka, whose true nature he now recognized, standing before him joyful within himself, and Janaka bowed to him.

राजा जनक ने शुक को देखा - जिसका स्वभाव अब उन्हें भली भाँति समझ में आ गया था, जो उनके सामने लाया गया था और भीतर से प्रसन्न था - और जनक ने उसे प्रणाम किया।

2.1.28

निःशेषितजगत्कार्यं प्राप्ताखिलमनोरथ । किमीप्सितं तवेत्याशु कृतस्वागतमाह तम् ॥ २८ ॥

niḥśeṣitajagatkāryaṁ prāptākhilamanoratha | kimīpsitaṁ tave tyāśu kṛtasvāgatamāha tam || 28 ||

'You for whom there is no more work left in this world, who have attained all that the heart could wish for - what more do you desire?' Having quickly welcomed him, Janaka said this to him.

'हे वह जिसके लिए संसार में अब कोई काम शेष नहीं रहा, जिसने मन की सारी इच्छाएँ पा ली हैं - तुम्हें और क्या चाहिए?' - ऐसा कहकर जनक ने तुरंत उसका स्वागत किया।

2.1.29

श्रीशुक उवाच । संसाराडम्बरमिदं कथमभ्युत्थितं गुरो । कथं प्रशममायाति यथावत्कथयाशु मे ॥ २९ ॥

śrīśuka uvāca | saṁsārāḍambaramidaṁ kathamabhyutthitaṁ guro | kathaṁ praśamamāyāti yathāvatkathayāśu me || 29 ||

Shuka said: Teacher, how did this whole show of worldly existence come about? How does it come to an end? Tell me quickly, just as it is.

श्रीशुक ने कहा: हे गुरु, यह संसार का यह तमाशा कैसे उठ खड़ा हुआ? यह कैसे शांत होता है? मुझे शीघ्र ही ठीक-ठीक बताइए।

2.1.30

विश्वामित्र उवाच । जनकेनेति पृष्टेन शुकस्य कथितं तदा । तदेव यत्पुरा प्रोक्तं तस्य पित्रा महात्मना ॥ ३० ॥

viśvāmitra uvāca | janakeneti prṣṭena śukasya kathitaṁ tadā | tadeva yatpurā proktaṁ tasya pitrā mahātmanā || 30 ||

Vishvāmitra said: When Shuka asked this, Janaka told him exactly what his own great father had already told him before.

विश्वामित्र ने कहा: शुक के यह पूछने पर, जनक ने उसे वही बात बताई जो उसके महान पिता (व्यास) पहले ही उसे बता चुके थे।

2.1.31

श्रीशुक उवाच । स्वयमेव मया पूर्वमेतज्ज्ञातं विवेकतः । एतदेव च पृष्टेन पित्रा मे समुदाहृतम् ॥ ३१ ॥

śrīśuka uvāca | svayameva mayā pūrvametajñātaṁ vivekataḥ | etadeva ca prṣṭena pitrā me samudāhṛtam || 31 ||

Shuka said: 'I already knew this myself before, through my own power of discernment. And this very same thing was told to me by my father when I asked him.'

श्रीशुक ने कहा: 'यह तो मैं पहले से ही अपने विवेक से जानता था। और मेरे पूछने पर मेरे पिता ने भी मुझे यही बताया था।'

2.1.32

भवताप्येष एवार्थः कथितो वाग्विदां वर । एष एव च वाक्यार्थः शास्त्रेषु परिदृश्यते ॥ ३२ ॥

bhavatāpyeṣa evārthaḥ kathito vāgvidāṁ vara | eṣa eva ca vākyaārthaḥ śāstreṣu paridṛśyate || 32 ||

You too, best of speakers, have told me this same truth. And this very same truth is what is seen everywhere in the scriptures.

हे वाणी के ज्ञाताओं में श्रेष्ठ, आपने भी मुझे यही बात बताई है। और यही अर्थ शास्त्रों में हर जगह देखा जाता है।

2.1.33

यथायं स्वविकल्पोत्थः स्वविकल्पपरिक्षयात् । क्षीयते दग्धसंसारो निःसार इति निश्चयः ॥ ३३ ॥

yathāyaṁ svavikalpotthaḥ svavikalpaparikṣayāt | kṣīyate dagdhasaṁsāro niḥsāra iti niścayaḥ || 33 ||

This is the settled truth: this world, which arises from one's own thoughts, is burned away and fades when those very thoughts are dissolved - this world has no substance at all.

यही पक्का सच है: यह संसार मन के अपने विचारों से पैदा होता है, और उन्हीं विचारों के मिट जाने पर यह जल कर खत्म हो जाता है - इस संसार में कोई सार नहीं है।

2.1.34

तत्किमेतन्महाबाहो सत्यं ब्रूहि ममाचलम् । त्वत्तो विश्रान्तिमाप्नोमि चेतसा भ्रमता जगत् ॥ ३४ ॥

tatkimetanmahābāho satyaṁ brūhi mamācalam | tvatto viśrāntimāpnomi cetasā bhramatā jagat || 34 ||

So what is this, mighty one? Tell me the firm truth. From you alone my mind, which wanders through the whole world, finds rest.

तो हे महाबाहु, यह क्या है? मुझे अटल सत्य बताइए। संसार में भटकते हुए मेरे मन को आप से ही विश्राम मिलता है।

2.1.35

जनक उवाच । नातः परतरः कश्चिन्निश्चयोऽस्त्यपरो मुने । स्वयमेव त्वया ज्ञातं गुरुतश्च पुनः श्रुतम् ॥ ३५ ॥

janaka uvāca | nātaḥ paratarah kaścinniścayo'styaparo mune | svayameva tvayā jñātaṁ gurutaśca punaḥ śrutam || 35 ||

Janaka said: 'There is no other, higher conclusion than this, sage. You have known it yourself, and you have also heard it again from your own teacher.'

जनक ने कहा: 'हे मुने, इससे बढ़कर कोई और निश्चय नहीं है। तुमने इसे स्वयं जान लिया है, और अपने गुरु (पिता) से भी फिर से सुन लिया है।'

2.1.36

अविच्छिन्नचिदात्मैकः पुमानस्तीह नेतरत् । स्वसंकल्पवशाद्बद्धो निःसंकल्पश्च मुच्यते ॥ ३६ ॥

avicchinnaacidātmaikaḥ pumānastīha netarat | svasaṁkalpavaśādbaddho niḥsaṁkalpaśca mucyate || 36 ||

There is only one being here, whole and undivided pure awareness - nothing else exists. Under the power of his own thought he is bound, and free of thought he is set free.

यहाँ केवल एक ही सत्ता है - अखंड, चेतन आत्मा - और कुछ नहीं है। अपने ही संकल्प के वश में पड़कर वह बंध जाता है, और संकल्परहित होने पर मुक्त हो जाता है।

2.1.37

तेन त्वया स्फुटं ज्ञातं ज्ञेयं यस्य महात्मनः । भोगेभ्यो विरतिर्जाता दृश्यात्प्राक्सकलादिह ॥ ३७ ॥

tena tvayā sphuṭaṁ jñātaṁ jñeyaṁ yasya mahātmanaḥ | bhogebhyo viratirjātā dṛśyātpṛāksakalādiha || 37 ||

By you, the knowable has been clearly understood - you, great soul, in whom distaste for pleasures arose even before you had experienced the whole visible world.

तुमने ही यह जानने योग्य तत्त्व स्पष्ट रूप से जान लिया है - हे महात्मा, जिसमें सुखों से विरक्ति इस समस्त दिखने वाले संसार को भोगने से पहले ही उत्पन्न हो गई थी।

2.1.38

तव बाल महावीर मतिर्विरतिमागता । भोगेभ्यो दीर्घरोगेभ्यः किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥ ३८ ॥

tava bāla mahāvīra matirviratimāgatā | bhogebhyo dīrgharogebhyaḥ kimanyacchrotumicchasi || 38 ||

Child, great hero, your mind has already turned away from pleasures - pleasures that are like long, chronic diseases. What more do you want to hear?

हे बालक, हे महावीर, तुम्हारा मन उन सुखों से विरक्त हो चुका है, जो लंबी बीमारियों जैसे हैं। अब तुम्हें और क्या सुनना है?

2.1.39

न तथा पूर्णता जाता सर्वज्ञानमहानिधेः । तिष्ठतस्तपसि स्फारे पितुस्तव यथा तव ॥ ३९ ॥

na tathā pūrṇatā jātā sarvajñānamahānidheḥ | tiṣṭhatastapasi sphāre pitustava yathā tava || 39 ||

Even your father, that great treasure-house of all knowledge, did not attain such completeness through all his vast austerity, as you have attained.

तुम्हारे पिता, जो समस्त ज्ञान के महान भंडार हैं, अपनी विशाल तपस्या में रहते हुए भी उतनी पूर्णता को नहीं पा सके, जितनी तुमने पाई है।

2.1.40

व्यासादधिक एवाहं व्यासशिष्योऽसि तत्सुतः । भोगेच्छातानवेनेह मत्तोऽप्यत्यधिको भवान् ॥ ४० ॥

vyāsādadhika evāhaṁ vyāsaśiṣyo'si tatsutaḥ | bhogecchātānaveneha mattopi'tyadhiko bhavān || 40 ||

In this respect I surpass even Vyasa; you are Vyasa's disciple and also his son. But when it comes to the thinning away of desire for pleasures, you surpass even me.

इस बात में मैं व्यास से भी बढ़कर हूँ; तुम व्यास के शिष्य भी हो और पुत्र भी। परंतु सुखों की इच्छा को क्षीण करने के मामले में तुम मुझसे भी आगे हो।

2.1.41

प्राप्तं प्राप्तव्यमखिलं भवता पूर्णचेतसा । न दृश्ये पतसि ब्रह्मन्मुक्तस्त्वं भ्रान्तिमुत्सृज ॥ ४१ ॥

prāptaṁ prāptavyamakhilaṁ bhavatā pūrṇacetasā | na dṛṣye patasi brahmanmuktastvaṁ bhrāntimutsṛja || 41 ||

You, whose mind is now complete, have attained everything there was to attain. Brahmin, you do not fall back into the visible world. You are already free - give up your confusion.

हे ब्राह्मण, तुम्हारा मन अब पूर्ण हो चुका है, और जो कुछ पाने योग्य था, वह सब तुमने पा लिया है। तुम इस दिखने वाले संसार में फिर नहीं गिरते। तुम पहले से ही मुक्त हो - अपना भ्रम छोड़ दो।

2.1.42

अनुशिष्टः स इत्येवं जनकेन महात्मना । अतिष्ठत्स शुकस्तूष्णीं स्वच्छे परमवस्तुनि ॥ ४२ ॥

anuśiṣṭaḥ sa ityevaṁ janakena mahātmanā | atiṣṭhats sa śukastūṣṇīm svacche paramavastuni || 42 ||

Instructed in this way by the great-souled Janaka, Shuka fell silent, resting in the clear, supreme reality.

महात्मा जनक द्वारा इस प्रकार समझाए जाने पर, शुक मौन हो गया, उस निर्मल परम तत्त्व में स्थित होकर।

2.1.43

वीतशोकभयायासो निरीहश्छिन्नसंशयः । जगाम शिखरं मेरोः समाध्यर्थमनिन्दितम् ॥ ४३ ॥

vītaśokabhayāyāso nirīhaśchinnasaṁśayaḥ | jagāma śikharaṁ meror samādhyaṛthamaninditam || 43 ||

Free from sorrow, fear, and weariness, wanting nothing, all his doubts cut away, he went to that flawless peak of Mount Meru to enter deep meditation.

शोक, भय और थकान से मुक्त, कोई इच्छा न रखते हुए, अपने सारे संशय काट कर, वह समाधि के लिए मेरु पर्वत की उस निर्दोष चोटी पर गया।

2.1.44

तत्र वर्षसहस्राणि निर्विकल्पसमाधिना । दश स्थित्वा शशामासावात्मन्यस्नेहदीपवत् ॥ ४४ ॥

tatra varṣasahasrāṇi nirvikalpasamādhinā | daśa sthitvā śaśāmāsāvātmanyasnehadīpavat || 44 ||

There he remained for ten thousand years in thought-free absorption, and then, within himself, he went quiet - like a lamp that has run out of oil.

वहाँ वह दस हजार वर्षों तक निर्विकल्प समाधि में स्थित रहा, और फिर अपने भीतर ही शांत हो गया - जैसे तेल चुक जाने पर दीपक बुझ जाता है।

2.1.45

व्यपगतकलनाकलङ्कशुद्धः स्वयममलात्मनि पावने पदेऽसौ । सलिलकण इवाम्बुधौ महात्मा विगलितवासनमेकतां जगाम ॥ ४५ ॥

*vyapagatakalanākalaṅkaśuddhaḥ svayamamalātmani pāvane pade'sau | salilakaṇa ivāmbudhau mahātmā
vigalitavāsanamekatām jagāma || 45 ||*

Every last trace of mental movement now gone, that great soul, all his inner tendencies dissolved, merged of his own accord into the one, spotless, sacred state - like a drop of water merging into the ocean.

मन की हलचल का आखिरी निशान भी मिट जाने पर, वह महात्मा अपने भीतर की सारी वासनाएँ गला कर, अपने आप ही उस निर्मल, पवित्र परम अवस्था में लीन हो गया - जैसे पानी की एक बूँद समुद्र में मिल जाती है।

Chapter 2

2.2.1

विश्वामित्र उवाच । तस्य व्यासतनूजस्य मलमात्रोपमार्जनम् । यथोपयुक्तं ते राम तावदेवोपयुज्यते ॥ १ ॥

viśvāmitra uvāca | tasya vyāsatanūjasya malamātropamārjanam | yathopayuktaṁ te rāma tāvadevopayujyate || 1 ||

Vishvamisra said: Rama, just as for Vyasa's son only a small wiping away of a trace of impurity was needed, exactly that much, and no more, is needed for you too.

विश्वामित्र ने कहा: हे राम, जैसे व्यास के पुत्र के लिए केवल एक हल्के से मैल को पोंछने भर की ज़रूरत थी, ठीक उतना ही, उससे अधिक नहीं, तुम्हारे लिए भी काम आएगा।

2.2.2

ज्ञेयमेतेन विज्ञातमशेषेण मुनीश्वराः । स्वदन्तेऽस्मै न यद्भोगा रोगा इव सुमेधसे ॥ २ ॥

jñeyametena vijñātamaśeṣeṇa munīśvarāḥ | svadante'smai na yadbhogā rogā iva sumedhase || 2 ||

Masters among sages, he has fully known everything there was to know - which is why pleasures no longer taste sweet to that wise man, any more than sicknesses do.

हे मुनिश्रेष्ठो, उसने जानने योग्य को पूरी तरह जान लिया है - इसीलिए उस बुद्धिमान को सुख अब मीठे नहीं लगते, जैसे रोग किसी को मीठे नहीं लगते।

2.2.3

ज्ञातज्ञेयस्य मनसो नूनमेतद्धि लक्षणम् । न स्वदन्ते समग्राणि भोगवृन्दानि यत्पुनः ॥ ३ ॥

jñātajñeyasya manaso nūnametaddhi lakṣaṇam | na svadante samagrāṇi bhogavṛndāni yatpunaḥ || 3 ||

This surely is the sign of a mind that has known what is to be known: that no heap of pleasures, however great, ever tastes sweet to it again.

यही उस मन का लक्षण है जिसने जानने योग्य को जान लिया है: कि सुखों का कोई भी ढेर उसे फिर कभी मीठा नहीं लगता।

2.2.4

भोगभावनया याति बन्धो दार्ढ्यमवस्तुजः । तयोपशान्तया याति बन्धो जगति तानवम् ॥ ४ ॥

bhogabhāvanayā yāti bandho dārdhyamavastujaḥ | tayopāśāntayā yāti bandho jagati tānavam || 4 ||

Through the habit of dwelling on pleasure, bondage - which is not even a real thing - grows firm. And when that habit dies down, bondage in this world grows thin.

सुख में मन रमाने की आदत से बंधन, जो असल में कोई सच्ची चीज़ नहीं है, दृढ़ होता जाता है। और जब वह आदत शांत हो जाती है, तो संसार में यह बंधन कमज़ोर पड़ जाता है।

2.2.5

वासनातानवं राम मोक्ष इत्युच्यते बुधैः । पदार्थवासनादार्ढ्यं बन्ध इत्यभिधीयते ॥ ५ ॥

vāsanātānavam rāma mokṣa ityucyate budhaiḥ | padārthavāsanādārdhyam bandha ityabhidhīyate || 5 ||

Rama, the wise call it liberation when the inner impressions grow thin, and they call it bondage when the attachment to things grows firm.

हे राम, जब मन की वासनाएँ पतली पड़ जाती हैं, उसे ज्ञानी लोग मोक्ष कहते हैं; और जब वस्तुओं के प्रति वासना दृढ़ हो जाती है, उसे बंधन कहा जाता है।

2.2.6

स्वात्मतत्त्वाभिगमनं भवति प्रायशो नृणाम् । मुने विषयवैरस्यं कदर्यादुपजायते ॥ ६ ॥

svātmatattvābhigamanam bhavati prāyaśo nṛṇām | mune viṣayavairasyam kadarthādūpajāyate || 6 ||

Sage, people generally come to know the truth of their own self only after some incident makes them lose their taste for the objects of the senses.

हे मुने, लोग सामान्यतः अपने आत्मतत्त्व को तभी जान पाते हैं जब किसी घटना के कारण उनके मन से विषयों का स्वाद उतर जाता है।

2.2.7

सम्यक्पश्यति यस्तज्ज्ञो ज्ञातज्ञेयः स पण्डितः । न स्वदन्ते बलादेव तस्मै भोगा महात्मने ॥ ७ ॥

samyakpaśyati yastajjñō jñātajñeyaḥ sa paṇḍitaḥ | na svadante balādeva tasmai bhogā mahātmane || 7 ||

He who sees clearly, who knows that truth, who has known what is to be known - he alone is truly wise. For that great soul, pleasures simply stop tasting sweet, on their own, without any effort.

जो सही ढंग से देखता है, जो उस सत्य को जानता है, जिसने जानने योग्य को जान लिया है - वही सच्चा पंडित है। उस महात्मा के लिए सुख अपने आप ही, बिना किसी प्रयास के, मीठे लगने बंद हो जाते हैं।

2.2.8

यशःप्रभृतिना यस्मै हेतुनैव विना पुनः । भुवि भोगा न रोचन्ते स जीवन्मुक्त उच्यते ॥ ८ ॥

yaśaḥprabhṛtinā yasmai hetunaiva vinā punaḥ | bhuvi bhogā na rocante sa jīvanmukta ucyate || 8 ||

One to whom pleasures on this earth no longer appeal, without any motive at all - not even fame or anything like it - such a person is called liberated while still alive.

जिसे धरती के सुख अब अच्छे नहीं लगते, बिना किसी भी वजह के - न यश के लिए, न किसी और कारण से - उसे ही जीते-जी मुक्त पुरुष कहा जाता है।

2.2.9

ज्ञेयं यावन्न विज्ञातं तावत्तावन्न जायते । विषयेष्वरतिर्जन्तोर्मरुभूमौ लता यथा ॥ ९ ॥

jñeyaṁ yāvanna vijñātaṁ tāvattāvanna jāyate | viṣayeṣvaratirjantormarubhūmau latā yathā || 9 ||

As long as what is to be known remains unknown, a person's distaste for the senses' objects does not arise - no more than a vine grows in a desert.

जब तक जानने योग्य तत्त्व नहीं जाना जाता, तब तक प्राणी के मन में विषयों से विरक्ति पैदा नहीं होती - ठीक जैसे रेगिस्तान में कोई बेल नहीं उगती।

2.2.10

अतएव हि विज्ञातज्ञेयं विद्धि रघूद्वहम् । यदेनं रञ्जयन्त्येता न रम्या भोगभूमयः ॥ १० ॥

ataeva hi vijñātajñeyaṁ viddhi raghūdvaḥam | yadenam rañjayantyetā na ramyā bhogabhūmayāḥ || 10 ||

For this very reason, know that Rama, the pride of the Raghu line, has already known what is to be known - because these lovely realms of pleasure no longer delight him.

इसीलिए जानो कि रघुकुल के गौरव राम ने जानने योग्य तत्त्व को जान लिया है - क्योंकि ये सुंदर भोग-भूमियाँ अब उसे आकर्षित नहीं करतीं।

2.2.11

रामो यदन्तर्जानाति तद्वस्त्वित्येव सन्मुखात् । आकर्ण्य चित्तविश्रान्तिमाप्नोत्येव मुनीश्वराः ॥ ११ ॥

rāmo yadantarjānāti tadvastvityeva sanmukhāt | ākarṇya cittaviśrāntimāpnōtyeva munīśvarāḥ || 11 ||

Masters of sages, what Rama already knows within himself as the real truth - once he hears it confirmed from a trustworthy mouth, his mind will surely find rest.

हे मुनिश्रेष्ठो, राम जो सत्य अपने भीतर पहले से जानता है, उसे किसी विश्वसनीय मुख से सुनकर ही उसके मन को सचमुच विश्राम मिलेगा।

2.2.12

केवलं केवलीभावविश्रान्तिं समपेक्षते । रामबुद्धिः शरल्लक्ष्मीः खलु विश्रमणं यथा ॥ १२ ॥

kevalam kevalībhāvaviśrāntiṁ samapekṣate | rāmabuddhiḥ śarallakṣmīḥ khalu viśramaṇam yathā || 12 ||

Rama's mind only needs to come to rest in that state of pure oneness - the way the beauty of the autumn sky needs nothing but stillness to become clear.

राम की बुद्धि को बस उस केवल-भाव की, पूर्ण एकत्व की, विश्रान्ति चाहिए - ठीक जैसे शरद ऋतु की सुंदरता को साफ होने के लिए केवल थोड़े ठहराव की ज़रूरत होती है।

2.2.13

अत्रास्य चित्तविश्रान्त्यै राघवस्य महात्मनः । युक्तिं कथयतु श्रीमान्वसिष्ठो भगवानयम् ॥ १३ ॥

atrāsya cittaviśrāntyai rāghavasya mahātmanah | yuktiṁ kathayatu śrīmānvasiṣṭho bhagavānayaṁ || 13 ||

So that the mind of the great-souled Raghava may find rest, let this glorious, venerable Vasishtha now explain the way to it.

इस महात्मा राघव के मन को विश्राम दिलाने के लिए, अब यह पूज्य भगवान वसिष्ठ इसकी विधि बताएँ।

2.2.14

रघूणामेष सर्वेषां प्रभुः कुलगुरुः सदा । सर्वज्ञः सर्वसाक्षी च त्रिकालामलदर्शनः ॥ १४ ॥

raghūṇāmeṣa sarveṣāṁ prabhuḥ kulaguruḥ sadā | sarvajñaḥ sarvasākṣī ca trikālamaladarśanaḥ || 14 ||

He is the lord and family teacher of the entire Raghu line, always; he knows everything, he witnesses everything, and his sight is clear across past, present, and future.

वे सदा से समस्त रघुवंशियों के स्वामी और कुलगुरु हैं; वे सब कुछ जानते हैं, सबके साक्षी हैं, और उनकी नज़र भूत, वर्तमान, भविष्य - तीनों समय में एक जैसी साफ़ रहती है।

2.2.15

वसिष्ठ भगवन्पूर्वं कञ्चित्स्मरसि यत्स्वयम् । आवयोर्वैरशान्त्यर्थं श्रेयसे च महाधियाम् ॥ १५ ॥

vasiṣṭha bhagavanpūrvam kacchitsmarasi yatsvayam | āvayorvairasāntyartham śreyase ca mahādhiyām || 15 ||

Vasishtha, venerable one, do you remember what you yourself once did, in order to end the old enmity between the two of us, and for the good of great minds?

हे वसिष्ठ भगवन, क्या तुम्हें याद है कि तुमने स्वयं पहले क्या किया था - हम दोनों के बीच के वैर को शांत करने के लिए, और महान बुद्धि वालों के भले के लिए?

2.2.16

निषधाद्रेर्मुनीनां च सानौ सरलसंकुले । उपदिष्टं भगवता ज्ञानं पद्मभुवा बहु ॥ १६ ॥

niṣadhādrer munīnāṃ ca sānau saralasamkule | upadiṣṭaṃ bhagavatā jñānaṃ padmabhuvā bahu || 16 ||

On a ridge of Mount Nishadha, thick with pine trees and full of sages, the blessed one born from the lotus, Brahma, once taught a great deal of knowledge.

निषध पर्वत की उस चोटी पर, जो चीड़ के वृक्षों से घिरी थी और मुनियों से भरी थी, कमल से उत्पन्न भगवान ब्रह्मा ने बहुत सा ज्ञान दिया था।

2.2.17

येन युक्तिमता ब्रह्मज्ञानेनेयं हि वासना । सांसारी नूनमायाति शमं श्यामेव भास्वता ॥ १७ ॥

yena yuktimatā brahmajñānane yaṃ hi vāsana | sāṃsārī nūnamāyāti śamaṃ śyāmeva bhāsvatā || 17 ||

Brahmin, that reasoned knowledge by which this worldly craving truly comes to peace - the way darkness fades before the shining sun -

हे ब्राह्मण, वह तर्कसंगत ज्ञान, जिससे यह सांसारिक वासना निश्चय ही शांत हो जाती है, ठीक जैसे तेजस्वी सूर्य के आगे अंधकार शांत हो जाता है

-

2.2.18

तदेव युक्तिमज्ज्ञेयं रामायान्तेनिवासिने । ब्रह्मन्नुपदिशाशु त्वं येन विश्रान्तिमेष्यति ॥ १८ ॥

tadeva yuktimajjñeyaṃ rāmāyāntenivāsine | brahmannupadiśāśu tvam yena viśrāntim eṣyati || 18 ||

teach that very same reasoned truth to Rama, your own resident pupil. Brahmin, teach it to him quickly, so that he may find rest.

वही ज्ञान अपने शिष्य राम को दीजिए, हे ब्राह्मण, शीघ्र ही उपदेश दीजिए, जिससे उसे विश्राम प्राप्त हो।

2.2.19

कदर्थना च नैवैषा रामो हि गतकल्पषः । निर्मले मुकुरे वक्त्रमयत्नेनैव बिम्बति ॥ १९ ॥

kadarthana ca naiva eṣā rāmo hi gatakalpaṣaḥ | nirmale mukure vaktram ayatnen aiva bimbatī || 19 ||

And this is no exaggeration - Rama's faults are already gone, so the truth will appear in him as effortlessly as a face appears reflected in a clean mirror.

और यह कोई बड़ा-चढ़ा कर कहना नहीं है - राम के सारे दोष तो पहले ही मिट चुके हैं, इसलिए सत्य उसमें उतनी ही सहजता से झलक उठेगा जितनी सहजता से एक साफ़ दर्पण में चेहरा झलकता है।

2.2.20

तज्ज्ञानं स च शास्त्रार्थस्त्वद्वैदगध्यमनिन्दितम् । सच्छिष्याय विरक्ताय साधो यदुपदिश्यते ॥ २० ॥

tajjñānaṃ sa ca śāstrārthas tvadvaidagdyamaninditam | sacchiṣyāya viraktāya sādho yadupadiśyate || 20 ||

That knowledge, and that meaning of the scriptures, truly shows your faultless skill, good sir, when it is taught to a genuine, dispassionate pupil.

हे साधो, वह ज्ञान और शास्त्रों का वह अर्थ तभी तुम्हारी निर्दोष कुशलता कहलाएगा, जब वह किसी सच्चे, विरक्त शिष्य को सिखाया जाए।

2.2.21

अशिष्यायाविरक्ताय यत्किंचिदुपदिश्यते । तत्प्रयात्यपवित्रत्वं गोक्षीरं श्वदृताविव ॥ २१ ॥

aśiṣyāyāvīraktāya yatkiṁcidupadiśyate | tatprayātyapavitratvaṁ gokṣīraṁ śvadṛtāviva || 21 ||

Whatever is taught to someone who is not a real pupil and not free from desire turns impure - like cow's milk poured into a bag made of dog hide.

जो कुछ भी किसी ऐसे व्यक्ति को सिखाया जाए जो न सच्चा शिष्य हो, न विरक्त हो, वह अपवित्र हो जाता है - जैसे गाय का दूध कुत्ते की खाल के थैले में डालने पर अशुद्ध हो जाता है।

2.2.22

वीतरागभयक्रोधा निर्माणा गलितैनसः । वदन्ति त्वादृशा यत्र तत्र विश्राम्यतीह धीः ॥ २२ ॥

vītarāgabhayakrodhā nirmāṇā galitainasaḥ | vadanti tvāḍṛśā yatra tatra viśramyatiha dhīḥ || 22 ||

Wherever people like you speak - free from desire, fear, and anger, free from pride, all their faults dissolved away - there the mind comes to rest in this world.

जहाँ कहीं भी तुम्हारे जैसे लोग बोलते हैं - जो राग, भय और क्रोध से मुक्त हैं, जिनमें अहंकार नहीं है, जिनके सारे दोष मिट चुके हैं - वहीं इस संसार में बुद्धि को विश्राम मिलता है।

2.2.23

इत्युक्ते गाधिपुत्रेण व्यासनारदपूर्वकाः । मुनयस्ते तमेवार्थं साधुसाध्वित्यपूजयन् ॥ २३ ॥

ityukte gādhiputrena vyāsanāradapūrvakāḥ | munayaste tamevārthaṁ sādhusādhvityapūjayan || 23 ||

When the son of Gadhi had said this, the sages there, led by Vyasa and Narada, honored his words, saying, 'Well said, well said!'

गाधि के पुत्र विश्वामित्र के यह कहने पर, वहाँ बैठे व्यास और नारद जैसे मुनियों ने उनकी इस बात का सम्मान करते हुए कहा, 'बहुत अच्छा कहा, बहुत अच्छा!'

2.2.24

अथोवाच महातेजा राज्ञः पार्श्वे व्यवस्थितः । ब्रह्मेव ब्रह्मणः पुत्रो वसिष्ठो भगवान्मुनिः ॥ २४ ॥

athovāca mahātejā rājñāḥ pārsve vyavasthitaḥ | brahmaiva brahmaṇaḥ putro vasiṣṭho bhagavānmuniḥ || 24 ||

Then, seated beside the king, the radiant sage Vasishtha - the venerable one, Brahma's own son, wise as Brahma himself - began to speak.

तब राजा के पास बैठे अत्यंत तेजस्वी मुनि वसिष्ठ - जो भगवान् ब्रह्मा के पुत्र हैं और स्वयं ब्रह्मा के समान हैं - बोलने लगे।

2.2.25

श्रीवसिष्ठ उवाच । मुने यदादिशसि मे तदविघ्नं करोम्यहम् । कः समर्थः समर्थोऽपि सतां लङ्घयितुं वचः ॥ २५ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | mune yadādiśasi me tadaviḥṇaṁ karomyaham | kaḥ samarthaḥ samartho'pi satāṁ laṅghayituṁ vacaḥ || 25 ||

Vasishtha said: Sage, whatever you tell me to do, I will do without any hesitation. Who, however capable, is really able to disregard the word of the good?

श्रीवसिष्ठ ने कहा: हे मुने, आप जो भी आदेश देंगे, मैं उसे बिना किसी रुकावट के पूरा करूँगा। सज्जनों की बात को कौन टाल सकता है, चाहे वह कितना ही समर्थ क्यों न हो?

2.2.26

अहं हि राजपुत्राणां रामादीनां मनस्तमः । ज्ञानेनापनयाम्याशु दीपेनेव निशातमः ॥ २६ ॥

ahaṃ hi rājaputrāṇāṃ rāmādināṃ manastamaḥ | jñānenāpanayāmyāśu dīpeneva niśātamaḥ || 26 ||

I will quickly clear away the darkness in the minds of the princes, Rama and the rest, with knowledge - just as a lamp clears away the darkness of night.

मैं राम आदि राजकुमारों के मन के अंधकार को ज्ञान से शीघ्र दूर कर दूँगा - जैसे दीपक रात के अंधकार को दूर कर देता है।

2.2.27

स्मराम्यखण्डितं सर्वं संसारभ्रमशान्तये । निषधाद्रौ पुरा प्रोक्तं यज्ज्ञानं पद्मजन्मना ॥ २७ ॥

smarāmyakhṇḍitaṃ sarva saṃsārabhramaśāntaye | niṣadhādrau purā proktaṃ yajjñānaṃ padmajanmanā || 27 ||

I remember in full - to calm the confusion of worldly life - all the knowledge that the lotus-born Brahma once taught on Mount Nishadha.

संसार के भ्रम को शांत करने के लिए, निषध पर्वत पर पहले कमल से उत्पन्न ब्रह्मा जी ने जो ज्ञान दिया था, वह सब मुझे पूरी तरह याद है।

2.2.28

वाल्मीकिरुवाच । इति निगदितवानसौ महात्मा परिकरबन्धगृहीतवक्तृतेजाः । अकथयदिदमज्ञतोपशान्त्यै परमपदैकविबोधनं वसिष्ठः ॥ २८ ॥

vālmīkiruvāca | iti nigaditavānasau mahātmā parikarabandhagr̥hītavakṛtejāḥ | akathayadidamajñatopāśāntyai paramapadaikavibodhanaṃ vasiṣṭhaḥ || 28 ||

Valmiki said: Having spoken thus, that great soul Vasishta, gathering up his full power of speech as one girds up to begin a great task, went on to teach this - the one true awakening to the highest state - so as to quiet their ignorance.

वाल्मीकि ने कहा: यह कहकर, वह महात्मा वसिष्ठ, अपनी वाणी की पूरी शक्ति को ऐसे समेट कर मानो किसी बड़े काम के लिए कमर कस रहे हों, अज्ञान को शांत करने के लिए वह उपदेश देने लगे, जो परम पद के एकमात्र जागरण का मार्ग है।

Chapter 3

2.3.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । पूर्वमुक्तं भगवता यज्ज्ञानं पद्मजन्मना । सर्गादौ लोकशान्त्यर्थं तदिदं कथयाम्यहम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | pūrvamuktam bhagavatā yajñānam padmajanmanā | sargādau lokaśāntyartham tadidaṁ kathayāmyaham || 1 ||

Vasishtha said: I am now telling you the same knowledge that the lord born from the lotus, Brahma, spoke earlier, at the start of creation, for the peace of the world.

वसिष्ठ जी ने कहा: सृष्टि के आरंभ में संसार की शांति के लिए कमल से जन्मे भगवान् ब्रह्मा ने जो ज्ञान पहले बताया था, वही ज्ञान अब मैं तुम्हें बता रहा हूँ।

2.3.2

श्रीराम उवाच । कथयिष्यसि विस्तीर्णा भगवन्मोक्षसंहिताम् । इमं तावत्क्षणं जातं संशयं मे निवारय ॥ २ ॥

śrīrāma uvāca | kathayiṣyasi vistīrṇā bhagavānmokṣasāṁhitām | imaṁ tāvatkṣaṇam jātaṁ saṁśayaṁ me nivāraya || 2 ||

Rama said: Lord, you will tell me the vast compendium of liberation in full. But first remove this doubt that has just now arisen in me.

श्रीराम ने कहा: हे भगवन, आप मुझे विस्तार से मोक्ष का यह पूरा ग्रंथ सुनाएंगे। पर पहले मेरे मन में अभी-अभी उठी इस शंका को दूर कीजिए।

2.3.3

पिता शुकस्य सर्वज्ञो गुरुर्व्यासो महामतिः । विदेहमुक्तो न कथं कथं मुक्तः सुतोऽस्य सः ॥ ३ ॥

pitā śukasya sarvajña gururvyāso mahāmatih | videhamukto na katham katham muktaḥ suto'sya saḥ || 3 ||

Shuka's father, the all-knowing teacher Vyasa, is a man of great wisdom -- why then is he not freed from the body? And how is his son freed?

शुक के पिता, सर्वज्ञ गुरु व्यास, महान बुद्धि वाले हैं -- फिर वे देह से मुक्त क्यों नहीं हुए? और उनका पुत्र किस तरह मुक्त हुआ?

2.3.4

श्रीवसिष्ठ उवाच । परमार्कप्रकाशान्तस्त्रिजगत्तसरेणवः । उत्पत्योत्पत्य लीना ये न संख्यामुपयान्ति ते ॥ ४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | paramārkaprakāśāntastrijagatttrasareṇavaḥ | utpatyotpatya līnā ye na saṁkhyāmupayānti te || 4 ||

Vasishtha said: Within the light of that supreme sun, the three worlds are like specks of dust -- rising up and dissolving, again and again, too many to be counted.

वसिष्ठ जी ने कहा: उस परम सूर्य के प्रकाश में तीनों लोक धूल के कणों के समान हैं -- वे बार-बार उठते हैं और मिट जाते हैं, इतने कि उनकी गिनती नहीं हो सकती।

2.3.5

वर्तमानाश्च याः सन्ति त्रैलोक्यगणकोटयः । शक्यन्ते ताश्च संख्यातुं नैव काश्चन केनचित् ॥ ५ ॥

vartamānāśca yāḥ santi trailokyagaṇakoṭayaḥ | śakyante tāśca saṁkhyātuṁ naiva kāścana kenacit || 5 ||

And even the countless three-worlds that exist right now -- no one at all can count them.

और अभी जो असंख्य त्रिलोक इस समय विद्यमान हैं, उन्हें भी कोई नहीं गिन सकता।

2.3.6

भविष्यन्ति पराम्भोधौ जन्तुसर्गतरङ्गकाः । तांश्च वै परिसंख्यातुं सा कथैव न विद्यते ॥ ६ ॥

bhaviṣyanti parāmbhodhau jantasargatarāṅgakāḥ | tāṁśca vai parisamkhyātum sā kathaiva na vidyate || 6 ||

In the great ocean of existence, more waves of creation -- of living beings still to come -- will rise; and there is no way at all to count them either.

उस महान सागर में जीवों की सृष्टि की और भी लहरें आगे उठेंगी; और उन्हें भी पूरी तरह गिनने का कोई उपाय नहीं है।

2.3.7

श्रीराम उवाच । या भूता या भविष्यन्त्यो जगत्सर्गपरम्पराः । तासां विचारणा युक्ता वर्तमानास्तु का इव ॥ ७ ॥

śrīrāma uvāca | yā bhūtā yā bhaviṣyantyo jagatsargaparamparāḥ | tāsāṁ vicāraṇā yuktā vartamānāstu kā iva || 7 ||

Rama said: It is right to reflect on the chains of world-creation that have already happened and that are yet to come. But what about the ones happening right now?

श्रीराम ने कहा: जो सृष्टियाँ बीत चुकी हैं और जो आगे होंगी, उन पर विचार करना तो ठीक है। पर जो अभी वर्तमान में हो रही हैं, उनके बारे में क्या कहें?

2.3.8

श्रीवसिष्ठ उवाच । तिर्यक्पुरुषदेवादेर्यो नाम स विनश्यति । यस्मिन्नेव प्रदेशेऽसौ तदैवेदं प्रपश्यति ॥ ८ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | tiryakpuruṣadevāderyo nāma sa vinaśyati | yasminneva pradeśe'sau tadaiveidaṁ prapaśyati || 8 ||

Vasishtha said: Whatever creature -- animal, man, or god -- dies, right there, in that very place, he at once sees a new world appear.

वसिष्ठ जी ने कहा: चाहे वह पशु हो, मनुष्य हो या देवता, जो भी नाम-रूप वाला प्राणी मरता है, वह उसी क्षण, उसी स्थान पर, एक नया संसार देखने लगता है।

2.3.9

आतिवाहिकनाम्नान्तः स्वहृद्येव जगत्त्रयम् । व्योम्नि चित्तशरीरेण व्योमात्मानुभवत्यजः ॥ ९ ॥

ātivāhikanāmnāntaḥ svahṛdyeva jagattrayam | vyomni cittaśarīreṇa vyomātmānubhavatyajaḥ || 9 ||

With the subtle body called the 'ativahika,' the unborn self experiences the three worlds right within his own heart; there, in that inner space, with a body made of mind, he experiences himself as that very space.

'अतिवाहिक' नाम की सूक्ष्म देह के सहारे, वह अजन्मा आत्मा अपने ही हृदय के भीतर तीनों लोकों का अनुभव करता है; उस चित्त-रूपी शरीर के साथ, उस भीतरी आकाश में, वह स्वयं को आकाश जैसा ही अनुभव करता है।

2.3.10

एवं मृता म्रियन्ते च मरिष्यन्ति च कोटयः । भूतानां यां जगन्त्याशामुदितानि पृथक्पृथक् ॥ १० ॥

evam mṛtā mriyante ca marīṣyanti ca koṭayaḥ | bhūtānāṁ yāṁ jagantyaśāmaditāni prṥhakprṥhak || 10 ||

In this way, crores of beings have died, are dying, and will die -- and for each of them, separately, a whole world rises up out of their own desire.

इस प्रकार करोड़ों प्राणी मर चुके हैं, मर रहे हैं और आगे मरेंगे -- और हर एक के लिए अलग-अलग, उसकी अपनी आशा-कामना से एक नया संसार उठ खड़ा होता है।

2.3.11

संकल्पनिर्माणमिव मनोराज्यविलासवत् । इन्द्रजालामाल इव कथार्थप्रतिभासवत् ॥ ११ ॥

saṅkalpanirmāṇamiva manorājyavilāsavat | indrajālāmāla iva kathārthapratibhāsavat || 11 ||

It is like something built by mere imagination, like the play of a daydream, like a web of magic tricks, like the picture that appears in the mind when a story is told.

यह मात्र कल्पना से बनी हुई किसी चीज़ जैसा है, जैसे मन में बुना गया एक सपनों का संसार, जैसे इंद्रजाल का माया-जाल, जैसे किसी कहानी को सुनते समय मन में उभरने वाला दृश्य।

2.3.12

दुर्वातभूकम्प इव त्रस्तबालपिशाचवत् । मुक्तालीवामले व्योम्नि नौस्पन्दतरुयानवत् ॥ १२ ॥

durvātabhūkampa iva trastabālapīśācavat | muktālīvāmale vyomni nauspandataruyānavat || 12 ||

It is like a storm-wind and an earthquake, like a ghost that scares a child, like strings of pearls that a clouded eye sees in an empty sky, like trees on the shore that seem to move when seen from a rocking boat.

यह जैसे तूफानी हवा और भूकंप हो, जैसे बच्चे को डराने वाला कोई भूत हो, जैसे धुंधली आँख को खाली आकाश में मोतियों की माला दिखाई दे, जैसे हिलती नाव से देखने पर किनारे के पेड़ हिलते हुए दिखें।

2.3.13

स्वप्नसंवित्तिषुरवत्स्मृतिजातखपुष्पवत् । जगत्संसरणं स्वान्तर्मृतोऽनुभवति स्वयम् ॥ १३ ॥

svapnasamvittiṣuravatsmṛtijātakhapuṣpavat | jagatsamsaraṇaṁ svāntarmṛto'nuभवति svayam || 13 ||

Like a city that appears in a dream, like a flower grown in the sky that only memory can produce -- in just this way, the dead person, all by himself, experiences within himself the whole passing show of the world.

जैसे सपने में कोई नगर दिखाई दे, जैसे केवल स्मृति से आकाश में कोई फूल उग आए -- ठीक उसी तरह मरा हुआ प्राणी अपने भीतर ही, अकेले, इस पूरे संसार-चक्र का अनुभव करता है।

2.3.14

तत्रातिपरिणामेन तदेव घनतां गतम् । इहलोकोऽयमित्येव जीवाकाशे विजृम्भते ॥ १४ ॥

tatrātipariṇāmena tadeva ghanatāṁ gatam | ihaloko'yamityeva jīvākāśe vijṛmbhate || 14 ||

There, through this experience ripening further and further, it grows solid and dense -- until, within the space of his own awareness, it unfolds as: 'this, right here, is the world.'

वहाँ यह अनुभव धीरे-धीरे और गहरा होते-होते इतना घना हो जाता है कि जीव के अपने चित्त-आकाश में यह इस रूप में फैल जाता है कि यही तो यह संसार है।

2.3.15

पुनस्तत्रैव जग्रेद्वामरणाद्यनुभूतिमान् । परं लोकं कल्पयति मृतस्तत्र तथा पुनः ॥ १५ ॥

punastatraiva jagredvāmarṇādyanubhūtimān | paraṁ lokaṁ kalpayati mṛtastatra tathā punaḥ || 15 ||

Again, right there, after going through things like birth and death, he imagines another world; and there too, having died once more, it happens the same way again.

फिर वहीं जन्म-मृत्यु आदि का अनुभव करते हुए, वह एक और नया संसार गढ़ लेता है; और वहाँ भी मरने के बाद फिर उसी तरह यह क्रम चलता रहता है।

2.3.16

तदन्तरन्ये पुरुषास्तेवामन्तस्तथेतरे । संसार इति भान्तीमे कदलीदलपीठवत् ॥ १६ ॥

tadantaranye puruṣāstevāmantastathaitare | saṁsāra iti bhāntīme kadalīdalapīṭhavat || 16 ||

Inside that world there are other people, and inside them, in just the same way, still others -- all of this appearing as 'the world,' like the layer upon layer of a banana-tree's stem.

उस संसार के भीतर और लोग हैं, और उनके भीतर भी उसी तरह और लोग -- यह सब 'संसार' के रूप में वैसे ही दिखाई देता है जैसे केले के तने की परत-दर-परत परतें।

2.3.17

न पृथ्व्यादिमहाभूतगणा न च जगत्क्रमाः । मृतानां सन्ति तत्रापि तथाप्येषां जगद्भ्रमाः ॥ १७ ॥

na pṛmbyādīmahābhūtagaṇā na ca jagatkramāḥ | mṛtānāṁ santi tatrāpi tathāpyeṣāṁ jagadbhamāḥ || 17 ||

For the dead, even there, none of the great elements -- earth and the rest -- nor the orderly working of a world truly exist; and yet a semblance of a world still appears to them.

मरे हुए प्राणियों के लिए वहाँ भी न तो पृथ्वी आदि पंच महाभूत होते हैं, न संसार का कोई क्रम -- फिर भी उन्हें संसार जैसा भ्रम बना रहता है।

2.3.18

अविद्यैव ह्यनन्तेयं नानाप्रसरशालिनी । जडानां सरिदादीर्घा तरत्सर्गतरङ्गिणी ॥ १८ ॥

avidyaiva hyananteyaṁ nānāprasaraśālīnī | jaḍānāṁ saridādīrghā taratsargatarāṅgiṇī || 18 ||

This ignorance alone is truly endless, branching out in countless directions; for those who are dull in understanding, it is a long river, its waves made of endless creation, that one must cross.

यह अविद्या ही सचमुच अनंत है, जो अनेक दिशाओं में फैली हुई है; जो लोग नासमझ हैं, उनके लिए यह एक लंबी नदी के समान है, जिसकी लहरें सृष्टि से बनी हैं और जिसे पार करना पड़ता है।

2.3.19

परमार्थाम्बुधौ स्फारे राम सर्गतरङ्गकाः । भूयोभूयोऽनुवर्तन्ते त एवान्ये च भूरिशः ॥ १९ ॥

paramārthāmbudhau sphāre rāma sargatarāṅgakāḥ | bhūyobhūyo'nuvartante ta evānye ca bhūriśaḥ || 19 ||

O Rama, in the vast ocean of ultimate reality, waves of creation continue to arise again and again -- the same ones, and many others too.

हे राम, परमार्थ के इस विशाल सागर में सृष्टि की लहरें बार-बार उठती रहती हैं -- वही लहरें भी, और बहुत सी नई लहरें भी।

2.3.20

सर्वतः सदृशाः केचित्कुलक्रममनोगुणैः । केचिदर्धेन सदृशाः केचिच्चातिविलक्षणाः ॥ २० ॥

sarvataḥ sadṛśāḥ kecitkulakramamanogūṇaiḥ | kecidardhena sadṛśāḥ keciccātilakṣaṇāḥ || 20 ||

Some are similar in every way -- in family lineage, order, mind, and qualities; some are similar by half; and some are entirely different.

उनमें से कुछ हर तरह से एक जैसी होती हैं -- कुल, क्रम, मन और गुणों में; कुछ आधी-आधी मिलती-जुलती हैं; और कुछ बिल्कुल अलग होती हैं।

2.3.21

इमं व्यासङ्ग तत्र द्वात्रिंशं संस्मराम्यहम् । यथासंभवविज्ञानदृशा संलक्ष्यमानया ॥ २१ ॥

imaṃ vyāsaṅga tatra dvātriṃśaṃ saṁsmaṛāmyaham | yathāsaṁbhavavijñānadṛśā saṁlaśyamānayā || 21 ||

I recall this -- the thirty-second such cycle in that context, as far as it can be known, seen with the eye of insight.

मुझे स्मरण है कि उस क्रम में यह बत्तीसवाँ अवसर है, जिसे मैं ज्ञान-दृष्टि से, जहाँ तक संभव हो, देख पाता हूँ।

2.3.22

द्वादशाल्पधियस्तत्र कुलाकारेहितैः समाः । दश सर्वे समाकाराः शिष्टाः कुलविलक्षणाः ॥ २२ ॥

dvādaśālpadhiyastatra kulākārehitaiḥ samāḥ | daśa sarve samākārāḥ śiṣṭāḥ kulavilakṣaṇāḥ || 22 ||

Of these, twelve are of limited intelligence, alike to their family in form and conduct; ten are all alike in form; and the rest are different from their family.

उनमें से बारह मंदबुद्धि हैं, जो रूप और स्वभाव में अपने कुल के समान हैं; दस सब रूप में एक समान हैं; और शेष अपने कुल से भिन्न हैं।

2.3.23

अद्यपयन्ये भविष्यन्ति व्यासवाल्मीकयस्तथा । भृग्वङ्गिरःपुलस्त्याश्च तथैवाप्यन्यथैव च ॥ २३ ॥

adyapayanye bhaviṣyanti vyāsavālmīkayastathā | bhṛgvaṅgiraḥpulastyāśca tathaiivāpyanyathaiva ca || 23 ||

Even now, and hereafter, there will be still more Vyasas and Valmikas, more sages like Bhṛigu, Angiras, and Pulastya -- some just the same, and some quite different.

अभी भी और आगे भी और व्यास और वाल्मीकि होते रहेंगे, वैसे ही भृगु, अंगिरा और पुलस्त्य जैसे ऋषि भी -- कुछ बिल्कुल वैसे ही, और कुछ बिल्कुल अलग।

2.3.24

नराः सुरर्षिदेवानां गणाः संभूय भूरिशः । उत्पद्यन्ते विलीयन्ते कदाचिच्च पृथक्पृथक् ॥ २४ ॥

narāḥ surarṣidevānāṁ gaṇāḥ saṁbhūya bhūriśaḥ | utpadyante vilīyante kadāciccha prthakprthak || 24 ||

Crowds of men, of sage-gods, and of gods themselves gather in great numbers and arise, then dissolve -- and sometimes each of them, alone, on its own.

मनुष्यों, देव-ऋषियों और देवताओं के समूह बड़ी संख्या में इकट्ठे होकर उत्पन्न होते हैं और फिर मिट जाते हैं -- और कभी-कभी अकेले-अकेले भी।

2.3.25

ब्राह्मी द्वासप्ततिस्त्रैता आसीदस्ति भविष्यति । स एवान्यश्च लोकाश्च त्वं चाहं चेति वेदयहम् ॥ २५ ॥

brāhmī dvāsaptatiḥ traitā āsīdasti bhaviṣyati | sa evānyaśca lokāśca tvam cāham ceti vedayaham || 25 ||

This cycle of seventy-two ages measured by Brahma has been, is, and will be, again and again -- the very same one, and other worlds, and you, and I too -- this is what I know.

ब्रह्मा के मान से यह बहत्तर युगों का चक्र पहले भी था, अभी भी है, और आगे भी रहेगा -- वही एक चक्र, और दूसरे संसार भी, और तुम भी, और मैं भी -- यही मैं जानता हूँ।

2.3.26

क्रमेणास्य मुनेरित्थं व्यासस्याद्भुतकर्मणः । संलक्ष्यतेऽवतारोऽयं दशमो दीर्घदर्शिनः ॥ २६ ॥

krameṇāsya muneritthaṃ vyāsasyādbhutakarmanah | saṃlakṣyate'vatāro'yaṃ daśamo dīrghadarśinah || 26 ||
In this way, one by one, this present appearance of the sage Vyasa -- a man of wondrous deeds and far-seeing vision -- is recognized as his tenth incarnation.

इस प्रकार क्रम से, अद्भुत कर्मों वाले और दूरदर्शी मुनि व्यास का यह वर्तमान अवतार, उनका दसवाँ अवतार माना जाता है।

2.3.27

अभूम व्यासवाल्मीकियुक्ता वयमनेकशः । अभूम वयमेवेमे बहुशश्च पृथक्पृथक् ॥ २७ ॥

abhūma vyāsavālmīkiyuktā vayamanekaśaḥ | abhūma vayameveme bahuśaśca prthakprthak || 27 ||
Many times we ourselves have been Vyasa and Valmiki both; many times, too, we have been these very people separately, each on his own.

कई बार हम स्वयं ही व्यास और वाल्मीकि दोनों रह चुके हैं; और कई बार हम ही अलग-अलग होकर यही व्यक्ति बन चुके हैं।

2.3.28

अभूम वयमेवेमे सदृशा इतरे विदः । अभूम वयमेवेमे नानाकारा समाशयाऽ ॥ २८ ॥

abhūm vayameveme sadṛśā itare vidāḥ | abhūm vayameveme nānākārā samāśayā' || 28 ||
We ourselves have been these very people, and also other knowing ones like them; we ourselves have been these people too, in many different forms, but always with the same nature within.
हम स्वयं ही ये लोग रहे हैं, और इनके जैसे अन्य ज्ञानी भी; हम स्वयं ही अनेक भिन्न रूपों में भी रहे हैं, पर भीतर से सदा एक जैसे स्वभाव के साथ।

2.3.29

भाव्यमद्याप्यनेनेह ननु वाराष्टकं पुनः । भूयोऽपि भारतं नाम सेतिहासं करिष्यति ॥ २९ ॥

bhāvyamadyāpyaneneha nanu vārāṣṭakaṃ punaḥ | bhūyo'pi bhārataṃ nāma setihāsaṃ kariṣyati || 29 ||
And even now, this same Vyasa is destined to appear eight more times, and each time he will again compose the epic called the Bharata, together with its history.
और अभी भी यही व्यास आठ बार और आएंगे, और हर बार वे फिर से महाभारत नाम का यह ग्रंथ, उसके इतिहास सहित, रचेंगे।

2.3.30

कृत्वा वेदविभागं च नीत्वानेन कुलप्रथाम् । ब्रह्मत्वं च तथा कृत्वा भाव्यं वैदेहमोक्षणम् ॥ ३० ॥

kṛtvā vedavibhāgaṃ ca nītvānena kulaprathām | brahmatvaṃ ca tathā kṛtvā bhāvyaṃ vaidehamokṣaṇam || 30 ||
After dividing the Vedas, after carrying on the family's tradition through this work, and after likewise attaining the rank of Brahma -- he is destined, in the end, to gain liberation free of the body.

वेदों का विभाजन करने के बाद, इस कार्य से अपने कुल की परंपरा आगे बढ़ाने के बाद, और उसी तरह ब्रह्मा का पद पाने के बाद -- अंत में उन्हें देह-रहित मुक्ति प्राप्त होनी तय है।

2.3.31

वीतशोकभयः शान्तनिर्वाणो गतकल्पनः । जीवन्मुक्तो जितमना व्यासोऽयमिति वर्णितः ॥ ३१ ॥

vītaśokabhayaḥ śāntanirvāṇo gatakalpanaḥ | jīvanmukto jitamanā vyāso'yamiti varṇitaḥ || 31 ||

Free from grief and fear, at perfect peace, all mental constructs gone, mind fully mastered -- this Vyasa is described as one who is liberated while still alive.

शोक और भय से मुक्त, पूर्ण शांति में स्थित, जिसकी सारी कल्पनाएं शांत हो चुकी हैं, जिसने अपने मन को पूरी तरह जीत लिया है -- इसी व्यास को जीवनमुक्त कहा गया है।

2.3.32

वित्तक्तधुवयःकर्मविद्याविज्ञानचेष्टितैः । समानि सन्ति भूतानि कदाचिन्नतु तानि तु ॥ ३२ ॥

vittaktadhuvaḥkarmavidyāvijñānaceṣṭitaiḥ | samāni santi bhūtāni kadācinnatu tāni tu || 32 ||

In wealth, family, age, deeds, learning, and understanding, beings are sometimes alike with one another, but even then they are not the very same beings.

धन, कुल, आयु, कर्म, विद्या और ज्ञान जैसी बातों में प्राणी कभी-कभी एक जैसे लग सकते हैं, पर इससे वे बिलकुल वही प्राणी नहीं बन जाते।

2.3.33

क्वचित्सर्गशतैस्तानि भवन्ति न भवन्ति वा । कदाचिदपि मायेयमित्थमन्तविवर्जिता ॥ ३३ ॥

kvacitsargaśataistāni bhavanti na bhavanti vā | kadācidapi māyeyamitthamantavivarjitā || 33 ||

Sometimes, after hundreds of creations have passed, the same beings appear again, and sometimes they do not; this is how this illusion goes on, without any end.

कभी सैकड़ों सृष्टियों के बाद वही प्राणी फिर आते हैं, और कभी नहीं आते; यह माया इसी तरह अंतहीन रूप से चलती रहती है।

2.3.34

यच्छतीयं विपर्यासं भूरिभूतपरम्परा । बीजराशिरिवाजस्रं पूर्यमाणः पुनःपुनः ॥ ३४ ॥

yacchatīyaṃ viparyāsaṃ bhūribhūtaparamparā | bījaraśirivājasraṃ pūryamāṇaḥ punaḥpunaḥ || 34 ||

This vast chain of beings keeps producing change, over and over, like a great heap of seeds that is filled up again and again, without a break.

प्राणियों की यह विशाल शृंखला बार-बार बदलाव लाती रहती है, जैसे बीजों का कोई विशाल ढेर हो, जो बार-बार, बिना रुके, फिर से भर जाता है।

2.3.35

तेनैव संनिवेशेन तथान्येन पुनःपुनः । सर्गाकाराः प्रवर्तन्ते तरङ्गाः कालवारिधेः ॥ ३५ ॥

tenaiva saṁniveśena tathānyena punaḥpunaḥ | sargākārāḥ pravartante taraṅgāḥ kālavāridheḥ || 35 ||

In the same pattern, and in different ones too, again and again, the shapes of creation keep appearing -- they are the waves of the ocean of time.

उसी ढंग से, और कभी दूसरे ढंग से भी, बार-बार सृष्टि के रूप उभरते रहते हैं -- ये सब समय के सागर की लहरें ही हैं।

आश्वस्तान्तःकरणः शान्तविकल्पः स्वरूपसारमयः । परमशमामृततृप्तस्तिष्ठति विद्वान्निरावरणः ॥ ३६ ॥

āśvastāntaḥkaraṇaḥ śāntavikalpaḥ svarūpasāramayaḥ | paramaśamāmṛtatṛptastiṣṭhati vidvānnirāvaraṇaḥ ||
36 ||

The one who knows this rests with a mind now at ease, all restless thoughts stilled, made whole in his own true nature, content with the nectar of supreme peace -- he remains free of every veil of ignorance.

जो यह जान लेता है, उसका मन शांत हो जाता है, सारे भटकते विचार थम जाते हैं, वह अपने सच्चे स्वरूप में स्थिर हो जाता है, परम शांति के अमृत से तृप्त होकर वह हर आवरण से मुक्त होकर स्थिर रहता है।

Chapter 4

2.4.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । सौम्याम्बुत्वे तरङ्गत्वे सलिलस्याम्बुता यथा । समैवाब्धौ तथाऽदेहसदेहमुनिमुक्तता ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | saumyāmbutve taraṅgatve salilasyāmbutā yathā | samaivābdhau tathā'dehasadehamunimuktatā || 1 ||

Vasishtha said: Just as water stays water whether it lies calm or rises as a wave, in the same way, in the vast ocean of truth, the freedom of a sage is the same whether he still has a body or has none. वसिष्ठ जी ने कहा: जैसे पानी चाहे शांत हो या लहर बनकर उठे, पानी तो पानी ही रहता है, वैसे ही उस विशाल सागर में किसी ऋषि की मुक्ति एक समान रहती है -- चाहे उसकी देह हो या न हो।

2.4.2

सदेहा वास्त्वदेहा वा मुक्तता विषये न च । अनास्वादितभोगस्य कुतो भोज्यानुभूतयः ॥ २ ॥

sadehā vāstvadēhā vā muktatā viṣaye na ca | anāsvāditabhogasya kuto bhojyānubhūtayah || 2 ||

Whether he has a body or not, liberation has nothing to do with sense-objects; for someone who has never truly tasted pleasure, how could there be any experience of things to enjoy? चाहे देह हो या न हो, मुक्ति का विषय-भोग से कोई लेना-देना नहीं है; जिसने भोग का असली स्वाद ही नहीं चखा, उसे भोगी हुई वस्तुओं का अनुभव कैसे हो सकता है?

2.4.3

जीवन्मुक्त मुनिश्रेष्ठ केवलं हि पदार्थवत् । पश्यामः पुरतो नास्य पुनर्विघ्नोऽन्तराशयम् ॥ ३ ॥

jīvanmukta munīśreṣṭhaṁ kevalaṁ hi padārthavat | paśyāmaḥ purato nāsyā punarvighno'ntarāśayam || 3 ||

We see this greatest of sages, who is free while still alive, simply as he is, like any ordinary object in the world; nothing can any longer stand in the way of what he wishes inside.

हम इस सर्वश्रेष्ठ मुनि को, जो जीते-जी मुक्त हो चुका है, बस एक साधारण वस्तु की तरह देखते हैं; उसकी भीतरी इच्छा के आगे अब कोई रुकावट नहीं है।

2.4.4

सदेहादेहमुक्तानां भेदः को बोधरूपिणाम् । यदेवाम्बुतरङ्गत्वे सौम्यत्वेऽपि तदेव तत् ॥ ४ ॥

sadehādehamuktānāṁ bhedaḥ ko bodharūpiṇām | yadevāmbutarāṅgatve saumyatve'pi tadeva tat || 4 ||

What real difference is there between the liberated who have a body and those who don't, since both are pure awareness itself? Whatever is true of water when it is a wave is exactly the same when the water is calm.

जो मुक्त हो चुके हैं, वे तो शुद्ध चेतना-स्वरूप हैं -- फिर चाहे उनकी देह हो या न हो, इसमें भेद ही क्या है? पानी लहर के रूप में जो है, वही शांत रूप में भी वही रहता है।

2.4.5

न मनागपि भेदोऽस्ति सदेहादेहमुक्तयोः । सस्पन्दोऽप्यथवाऽस्पन्दो वायुरेव यथानिलः ॥ ५ ॥

na manāgapi bhedo'sti sadehādehamuktayoh | saspaṇdo'pyathavā'spaṇdo vāyureva yathānīlāḥ || 5 ||

There isn't even the slightest difference between one liberated with a body and one liberated without it -- whether moving or still, wind is wind all the same.

देह सहित और देह रहित मुक्त पुरुष में रत्ती भर भी अंतर नहीं है -- चाहे वह चल रही हो या ठहरी हो, हवा तो हवा ही रहती है।

2.4.6

सदेहा वा विदेहा वा मुक्तता न प्रमास्पदम् । अस्माकमपि तस्यास्ति स्वैकतास्त्यविभागिनी ॥ ६ ॥

sadehā vā videhā vā muktatā na pramāspadam | asmākamapi tasyāsti svaikatāstyavibhāginī || 6 ||

Whether liberation comes with a body or without one is not something to be settled by ordinary proof; for us too, in that liberation, there is only an undivided oneness with our own true self. मुक्ति देह के साथ मिले या देह के बिना, यह किसी सामान्य तर्क-प्रमाण का विषय नहीं है; हमारे लिए भी उस मुक्ति में बस अपने असली स्वरूप के साथ एक अखंड एकता ही है।

2.4.7

तस्मात्प्रकृतमेवेदं शृणु श्रवणभूषणम् । मयोपदिश्यमानं त्वं ज्ञानमज्ञान्यनाशनम् ॥ ७ ॥

tasmātpṛakṛtamevedaṁ śṛṇu śravaṇabhūṣaṇam | mayopadiśyamānaṁ tvaṁ jñānamajñāndhyanāśanam || 7 ||

So listen now to this fitting subject at hand, an ornament for the ear -- this knowledge I am teaching you, which destroys the blindness of ignorance. इसलिए अब इसी उचित विषय को सुनो, जो कान का आभूषण है -- यह ज्ञान जो मैं तुम्हें सिखा रहा हूँ, अज्ञान के अंधेपन को नष्ट कर देता है।

2.4.8

सर्वमेवेह हि सदा संसारे रघुनन्दन । सम्यक्प्रयुक्तात्सर्वेण पौरुषात्समवाप्यते ॥ ८ ॥

sarvameveha hi sadā saṁsāre raghunandana | samyakprayuktātsarveṇa pauruṣātsamavāpyate || 8 ||

O Raghunandana, in this world everything, always, is achieved by effort -- by right action, when everyone applies it rightly. हे रघुनन्दन, इस संसार में हर चीज़, हमेशा, पुरुषार्थ यानी सही ढंग से किए गए प्रयत्न से ही प्राप्त होती है।

2.4.9

इह हीन्दोरिवोदेति शीतलाह्लादनं हृदि । परिस्पन्दफलप्राप्तौ पौरुषादेव नान्यतः ॥ ९ ॥

iha hīndorivodeti śītalāhlādanam hṛdi | parispaṇḍaphalaprāptau pauruṣādeva nānyataḥ || 9 ||

Here, when the fruit of one's own effort is won, a cool joy rises in the heart, like moonlight -- and it comes from that effort alone, from nothing else. यहाँ जब अपने प्रयत्न का फल मिलता है, तो हृदय में चांदनी जैसी ठंडी शीतलता और आनंद उठता है -- और यह केवल अपने प्रयत्न से ही मिलता है, किसी और चीज़ से नहीं।

2.4.10

पौरुषं स्पन्दफलवदृष्टं प्रत्यक्षतो नयत् । कल्पितं मोहितैर्मन्दैर्देवं किञ्चिन्न विद्यते ॥ १० ॥

pauruṣam spaṇḍaphalavaddṛṣṭaṁ pratyakṣato nayat | kalpitaṁ mohitairmandairdaivaṁ kiñcinna vidyate || 10 ||

Effort is clearly seen, right before our eyes, bearing real fruit through action, and it is effort that leads to results; 'fate' is just something dull and deluded people have imagined -- no such thing as fate exists at all. प्रयत्न को अपनी आँखों के सामने ही फल देते देखा जा सकता है, और यही परिणाम तक ले जाता है; 'भाग्य' तो बस मूर्ख और भ्रमित लोगों की कल्पना है -- भाग्य नाम की कोई चीज़ है ही नहीं।

2.4.11

साधूपदिष्टमार्गेण यन्मनोऽङ्गविचेष्टितम् । तत्पौरुषं तत्सफलमन्यदुन्मत्तचेष्टितम् ॥ ११ ॥

sādhūpadiṣṭamārgēṇa yanmanoṅgaviceṣṭitam | tatpauruṣam tatsaphalamanyadunmattaceṣṭitam || 11 ||

Whatever the mind and body do, when it follows the path taught by wise and good people -- that alone is real effort, and that alone bears fruit; anything else is just the behavior of a madman.

मन और शरीर जो भी काम भले और समझदार लोगों के बताए रास्ते पर चलकर करते हैं, वही असली पुरुषार्थ है, और वही फल देता है; बाकी सब तो पागलों जैसी हरकत है।

2.4.12

यो यमर्थं प्रार्थयते तदर्थं चेहते क्रमात् । अवश्यं स तमाप्नोति न चेदधर्मान्निवर्तते ॥ १२ ॥

yo yamarthaṁ prārthayate tadarthaṁ cehate kramāt | avaśyaṁ sa tamāpnoti na cedardhānnivartate || 12 ||

Whoever wants something, and keeps working toward it step by step, will certainly get it -- unless he gives up halfway.

जो व्यक्ति किसी चीज़ को चाहता है, और कदम-दर-कदम उसके लिए मेहनत करता रहता है, वह उसे ज़रूर पा लेता है -- बशर्ते वह आधे रास्ते में हार न माने।

2.4.13

पौरुषेण प्रयत्नेन त्रैलोक्यैश्वर्यसुन्दराम् । कश्चित्प्राणिविशेषो हि शक्रतां समुपागतः ॥ १३ ॥

pauruṣeṇa prayatnena trailokyaiśvaryasundarām | kaścitprāṇivīśeṣo hi śakratāṁ samupāgataḥ || 13 ||

By effort and hard work, some particular being once rose to become Indra himself, lord of the three worlds, splendid in that glory.

प्रयत्न और मेहनत से ही किसी विशेष प्राणी ने इंद्र का पद पाया, जो तीनों लोकों के ऐश्वर्य से सुशोभित है।

2.4.14

पौरुषेणैव यत्नेन सहसाम्भोरुहास्पदम् । कश्चिदेव चिदुल्लासो ब्रह्मतामधितिष्ठति ॥ १४ ॥

pauruṣeṇaiva yatnena sahasāmbhoruhāspadam | kaścideva cidullāso brahmatāmadhitiṣṭhati || 14 ||

By effort alone, some being -- a spark of pure awareness -- rose to the seat of the thousand-petaled lotus and took up the very rank of Brahma.

प्रयत्न से ही कोई एक चेतना की चमक हज़ार पंखुड़ियों वाले कमल के आसन तक पहुँचकर ब्रह्मा का पद प्राप्त कर लेती है।

2.4.15

सारेण पुरुषार्थेन स्वेनैव गरुडध्वजः । कश्चिदेव पुमानेव पुरुषोत्तमतां गतः ॥ १५ ॥

sāreṇa puruṣārtheṇa svenaiva garuḍadhvajah | kaścideva pumāneva puruṣottamatāṁ gataḥ || 15 ||

By his own true effort alone, some man became the one with Garuda on his banner -- he reached the rank of the highest of beings, Vishnu himself.

अपने ही सच्चे प्रयत्न से किसी मनुष्य ने गरुड़-ध्वज विष्णु का, यानी सबसे श्रेष्ठ पुरुष का पद पा लिया।

2.4.16

पौरुषेणैव यत्नेन ललनावलिताकृतिःशरीरी कश्चिदेवेह गतश्चन्द्रार्धचूडताम् ॥ १६ ॥

pauruṣeṇaiva yatnena lalanāvalitākṛtiḥśarīrī kaścideveha gataścandrārdhacūḍatām || 16 ||

By effort alone, some embodied being here, his form entwined with that of a woman, came to wear the crescent moon on his head -- he became Shiva.

प्रयत्न से ही किसी देहधारी ने, जिसका रूप एक स्त्री के साथ जुड़ा हुआ है, अपने मस्तक पर चंद्रमा की कला धारण करने वाले शिव का पद पा लिया।

2.4.17

प्राक्तनं चैहिकं चेति द्विविधं विद्धि पौरुषम्प्राक्तनोऽद्यतनेनाशु पुरुषार्थेन जीयते ॥ १७ ॥

prāktanam caihikam ceti dvividham viddhi pauruṣamprāktano'dyatanenāśu puruṣārthena jīyate || 17 ||

Know that effort is of two kinds -- the effort of past lives, and the effort made in this life. The effort of past lives is quickly overcome by the effort made right now.

जान लो कि पुरुषार्थ दो प्रकार का होता है -- एक पिछले जन्मों का, और दूसरा इसी जन्म का। पिछले जन्मों के पुरुषार्थ को इसी जन्म के पुरुषार्थ से जल्दी ही जीता जा सकता है।

2.4.18

यत्नवद्विद्वद्वाभ्यासैः प्रज्ञोत्साहसमन्वितैःमेरवोऽपि निगीर्यन्ते कैव प्राक्पौरुषे कथा ॥ १८ ॥

yatnavadbhirdṛḍhābhyāsaiḥ prajñotsāhasamanvitaiḥmeravo'pi nigīryante kaiva prākpauruṣe kathā || 18 ||

With real effort, steady practice, and both wisdom and enthusiasm, even mountains as huge as Meru can be swallowed whole -- so why even speak of overcoming the effort of a past life?

सच्चे प्रयत्न, दृढ़ अभ्यास, बुद्धि और उत्साह के साथ तो मेरु जैसे विशाल पर्वत भी निगले जा सकते हैं -- फिर पिछले जन्म के पुरुषार्थ को जीतने की तो बात ही क्या!

2.4.19

शास्त्रनियन्त्रितपौरुषपरमा पुरुषस्य पुरुषता या स्यात्अभिमतफलभरसिद्धयै भवति हि सैवान्यथा त्वनर्थाय ॥ १९ ॥

śāstranīyantrītapauruṣaparamā puruṣasya puruṣatā yā syātabhimataphalabharasiddhyai bhavati hi saivānyathā tvanarthāya || 19 ||

A person's manhood -- his real strength as a person -- reaches its peak only when his effort is guided by right teaching; guided this way, it fully delivers the result he wants. Without that guidance, it only brings harm.

मनुष्य का सच्चा पुरुषत्व तभी अपने चरम पर पहुँचता है जब उसका प्रयत्न सही शास्त्र-शिक्षा के अनुसार हो; ऐसा प्रयत्न मनचाहा फल पूरी तरह दिलाता है। पर बिना इस मार्गदर्शन के किया गया प्रयत्न केवल नुकसान ही पहुँचाता है।

कस्यांचित्स्वयमात्मदुःस्थितिवशात्पुंसो दशायां शनै

रङ्गुल्यग्रनिपीडितैकचुलुकादावापबिन्दुर्बहुःकस्यांचिज्जलराशिपर्वतपुरद्वीपान्तरालीकृता भर्तव्योचितसंविभागकरणे पृथ्वी न पृथ्वी भवेत् ॥ २० ॥

kasyāṁcitsvayamātmaduḥsthitivaśātpuṁso daśāyāṁ śanai

raṅgulyagranipīḍitaikaculukādāvāpabindurbahuḥkasyāṁcijjalarāśiparvatapuradvīpāntarālīkṛtā

bhartavyocitasamvibhāgakarāṇe pṛthvī na pṛthvī bhavet || 20 ||

Because of the bad state a person's own life has fallen into, one man, drop by drop, can slowly squeeze out many drops of water from just one handful held between his fingertips. But another man, who holds the whole earth -- with its oceans, mountains, cities, and islands -- still cannot properly give his dependents their fair share; for him, even the whole earth feels as if it were not enough to be called an earth.

अपनी ही बुरी स्थिति के कारण, किसी व्यक्ति की हालत ऐसी होती है कि वह उंगलियों के बीच दबाकर एक ही चुल्लू पानी से भी धीरे-धीरे कई बूंदें निकाल लेता है। पर किसी दूसरे व्यक्ति के पास समुद्रों, पहाड़ों, नगरों और द्वीपों से भरी पूरी पृथ्वी होते हुए भी, जब अपने आश्रितों को उनका उचित हिस्सा देने की बात आती है, तो उसे वह पूरी पृथ्वी भी पृथ्वी जैसी नहीं लगती, यानी कम पड़ जाती है।

Chapter 5

2.5.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । प्रवृत्तिरेव प्रथमं यथाशास्त्रविहारिणाम् । प्रभेव वर्णभेदानां साधनी सर्वकर्मणाम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | pravṛttireva prathamam yathāśāstravīhārīṇām | prabheva varṇabhedānāṁ sādhanī sarvakarmaṇām || 1 ||

Vasishtha said: For those who live according to right teaching, action itself comes first -- like light that lets us tell colors apart, action is what carries out every deed.

वसिष्ठ जी ने कहा: जो लोग शास्त्र के अनुसार जीवन जीते हैं, उनके लिए सबसे पहले कर्म ही आता है -- जैसे प्रकाश से ही रंगों की पहचान होती है, वैसे ही कर्म से ही हर काम पूरा होता है।

2.5.2

मनसा वाञ्छते यच्च यथाशास्त्रं न कर्मणा । साध्यते मत्तलीलासौ मोहनी नार्थसाधनी ॥ २ ॥

manasā vāñchate yacca yathāśāstraṁ na karmaṇā | sādhyate mattalīlāsau mohanī nārthasāadhanī || 2 ||

But whatever a person only wishes for in the mind, without acting on it in the right way, according to right teaching, is never really achieved -- it stays a drunken daydream, something that fools you and gets nothing real done.

पर जो व्यक्ति मन में केवल इच्छा ही करता है और शास्त्र के अनुसार उसके लिए कर्म नहीं करता, वह इच्छा कभी पूरी नहीं होती -- वह तो नशे में देखे गए सपने जैसी है, जो धोखा देती है और कोई असली काम नहीं करती।

2.5.3

यथा संयतते येन तथा तेनानुभूयते । स्वकर्मैवेति चास्तेऽन्या व्यतिरिक्ता न दैवदृक् ॥ ३ ॥

yathā saṁyatate yena tathā tenānubhūyate | svakarmaiva iti cāste'nyā vyatiriktā na daivadrk || 3 ||

Whatever way a person strives, in that same way he experiences the result -- it is his own action alone that decides this; there is no separate thing called fate standing apart from it.

व्यक्ति जिस तरह से मेहनत करता है, उसी के अनुसार उसे फल मिलता है -- यह उसका अपना ही कर्म है; इससे अलग 'भाग्य' नाम की कोई चीज़ नहीं है।

2.5.4

उच्छास्त्रं शास्त्रितं चेति द्विविधं पौरुषं स्मृतम् । तत्रोच्छास्त्रमनर्थाय परमार्थाय शास्त्रितम् ॥ ४ ॥

ucchāstraṁ śāstritam ceti dvividhaṁ pauruṣaṁ smṛtam | tatrocchāstramanarthāya paramāsthāya śāstritam || 4 ||

Effort is said to be of two kinds -- effort that goes against right teaching, and effort that follows it. Effort against right teaching leads only to harm; effort that follows right teaching leads to the highest good.

प्रयत्न दो तरह का बताया गया है -- एक जो शास्त्र के विरुद्ध हो, और दूसरा जो शास्त्र के अनुसार हो। शास्त्र के विरुद्ध प्रयत्न से केवल नुकसान होता है, और शास्त्र के अनुसार प्रयत्न से परम कल्याण होता है।

2.5.5

द्वौ हुडाविव युध्येते पुरुषार्थौ समासमौ । प्राक्तनश्चैहिकश्चैव शाम्यत्यत्राल्पवीर्यवान् ॥ ५ ॥

dvau huḍāviva yudhyete puruṣārthau samāsamau | prāktanaśchāhikaścaiva śāmyatyatrālpavīryavān || 5 ||

The two kinds of effort -- from past lives and from this life -- clash with each other like two fighting rams, evenly matched; and in this fight, the weaker one gives way.

पिछले जन्म का प्रयत्न और इस जन्म का प्रयत्न, दोनों एक-दूसरे से वैसे ही टकराते हैं जैसे दो मेढ़े लड़ते हैं, दोनों लगभग बराबर ताकत के; और इस लड़ाई में जो कमज़ोर होता है, वह हार मान लेता है।

2.5.6

अतः पुरुषयत्नेन यतितव्यं यथा तथा । पुंसा तन्त्रेण सद्योगाद्येनाश्वद्यतनो जयेत् ॥ ६ ॥

ataḥ puruṣayatnena yatitavyaṁ yathā tathā | puṁsā tantreṇa sadyogādyenāśvadyatano jayet || 6 ||

So a person should keep trying, using his own effort, in whatever way works, with the right method and the right approach -- so that the effort of this life quickly wins the fight.

इसलिए व्यक्ति को अपने प्रयत्न से, जैसे भी बने, सही तरीके और सही उपाय से कोशिश करते रहना चाहिए, ताकि इस जन्म का प्रयत्न जल्दी ही जीत जाए।

2.5.7

द्वौ हुडाविव युध्येते पुरुषार्थौ समासमौ । आत्मीयश्चान्यदीयश्च जयत्यतिबलस्तयोः ॥ ७ ॥

dvau huḍāviva yudhyete puruṣārthau samāsamau | ātmīyaścānyādīyaśca jayatyatibalastayoh || 7 ||

Two kinds of effort clash like two fighting rams, evenly matched -- one's own effort, and someone else's; and between the two, whichever is stronger wins.

दो प्रयत्न भी वैसे ही टकराते हैं जैसे दो मेढ़े लड़ते हैं, बराबर ताकत के -- अपना प्रयत्न, और दूसरे का प्रयत्न; इन दोनों में जो अधिक बलवान होता है, वही जीतता है।

2.5.8

अनर्थः प्राप्यते यत्र शास्त्रितादपि पौरुषात् । अनर्थकर्तृ बलवत्तत्र ज्ञेयं स्वपौरुषम् ॥ ८ ॥

anarthaḥ prāpyate yatra śāstritādapipauruṣāt | anarthakartṛ balavattatra jñeyaṁ svapauruṣam || 8 ||

When harm still comes even from effort that follows right teaching, know that in that case it is one's own past effort, the one causing the harm, that is proving stronger.

जब शास्त्र के अनुसार किए गए प्रयत्न से भी नुकसान हो जाए, तो समझ लेना चाहिए कि वहाँ अपने ही पिछले जन्म का प्रयत्न, जो नुकसान पहुंचा रहा है, अभी ज़्यादा ताकतवर है।

2.5.9

परं पौरुषमाश्रित्य दन्तैर्दन्तान्विचूर्णयन् । शुभेनाऽशुभमुद्युक्तं प्राक्तनं पौरुषं जयेत् ॥ ९ ॥

paraṁ pauruṣamāśritya dantairdantānvicūrṇayan | śubhenāśubhamudyuktaṁ prāktanaṁ pauruṣaṁ jayet || 9 ||

So, relying on still greater effort, gritting your teeth hard, you should use good effort now to conquer the harmful effort left over from the past.

इसलिए और भी बड़ा प्रयत्न करके, दांत पीसकर, अच्छे प्रयत्न से पिछले जन्म के उस बुरे प्रयत्न को जीत लेना चाहिए जो अभी सक्रिय है।

2.5.10

प्राक्तनः पुरुषार्थोऽसौ मां नियोजयतीति धीः । बलादधस्पदीकार्या प्रत्यक्षादधिका न सा ॥ १० ॥

prāktanah puruṣārtho'sau māṃ niyojayatīti dhīḥ | balādadhaspadīkāryā pratyakṣādadhikā na sā || 10 ||

The thought 'my past effort is forcing me to act this way' must be crushed underfoot by force; that idea is not stronger than what you can directly see and do right now.

यह सोच कि 'मेरा पिछला प्रयत्न मुझे ऐसा करने पर मजबूर कर रहा है' -- इस सोच को ज़बरदस्ती कुचल देना चाहिए; यह सोच उससे बड़ी नहीं है जो अभी सामने, प्रत्यक्ष, किया जा सकता है।

2.5.11

तावत्तावत्प्रयत्नेन यतितव्यं सुपौरुषम् । प्राक्तनं पौरुषं यावदशुभं शाम्यति स्वयम् ॥ ११ ॥

tāvattāvatprayatnena yatitavyaṃ supauruṣam | prāktanaṃ pauruṣaṃ yāvadaśubhaṃ śāmyati svayam || 11 ||

You should keep making good, strong effort, again and again, until that harmful effort from the past finally quiets down on its own.

तब तक बार-बार अच्छा और दृढ़ प्रयत्न करते रहना चाहिए, जब तक पिछले जन्म का वह बुरा प्रयत्न अपने आप शांत न हो जाए।

2.5.12

दोषः शाम्यत्यसंदेहं प्राक्तनोऽद्यतनैर्गुणैः । दृष्टान्तोऽत्र ह्यस्तनस्य दोषस्याद्य गुणैः क्षयः ॥ १२ ॥

doṣaḥ śāmyatyasaṃdehaṃ prāktano'dyatanaigūṇaiḥ | dṛṣṭānto'tra hyastanasya doṣasyādyā guṇaiḥ kṣayaḥ || 12 ||

There is no doubt that a fault from the past is calmed by good qualities practiced today; here is the proof -- yesterday's fault is destroyed today by today's good qualities.

इसमें कोई शक नहीं कि पिछले जन्म का दोष आज के अच्छे गुणों से शांत हो जाता है; इसका प्रमाण यह है कि कल का दोष आज के अच्छे गुणों से मिट जाता है।

2.5.13

असद्वैवमधःकृत्वा नित्यमुद्रिक्तया धिया । संसारोत्तरणं भूत्यै यतेताऽऽधातुमात्मनि ॥ १३ ॥

asaddaivamadhaḥkṛtvā nityamudriktayā dhiyā | saṃsārottaranaṃ bhūtyai yatetā'adhātumātmani || 13 ||

So put the false idea of fate beneath your feet, keep your mind always lifted up, and strive to bring about, within yourself, the crossing beyond this world's cycle, for your own true good.

इसलिए झूठे भाग्य को अपने पैरों तले कुचल दो, अपने मन को हमेशा ऊँचा रखो, और अपने ही भीतर संसार-चक्र से पार जाने का प्रयत्न करो, अपने ही भले के लिए।

2.5.14

न गन्तव्यमनुद्योगैः साम्यं पुरुषगर्दभैः । उद्योगस्तु यथाशास्त्रं लोकद्वितयसिद्धये ॥ १४ ॥

na gantavyamanudyogaiḥ sāmyaṃ puruṣagardabhaiḥ | udyogastu yathāśāstraṃ lokadvitayasiddhaye || 14 ||

Do not, by staying lazy, make yourself equal to men who are no better than donkeys. Instead, work hard in the right way, as good teaching directs, to succeed in both this world and the next.

आलस्य में पड़े रहकर अपने आपको उन आदमियों जैसा मत बनाओ जो गधों के समान हैं। बल्कि शास्त्र के बताए सही ढंग से मेहनत करो, ताकि इस लोक और परलोक दोनों में सफलता मिले।

2.5.15

संसारकुहरादस्मान्निर्गन्तव्यं स्वयं बलात् । पौरुषं यत्नमाश्रित्य हरिणैवारिपञ्जरात् ॥ १५ ॥

saṃsārakuharādasmanñirgantavyaṃ svayaṃ balāt | pauruṣaṃ yatnamāśritya hariṇevāripañjarāt || 15 ||

You must break out of this deep pit of the world by your own strength, relying on your own effort - like a deer breaking free from an enemy's cage.

अपने ही बल से, अपने ही प्रयत्न के सहारे, इस संसार रूपी गहरे गड्ढे से बाहर निकलना चाहिए -- जैसे कोई हिरण किसी शत्रु के पिंजरे से छूटकर भाग निकलता है।

2.5.16

प्रत्यहं प्रत्यवेक्षेत देहं नश्वरमात्मनः । संत्यजेत्पशुभिस्तुल्यं श्रयेत्सत्पुरुषोचितम् ॥ १६ ॥

pratyahaṃ pratyavekṣeta dehaṃ naśvaramātmanaḥ | saṃtyajetpaśubhistulyaṃ śrayetsatpuruṣocitam || 16 ||

Every day, look closely at your own body and see that it will not last. Give up living like an animal, and take up the way that fits a good and noble person.

हर दिन अपने शरीर को देखो और समझो कि यह नाशवान है, हमेशा नहीं रहेगा। पशुओं जैसा जीवन छोड़ दो, और भले-सच्चे मनुष्य के योग्य आचरण अपनाओ।

2.5.17

किञ्चित्कान्तान्नपानादिकलिलं कोमलं गृहे । व्रणे कीट इवास्वाद्य वयः कार्यं न भस्मसात् ॥ १७ ॥

kiṃcittkāntānnapānādikalilaṃ komalaṃ gr̥he | vraṇe kīṭa ivāsvādya vayaḥ kāryaṃ na bhasmasāt || 17 ||

At home, a person tastes a little pleasant food, drink, and soft comfort -- the way a worm feeds on a wound. But one's life should not be burned away to ashes chasing only this.

घर में मनुष्य थोड़ा-सा सुख भोगता है, अच्छा खाना-पीना और आराम -- बिल्कुल वैसे ही जैसे कोई कीड़ा किसी घाव में सुख पाता है। पर इसी में लगे रहकर अपना पूरा जीवन राख नहीं कर देना चाहिए।

2.5.18

शुभेन पौरुषेणाशु शुभमासाद्यते फलम् । अशुभेनाशुभं नित्यं दैवं नाम न किञ्चन ॥ १८ ॥

śubhena pauruṣeṇāśu śubhamāśadyate phalaṃ | aśubhenāśubhaṃ nityaṃ daivaṃ nāma na kiñcana || 18 ||

Good effort quickly brings a good result; bad effort always brings a bad one. There is no such thing at all called fate.

अच्छे प्रयत्न से जल्दी ही अच्छा फल मिलता है; बुरे प्रयत्न से हमेशा बुरा फल मिलता है। 'भाग्य' नाम की कोई चीज़ है ही नहीं।

2.5.19

प्रत्यक्षमानमुत्सृज्य योऽनुमानमुपैत्यसौ । स्वभुजाभ्यामिमौ सर्पाविति प्रेक्ष्य पलायते ॥ १९ ॥

pratyakṣamānamutsṛjya yo'numānamupaitysau | svabhujābhyāmimau sarpāviti prekṣya palāyate || 19 ||

Someone who ignores what is plainly seen and instead goes by guesswork is like a man who looks at his own two arms, thinks 'these are two snakes,' and runs away in fear.

जो व्यक्ति जो सामने साफ़ दिख रहा है उसे छोड़कर सिर्फ अटकल पर चलता है, वह ठीक वैसा ही है जैसे कोई अपनी ही दोनों बांहों को देखकर सोचे 'ये तो दो सांप हैं' और डरकर भाग जाए।

2.5.20

दैवं संप्रेरयति मामिति दग्धधियां मुखम् । अदृष्टश्रेष्ठदृष्टीनां दृष्ट्वा लक्ष्मीर्निवर्तते ॥ २० ॥

daivam samprerayati māmiti dagdhadhiyāṃ mukham | adṛṣṭaśreṣṭhadrṣṭīnāṃ dṛṣṭvā lakṣmīrnivartate || 20 ||

'Fate is driving me' -- this is what comes out of the mouths of people whose minds are ruined.

When Lakshmi, the goddess of fortune, sees the faces of those who trust the unseen over what is plainly in front of them, she turns away from them.

'भाग्य मुझे चला रहा है' -- यह बात उन्हीं के मुँह से निकलती है जिनकी बुद्धि नष्ट हो चुकी है। जो लोग जो सामने दिख रहा है उसे छोड़कर अनदेखी चीज़ पर भरोसा करते हैं, उनका चेहरा देखकर लक्ष्मी भी उनसे मुँह मोड़ लेती है।

2.5.21

तस्मात्पुरुषयत्नेन विवेकं पूर्वमाश्रयेत् । आत्मज्ञानमहार्थानि शास्त्राणि प्रविचारयेत् ॥ २१ ॥

tasmātpuruṣayatnena vivekaṃ pūrvamāśrayet | ātmajñānamahārthāni śāstrāṇi pravīcārayet || 21 ||

So, through your own effort, first take hold of clear judgment; and study carefully the scriptures whose whole great purpose is knowledge of the true self.

इसलिए अपने ही प्रयत्न से पहले सही समझ यानी विवेक अपनाओ; और उन शास्त्रों का गहराई से अध्ययन करो जिनका बड़ा उद्देश्य आत्मज्ञान है।

2.5.22

चित्ते चिन्तयतामर्थं यथाशास्त्रं निजेहितैः । असंसाधयतामेव मूढानां धिगदुरीप्सितम् ॥ २२ ॥

citte cintayatāmartham yathāśāstram nijehitaiḥ | asaṃsādhayatāmeva mūḍhānāṃ dhigdurīpsitam || 22 ||

For those who only think about a goal in their mind, but never work for it in the right way that good teaching shows, and so never achieve it -- shame on the foolish, empty wishing of such people!

जो लोग मन में केवल किसी लक्ष्य के बारे में सोचते रहते हैं, पर शास्त्र के बताए सही ढंग से उसके लिए मेहनत नहीं करते और इसीलिए कभी उसे पा भी नहीं पाते -- ऐसे मूर्खों की खोखली इच्छा पर धिक्कार है!

2.5.23

पौरुषं च नवानन्तं न यत्नमभिवाच्छ्यते । न यत्नेनापि महता प्राप्यते रत्नमश्मतः ॥ २३ ॥

pauruṣaṃ ca navānantam na yatnamabhivācchyate | na yatnenāpi mahatā prāpyate ratnamasmataḥ || 23 ||

And effort, too, has no limit beyond what is right for it -- one should not wish for it to have no bounds at all. Even with great effort, no one can get a jewel out of a plain stone.

प्रयत्न की भी अपनी एक सीमा होती है -- यह मत सोचो कि प्रयत्न की कोई सीमा ही नहीं है। बड़े से बड़ा प्रयत्न करने पर भी कोई साधारण पत्थर से रत्न नहीं निकाल सकता।

2.5.24

यथा घटः परिमितो यथा परिमितः पटः । नियतः परिमाणस्थः पुरुषार्थस्तथैव च ॥ २४ ॥

yathā ghaṭaḥ parimito yathā parimitaḥ paṭaḥ | niyataḥ parimāṇasthaḥ puruṣārthastathaiva ca || 24 ||

Just as a clay pot has a fixed size, and cloth has a fixed size, human effort too has its own fixed measure, and stays within it.

जैसे किसी घड़े का एक निश्चित आकार होता है, जैसे कपड़े का एक निश्चित माप होता है, वैसे ही मनुष्य के प्रयत्न की भी अपनी एक तय सीमा होती है, और वह उसी सीमा के भीतर रहता है।

2.5.25

स च सच्छास्त्रसत्सङ्गसदाचारैर्निजं फलम् । ददातीति स्वभावोऽयमन्यथा नार्थसिद्धये ॥ २५ ॥

sa ca sacchāstrasatsaṅgasadācārainrijaṃ phalam | dadātīti svabhāvo'yamananyathā nārthasiddhaye || 25 ||

And this effort, joined with good teaching, good company, and good conduct, naturally gives its true result -- that is its nature. Without these, it does not lead to any real success.

और यह प्रयत्न जब अच्छे शास्त्र, अच्छी संगति और अच्छे आचरण के साथ जुड़ा है, तो अपना सही फल देता है -- यही इसका स्वभाव है। इनके बिना यह किसी असली सफलता तक नहीं पहुँचाता।

2.5.26

स्वरूपं पौरुषस्यैतदेवं व्यवहरन्नरः । याति निष्फलयत्नत्वं न कदाचन कश्चन ॥ २६ ॥

svarūpaṃ pauṛuṣasyaitadevaṃ vyavaharannaraḥ | yāti niṣphalayatnatvaṃ na kadācana kaścana || 26 ||

This is the real nature of true effort. Anyone who acts in line with it will never, at any time, find his effort fruitless.

सच्चे प्रयत्न का यही असली स्वरूप है। जो इसी के अनुसार आचरण करता है, उसका प्रयत्न कभी भी, किसी भी समय, निष्फल नहीं होता।

2.5.27

दैन्यदारिद्र्यदुःखार्ता अप्यन्ये पुरुषोत्तमाः । पौरुषेणैव यत्नेन याता देवेन्द्रतुल्यताम् ॥ २७ ॥

dainyadāridryaduḥkhārtā apyanye puruṣottamāḥ | pauṛuṣeṇaiva yatnena yātā deveन्द्रatulyatām || 27 ||

There have been other great men too, who, though tormented by misery, poverty, and suffering, rose by effort alone to become equal to Indra, the king of the gods.

ऐसे भी महान लोग हुए हैं जो दीनता, गरीबी और दुःख से पीड़ित थे, पर उन्होंने केवल अपने प्रयत्न से इंद्र के समान पद पा लिया।

2.5.28

आबाल्यादलमभ्यस्तैः शास्त्रसत्सङ्गमादिभिः । गुणैः पुरुषयत्नेन स्वार्थः संप्राप्यते यतः ॥ २८ ॥

ābālyādalamabhyastaiḥ śāstrasatsaṅgamādibhiḥ | guṇaiḥ puruṣayatnena svārthaḥ saṃprāpyate yataḥ || 28 ||

For it is through good qualities -- right teaching, good company, and the rest -- well practiced from childhood on, by one's own effort, that a person truly reaches his own good.

क्योंकि बचपन से ही अच्छे शास्त्र, अच्छी संगति और इस तरह के गुणों का भली-भाँति अभ्यास करके, अपने ही प्रयत्न से मनुष्य अपने असली हित को पाता है।

2.5.29

इति प्रत्यक्षतो दृष्टमनुभूतं श्रुतं कृतम् । दैवात्तमिति मन्यन्ते ये हतास्ते कुबुद्धयः ॥ २९ ॥

iti pratyakṣato dṛṣṭamanubhūtaṃ śrūtaṃ kṛtaṃ | daivāttamiti manyante ye hatāste kubuddhayaḥ || 29 ||

All this has been directly seen, experienced, heard of, and done. Yet those who still say 'this happened because of fate' are lost souls, poor thinkers.

यह सब कुछ प्रत्यक्ष देखा गया है, अनुभव किया गया है, सुना गया है, और किया गया है। फिर भी जो लोग यह मानते हैं कि 'यह तो भाग्य से हुआ', वे बर्बाद लोग हैं, उनकी सोच ही गलत है।

2.5.30

आलस्यं यदि न भवेज्जगत्यनर्थः को न स्याद्बहुधनको बहुश्रुतो वा । आलस्यादियमवनिः ससागरान्ता संपूर्णा नरपशुभिश्च निर्धनैश्च ॥ ३० ॥

ālasyam yadi na bhavejjagatyānarthah ko na syādbahudhanako bahusruto vā | ālasyādiyamavaniḥ sasāgarāntā sampūrṇā narapaśubhiśca nirdhanaiśca || 30 ||

If there were no such thing as laziness in the world, who could fail to become rich or greatly learned? It is because of laziness alone that this whole earth, right up to its oceans, is filled with men who live like animals, and with the poor.

अगर संसार में आलस्य नाम की कोई चीज़ न होती, तो कौन धनवान या बड़ा विद्वान न बन पाता? केवल आलस्य के कारण ही यह पूरी पृथ्वी, समुद्र तक, ऐसे लोगों से भरी है जो पशु जैसे जीवन जीते हैं और गरीब बने रहते हैं।

2.5.31

बाल्ये गतेऽविरतकल्पितकेलिलोले दोर्दण्डमण्डितवयःप्रभृति प्रयत्नात् । सत्सङ्गमैः पदपदार्थविशुद्धबुद्धिः कुर्यान्नरः स्वगुणदोषविचारणानि ॥ ३१ ॥

bālye gate'viratakalpitakelilole dordṇḍamaṇḍitavayaḥprabhṛti prayatnāt | satsaṅgamaiḥ padapadārthaviśuddhabuddhiḥ kuryānnarah svaguṇadoṣavicāraṇāni || 31 ||

Once childhood has passed -- that restless time full of made-up games -- from the age when a man's arms grow strong, he should, through effort and the company of good people, make his mind clear about the true meaning of words, and examine his own good and bad qualities.

जब बचपन बीत जाता है -- जो बेचैन खेल-कूद और कल्पनाओं से भरा समय होता है -- तो जिस उम्र में हाथ-पैर मज़बूत हो जाते हैं, उस उम्र से ही मनुष्य को प्रयत्न और अच्छी संगति से शब्दों के सही अर्थ को समझते हुए अपनी बुद्धि को शुद्ध करना चाहिए, और अपने गुण-दोषों की जांच करते रहना चाहिए।

2.5.32

वाल्मीकिरुवाच । इत्युक्तवत्यथ मुनौ दिवसो जगाम सायंतनाय विधयेऽस्तमिनो जगाम । स्नातुं सभा कृतनमस्करणा जगाम श्यामाक्षये रविकरेण सहाजगाम ॥ ३२ ॥

vālmīkiruvāca | ityuktavatyatha munau divaso jagāma sāyantanāya vidhaye'stamino jagāma | snātum sabhā kṛtanamaskarṇā jagāma śyāmākṣaye ravikareṇa sahājagāma || 32 ||

Valmiki said: When the sage had finished speaking these words, the day came to an end. The sun went down, as if to perform the evening rites. The assembly, after paying their respects, went off to bathe. And as the sun's light faded, the dusk came on.

वाल्मीकि जी ने कहा: जब मुनि यह कह चुके, तब दिन ढल गया। सूरज ऐसे डूब गया मानो संध्या-वंदन करने जा रहा हो। सभा में बैठे लोग प्रणाम करके स्नान करने चले गए। और सूरज की किरणों के धुंधला पड़ते ही शाम का अंधेरा उतर आया।

Chapter 6

2.6.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । तस्मात्प्राक्पौरुषादैवं नान्यत्तत्प्रोज्झ्य दूरतः । साधुसंगमसच्छास्त्रैर्जीवमुत्तारयेद्बलात् ॥ १ ॥

*śrīvasiṣṭha uvāca | tasmātprākpauruṣāddaivaṃ nānyattatprojjhya dūrataḥ |
sādhusaṅgamasacchāstrairjīvamuttārayedbalāt || 1 ||*

Vasishtha said: So fate is nothing but effort made earlier. Throw that idea of fate far away, and use the company of good people and true teachings to force the living being across the ocean of rebirth.

वसिष्ठ जी ने कहा - इसलिए भाग्य कुछ और नहीं, बस पहले किया हुआ प्रयत्न ही है। भाग्य के इस खयाल को दूर फेंक दो, और अच्छे लोगों की संगति और सच्चे शास्त्रों की मदद से जीव को ज़बरदस्ती संसार-सागर से पार उतारो।

2.6.2

यथा यथा प्रयत्नः स्याद्भवेदाशु फलं तथा । इति पौरुषमेवास्ति दैवमस्तु तदेव च ॥ २ ॥

yathā yathā prayatnaḥ syād bhavedāśu phalaṃ tathā | iti pauruṣamevāsti daivamastu tadeva ca || 2 ||

However much effort is made, the result comes just as quickly, in that same measure. So there is only effort - let fate be nothing but that very effort.

जितना ज़्यादा प्रयत्न किया जाए, उतनी ही जल्दी उसका फल मिलता है। इसलिए बस प्रयत्न ही है - और भाग्य कुछ नहीं, वही प्रयत्न है।

2.6.3

दुःखाद्यथा दुःखकाले हा कष्टमिति कथ्यते । हाकष्टशब्दपर्यायस्तथा हा दैवमित्यपि ॥ ३ ॥

duḥkhādyathā duḥkhakāle hā kaṣṭhamiti kathyate | hākaṣṭaśabdaparyāyastathā hā daivamityapi || 3 ||

Just as, when someone is in pain, they cry out, oh, what suffering, in the same way, crying, oh, fate, is only another way of saying, oh, what suffering.

जैसे दुख के समय आदमी कहता है, हाय, कितना कष्ट है, वैसे ही, हाय भाग्य, कहना भी बस, हाय, कितना कष्ट है, कहने का ही दूसरा तरीका है।

2.6.4

प्राक्स्वकर्मतराकारं दैवं नाम न विद्यते । बालः प्रबलपुंसेव तज्जेतुमिह शक्यते ॥ ४ ॥

prākṣvakarmetarākāraṃ daivaṃ nāma na vidyate | bālaḥ prabalapuṃseva tajjetumih śakyate || 4 ||

There is nothing called fate that has any form other than one's own former action. Here, even a child can conquer it, just as a strong man can.

भाग्य नाम की कोई चीज़ अपने ही पुराने कर्म से अलग कोई रूप नहीं रखती। यहाँ एक बच्चा भी उसे जीत सकता है, जैसे एक ताकतवर आदमी जीत सकता है।

2.6.5

ह्यस्तनो दुष्ट आचार आचारेणाद्य चारुणा । यथाशु शुभतामेति प्राक्तनं कर्म तत्तथा ॥ ५ ॥

hyastano duṣṭa ācāra ācāreṇādya cāruṇā | yathāśu śubhatāmeti prāktanaṃ karma tattathā || 5 ||

Just as yesterday's bad conduct is quickly made good by today's good conduct, in that same way one's past action too can quickly be made good.

जैसे कल का बुरा आचरण आज के अच्छे आचरण से जल्दी अच्छा बन जाता है, वैसे ही पुराना कर्म भी उतनी ही जल्दी अच्छा बन सकता है।

2.6.6

तज्जयाय यतन्ते ये न लोभलवलम्पटाः । ते दीनाः प्राकृता मूढाः स्थिता दैवपरायणाः ॥ ६ ॥

tajjayāya yatante ye na lobhalavalampatāḥ | te dīnāḥ prākṛtā mūḍhāḥ sthitā daivaparāyaṇāḥ || 6 ||

Those who do not strive to conquer that past action, because they are caught up in some small greed, are pitiful, common, foolish people who remain devoted to fate.

जो लोग उस पुराने कर्म को जीतने का प्रयत्न नहीं करते, क्योंकि वे थोड़े से लालच में फँसे रहते हैं, वे दयनीय, ओछे और मूर्ख लोग हैं जो भाग्य के भरोसे बैठे रहते हैं।

2.6.7

पौरुषेण कृतं कर्म दैवाद्यदभिनश्यति । तत्र नाशयितुर्ज्ञेयं पौरुषं बलवत्तरम् ॥ ७ ॥

pauruṣeṇa kṛtaṁ karma daivādyadabhinashyati | tatra nāśayiturjñeyaṁ pauruṣaṁ balavattaram || 7 ||

When an action carried out through effort is destroyed by what is called fate, know that in that case a stronger effort was really the destroyer.

जब प्रयत्न से किया गया काम उस चीज़ से नष्ट हो जाता है जिसे भाग्य कहते हैं, तो समझ लो कि असल में उसे एक और ज़्यादा ताकतवर प्रयत्न ने ही नष्ट किया है।

2.6.8

यदेकवृन्तफलयोरथैकं शून्यकोटरम् । तत्र प्रयत्नः स्फुरितस्तथा तद्रससंविदः ॥ ८ ॥

yadekavṛntaphalayorathaikaṁ śūnyakoṭaram | tatra prayatnaḥ sphuritastathā tadrāsasaṁvidaḥ || 8 ||

Take two fruits growing on a single stalk, one of which turns out hollow inside - there too, effort has been at work, as can be known from the taste of each.

एक ही डंठल पर लगे दो फलों में से एक अंदर से खोखला निकलता है - वहाँ भी प्रयत्न ही काम कर रहा होता है, जैसा उनके स्वाद से पता चलता है।

2.6.9

यत्प्रयान्ति जगद्भावाः संसिद्धा अपि संक्षयम् । क्षयकारकयत्नस्य ह्यत्र ज्ञेयं महद्बलम् ॥ ९ ॥

yatprayānti jagadbhāvāḥ saṁsiddhā api saṁkṣayam | kṣayakārayatnasya hyatra jñeyaṁ mahadbalaṁ || 9 ||

That things in the world decay and perish even after becoming fully ripe and complete shows the great power of the effort that causes that decay.

संसार की चीज़ें पूरी तरह तैयार और पक जाने के बाद भी नष्ट हो जाती हैं - इससे पता चलता है कि नष्ट करने वाले प्रयत्न की ही बड़ी ताकत है।

2.6.10

द्वौ हुडाविव युध्येते पुरुषार्थौ परस्परम् । य एव बलवांस्तत्र स एव जयति क्षणात् ॥ १० ॥

dvau huḍāviva yudhyete puruṣārthau parasparam | ya eva balavāṁstatra sa eva jayati kṣaṇāt || 10 ||

Two efforts fight each other like two rams butting heads; whichever of the two is stronger wins in an instant.

दो प्रयत्न आपस में वैसे ही लड़ते हैं जैसे दो मेढ़े लड़ते हैं; इनमें से जो ज़्यादा ताकतवर होता है, वही तुरंत जीत जाता है।

2.6.11

भिक्षुको मङ्गलेभेन नृपो यत्क्रियते बलात् । तदमात्येभपौराणां प्रयत्नस्य बलं महत् ॥ ११ ॥

bhikṣuko maṅgalebhena nṛpo yatkriyate balāt | tadamātyebhapaurāṇāṃ prayatnasya balaṃ mahat || 11 ||

When a beggar is forcibly made a king through the auspicious elephant, that is due to the great power of the effort of the ministers, the elephant-keepers, and the citizens.

जब एक भिखारी को शुभ हाथी के ज़रिए ज़बरदस्ती राजा बना दिया जाता है, तो यह असल में मंत्रियों, महावतों और नागरिकों के प्रयत्न की ही बड़ी ताकत है।

2.6.12

पौरुषेणान्नमाक्रम्य यथा दन्तेन चूर्ण्यते । अन्यः पौरुषमाश्रित्य तथा शूरेण चूर्ण्यते ॥ १२ ॥

pauruṣeṇānnamākramya yathā dantena cūrṇyate | anyaḥ pauruṣamāśritya tathā śūreṇa cūrṇyate || 12 ||

Just as food is seized through effort and then ground up by the teeth, in the same way one person relying on effort is crushed by another, a stronger hero.

जैसे भोजन को अपने प्रयत्न से पकड़कर दाँत से चबाकर पीस दिया जाता है, वैसे ही प्रयत्न के सहारे खड़ा एक आदमी किसी वीर के हाथों कुचल दिया जाता है।

2.6.13

अन्नभूता हि महतां लघवो यत्नशालिनाम् । यथेष्टं विनियोज्यन्ते तेन कर्मसु लोष्टवत् ॥ १३ ॥

annabhūtā hi mahatāṃ laghavo yatnaśālinām | yatheṣṭaṃ viniyojyante tena karmasu loṣṭavat || 13 ||

The weak become like food for the mighty who are full of effort; by that strength the mighty use the weak in their tasks just as they please, like a mere clod of earth.

कमज़ोर लोग, प्रयत्नशील ताकतवर लोगों के लिए मानो भोजन बन जाते हैं; वे ताकतवर लोग उन्हें अपनी मर्ज़ी से, मिट्टी के ढेले की तरह, अपने कामों में इस्तेमाल कर लेते हैं।

2.6.14

शक्तस्य पौरुषं दृश्यमदृश्यं वापि यद्भवेत् । तदैवमित्यशक्तेन बुद्धमात्मन्यबुद्धिना ॥ १४ ॥

śaktasya pauruṣaṃ dṛśyamadṛśyaṃ vāpi yadbhavet | taddaivamityaśaktena buddhamātmanyabuddhinā || 14 ||

Whatever effort a capable person makes, whether it can be seen or not, an incapable person who does not really understand it calls that fate.

एक समर्थ आदमी जो भी प्रयत्न करता है, चाहे वह दिखे या न दिखे, एक असमर्थ आदमी जो असल बात नहीं समझता, उसी को भाग्य कह देता है।

2.6.15

भूतानां बलवद्भूतं यन्न दैवमिति स्थितम् । तत्तेषामप्यधिष्ठातृ सतामेतत्स्फुटं मिथः ॥ १५ ॥

bhūtānāṃ balavadbhūtaṃ yanna daivamiti sthitam | tatteṣāmapyadhiṣṭhāṭṛ satāmetatsphuṭaṃ mithaḥ || 15 ||

Among all beings, the one that is strongest - one that is recognized as a real force and not as fate - rules over the rest. This is plain and clear to the wise, one to another.

सब प्राणियों में जो सबसे ताकतवर है - जिसे भाग्य नहीं बल्कि एक असली ताकत माना जाता है - वही बाकी सब पर हुक्मत करता है। यह बात समझदार लोगों के बीच बिल्कुल साफ है।

2.6.16

शास्त्रामात्येभपौराणामविकल्पा स्वभावधीः । या सा भिक्षुराज्यस्य कर्तृ धर्तृ प्रजास्थितेः ॥ १६ ॥

śāstrāmātyebhapaurāṇāmaṅvikalpā svabhāvadhiḥ | yā sā bhikṣukarājyasya kartṛ dharṭṛ prajāsthiteḥ || 16 ||

The firm, unanimous, natural judgment of the scriptures, the ministers, the elephant-keepers, and the citizens - it is this that turns the beggar into a king and holds the settled order of the subjects together.

शास्त्रों, मंत्रियों, महावतों और नागरिकों की दृढ़ और एकमत स्वाभाविक समझ ही है, जो भिखारी को राजा बनाती है और प्रजा की व्यवस्था को बनाए रखती है।

2.6.17

भिक्षुको मङ्गलेभेन नृपो यत्क्रियते क्वचित् । प्राक्तनं पौरुषं तत्र बलवद्वापि कारणम् ॥ १७ ॥

bhikṣuko maṅgalebhena nṛpo yatkriyate kvacit | prāktanam pauruṣam tatra balavadvāpi kāraṇam || 17 ||

When, on some occasion, a beggar is made king through the auspicious elephant, the cause there could equally be his own past effort, being powerful enough to bring this about.

कभी-कभी जब भिखारी को शुभ हाथी के ज़रिए राजा बना दिया जाता है, तो उसका कारण उसका अपना पुराना प्रयत्न भी हो सकता है, जो इतना ताकतवर था।

2.6.18

ऐहिकः प्राक्तनं हन्ति प्राक्तनोऽद्यतनं बलात् । सर्वदा पुरुषस्पन्दस्तत्रानुद्वेगवाञ्जयी ॥ १८ ॥

aihikaḥ prāktanam hanti prāktano'dyatanam balāt | sarvadā puruṣaspandastatrānudvegavāñjayī || 18 ||

Present effort can destroy past action, and past action can forcibly overpower the present. It always comes down to the person's own exertion, and in that struggle, whoever stays free of agitation wins.

वर्तमान का प्रयत्न पुराने कर्म को नष्ट कर सकता है, और पुराना कर्म ज़बरदस्ती वर्तमान को दबा सकता है। बात हमेशा इंसान की अपनी हलचल यानी प्रयत्न पर ही टिकी होती है; और उसमें वही जीतता है जो घबराता नहीं।

2.6.19

द्वयोरद्यतनस्यैव प्रत्यक्षाद्वलिता भवेत् । दैवं जेतुं यतो यत्नैर्बालो यूनेव शक्यते ॥ १९ ॥

dvayoradyatanasyaiva pratyakṣādvalitā bhavet | daivam jetuṁ yato yatnairbālo yūneva śakyate || 19 ||

Between the two, direct experience shows that the present effort alone is the stronger; so fate can be conquered through effort, just as a child is easily overcome by a grown young man.

दोनों में से, प्रत्यक्ष अनुभव से यही पता चलता है कि वर्तमान प्रयत्न ही ज़्यादा ताकतवर है; इसलिए प्रयत्न से भाग्य को जीता जा सकता है, ठीक वैसे ही जैसे एक जवान आदमी आसानी से एक बच्चे पर जीत जाता है।

2.6.20

मेघेन नीयते यद्वद्वत्सरोपार्जिता कृषिः । मेघस्य पुरुषार्थोऽसौ जयत्यधिकयत्नवान् ॥ २० ॥

meghana nīyate yadvadvatsaropārjitā kṛṣiḥ | meghasya puruṣārtho'sau jayatyadhikayatnavān || 20 ||

Just as a whole year's harvest can be swept away by a cloud, that destruction is itself the cloud's own effort; and whoever has the greater effort wins.

जैसे एक बादल पूरे साल की मेहनत से उगी फ़सल को बहा ले जाता है, यह बादल का अपना प्रयत्न ही है; और जिसका प्रयत्न ज़्यादा होता है, वही जीतता है।

2.6.21

क्रमेणोपार्जितेऽप्यर्थे नष्टे कार्या न खेदिता । न बलं यत्र मे शक्तं तत्र का परिदेवना ॥ २१ ॥

krameṇopārjite'pyarthe naṣṭe kār्या na kheditā | na balaṁ yatra me śaktaṁ tatra kā paridevanā || 21 ||

Even when something gained little by little is lost, one should not grieve over it. Where my own strength has no power, what use is there in weeping over it?

धीरे-धीरे कमाई हुई चीज़ के नष्ट हो जाने पर भी दुखी नहीं होना चाहिए। जहाँ मेरी अपनी ताकत काम नहीं करती, वहाँ रोने-पीटने से क्या फायदा?

2.6.22

यन्न शक्नोमि तस्यार्थे यदि दुःखं करोम्यहम् । तदमारितमृत्योर्मे युक्तं प्रत्यहरोदनम् ॥ २२ ॥

yanna śaknōmi tasyārthe yadi duḥkhaṁ karomyaḥam | tadamāritamṛtyorme yuktaṁ pratyaharodanam || 22 ||

If I make myself suffer over something I have no power to change, then by that same logic I should weep every day that I have not yet conquered death.

अगर मैं उस चीज़ के लिए दुखी होता हूँ जिसे मैं बदल ही नहीं सकता, तो फिर मुझे यह भी रोज़ रोना चाहिए कि मैं अभी तक मौत को नहीं जीत पाया।

2.6.23

देशकालक्रियाद्रव्यवशतो विस्फुरन्त्यमी । सर्व एव जगद्भावा जयत्यधिकयत्नवान् ॥ २३ ॥

deśakālakriyādravyavśato visphurantyaṁī | sarva eva jagadbhāvā jayatyadhikayatnavān || 23 ||

All the states of this world appear depending on place, time, action, and material circumstance; and among them, it is the one with greater effort that wins.

संसार की सभी अवस्थाएँ देश, काल, क्रिया और वस्तु के अनुसार ही प्रकट होती हैं; और इनमें जिसका प्रयत्न ज़्यादा होता है, वही जीतता है।

2.6.24

तस्मात्पौरुषमाश्रित्य सच्छास्त्रैः सत्समागमैः । प्रज्ञाममलतां नीत्वा संसारजलधिं तरेत् ॥ २४ ॥

tasmātpauruṣamāśritya sacchāstraiḥ satsamāgamaiḥ | prajñāmamalatāṁ nītvā saṁsārajaladhiṁ taret || 24 ||

So, relying on one's own effort, through true teachings and the company of good people, one should purify one's understanding and so cross over the ocean of worldly existence.

इसलिए, अपने प्रयत्न के सहारे, सच्चे शास्त्रों और अच्छे लोगों की संगति से, अपनी बुद्धि को निर्मल बनाकर, संसार रूपी सागर को पार कर लेना चाहिए।

2.6.25

प्राक्तनश्चैहिकश्चेमौ पुरुषार्थौ फलद्रुमौ । संजातौ पुरुषारण्ये जयत्यभ्यधिकस्तयोः ॥ २५ ॥

prāktanaścaehikaścaimau puruṣārthau phaladdrumau | saṁjātau puruṣāraṇye jayatyabhyadhikastayoḥ || 25 ||

Past effort and present effort are like two fruit-bearing trees grown in the forest that is a person; and between the two, the greater one wins.

पुराना प्रयत्न और वर्तमान प्रयत्न - ये दोनों मानो इंसान रूपी जंगल में उगे दो फलदार पेड़ हैं; इन दोनों में जो बड़ा होता है, वही जीतता है।

2.6.26

कर्म यः प्राक्तनं तुच्छं न निहन्ति शुभेहितैः । अज्ञो जन्तुरनीशोऽसावात्मनः सुखदुःखयोः ॥ २६ ॥

karma yaḥ prāktanam tucchaṁ na nihanti śubhehitaiḥ | ajño janturanīśo'sāvātmanah sukhaduḥkhaḥ || 26 ||

Whoever does not wipe out his trifling past action through good deeds - that ignorant creature has no control over his own happiness and sorrow.

जो आदमी अपने तुच्छ पुराने कर्म को अच्छे कामों से नष्ट नहीं करता, वह मूर्ख प्राणी अपने ही सुख-दुख का मालिक नहीं रह जाता।

2.6.27

ईश्वरप्रेरितो गच्छेत्स्वर्गं नरकमेव वा । स सदैव पराधीनः पशुरेव न संशयः ॥ २७ ॥

īśvaraprerito gacchetsvargaṁ narakameva vā | sa sadaiva parādhīnaḥ paśureva na saṁśayaḥ || 27 ||

Someone driven only by God, going to heaven or to hell, is always dependent on another - exactly like an animal, no doubt about it.

जो सिर्फ ईश्वर की प्रेरणा से स्वर्ग या नरक जाता है, वह हमेशा दूसरे के अधीन रहता है - वह पशु के समान ही है, इसमें कोई शक नहीं।

2.6.28

यस्तूदारचमत्कारः सदाचारविहारवान् । स निर्याति जगन्मोहान्मृगेन्द्रः पञ्जरादिव ॥ २८ ॥

yastūdāracamatkāraḥ sadācāravihāravān | sa niryāti jaganmohānmṛgendraḥ pañjarādīva || 28 ||

But the one who has a noble spirit and lives by good conduct escapes from the delusion of the world, like a lion breaking free of its cage.

लेकिन जिसके मन में उदारता और तेज है और जो अच्छे आचरण से जीता है, वह संसार के मोह से वैसे ही निकल जाता है जैसे शेर पिंजरे से निकल भागता है।

2.6.29

कश्चिन्मां प्रेरयत्येवमित्यनर्थकुक्कल्पने । यः स्थितोऽदृष्टमुत्सृज्य त्याज्योऽसौ दूरतोऽधमः ॥ २९ ॥

kaścinmāṁ prerayatyevamityanarthakukalpane | yaḥ sthito'dṛṣṭamutsṛjya tyājyo'sau dūrato'dhamaḥ || 29 ||

Whoever turns away from his own hidden effort and holds on to the harmful, foolish belief that someone else is driving him like this should be shunned from far away, as the lowest of men.

जो अपने ही छिपे हुए प्रयत्न को नकारकर इस हानिकारक और मूर्खतापूर्ण खयाल में अटका रहता है कि कोई और उसे इस तरह चला रहा है, ऐसे नीच आदमी से दूर ही रहना चाहिए।

2.6.30

व्यवहारसहस्राणि यान्युपायान्ति यान्ति च । यथाशास्त्रं विहर्तव्यं तेषु त्यक्त्वा सुखासुखे ॥ ३० ॥

vyavahārasahasrāṇi yānyupāyānti yānti ca | yathāśāstraṁ vihartavyaṁ teṣu tyaktvā sukhāsukhe || 30 ||

Among the thousands of worldly affairs that keep coming and going, one should act as the scriptures teach, setting aside pleasure and pain.

जो हज़ारों सांसारिक कामकाज आते-जाते रहते हैं, उनमें सुख-दुख की चिंता छोड़कर शास्त्रों के अनुसार ही आचरण करना चाहिए।

2.6.31

यथाशास्त्रमनुच्छिन्नां मर्यादां स्वामनुज्झतः । उपतिष्ठन्ति सर्वाणि रत्नान्यम्बुनिधाविव ॥ ३१ ॥

yathāśāstram anuccchinnaṃ maryādāṃ svāmanujjhataḥ | upatiṣṭhanti sarvāṇi ratnānyambunidhāviva || 31 ||

For the one who does not abandon his own unbroken boundary as taught by the scriptures, everything comes to him on its own, just as jewels gather in the ocean.

जो अपनी उस मर्यादा को नहीं छोड़ता जो शास्त्रों ने बिना तोड़े बनाए रखने को कहा है, उसके पास सब कुछ अपने आप आ जाता है, जैसे समुद्र में रत्न आ जमा होते हैं।

2.6.32

स्वार्थप्रापककार्यैकप्रयत्नपरता बुधैः । प्रोक्ता पौरुषशब्देन सा सिद्ध्यै शास्त्रयन्त्रिता ॥ ३२ ॥

svārthaprāpakakāryaikaprayatnaparatā budhaiḥ | proktā pauruṣaśabdena sā siddhyai śāstrayantrita || 32 ||

Dedicated effort, focused on the one action that secures one's true good - this is what the wise mean by the word effort, and, kept within the bounds of scripture, it leads to success.

अपने सच्चे हित को पाने वाले काम में एकाग्र होकर लगाया गया यह प्रयत्न ही है जिसे समझदार लोग पुरुषार्थ कहते हैं; और शास्त्रों की मर्यादा में रहकर यही सफलता दिलाता है।

2.6.33

क्रियया स्पन्दधर्मिण्या स्वार्थसाधकता स्वयम् । साधुसंगमसच्छास्त्रतीक्ष्णयोन्नीयते धिया ॥ ३३ ॥

kriyayā spandadharminyā svārthasādhakatā svayam | sādhusaṃgamasacchāstratikṣṇayonnīyate dhiyā || 33 ||

Through action that involves real movement and exertion, the ability to achieve one's own good develops on its own - and it grows sharper with the intelligence gained from the company of good people and true teachings.

हलचल-भरे यानी सक्रिय काम के ज़रिए अपने हित को पाने की क्षमता खुद-ब-खुद बढ़ती है - और अच्छे लोगों की संगति और सच्चे शास्त्रों से मिलने वाली तीखी समझ से यह और निखर जाती है।

2.6.34

अनन्तं समतानन्दं परमार्थं विदुर्बुधाः । स येभ्यः प्राप्यते नित्यं ते सेव्याः शास्त्रसाधवः ॥ ३४ ॥

anantaṃ samatānandaṃ paramārthaṃ vidurbudhāḥ | sa yebhyaḥ prāpyate nityaṃ te sevyaḥ śāstrasādhavaḥ || 34 ||

The wise know the highest truth as an endless bliss of perfect evenness. Those good, scripture-knowing people through whom that truth is always to be found - they should be served.

समझदार लोग सबसे बड़े सत्य को समता के अनंत आनंद के रूप में जानते हैं। जिनसे यह सत्य हमेशा मिलता है, ऐसे शास्त्रज्ञ सज्जनों की सेवा करनी चाहिए।

2.6.35

देवल्लोकादिहागत्य लोकद्वयहितं भवेत् । प्राक्तनं पौरुषं तद्वै दैवशब्देन कथ्यते ॥ ३५ ॥

devalokādihāgatya lokadvayahitaṃ bhavet | prāktanaṃ pauruṣaṃ tadvai daivaśabdena kathyate || 35 ||

What comes here from the world of the gods and turns out to be good for both this world and the next - that is simply past effort, and that is what people mean by the word fate.

जो चीज़ देवलोक से यहाँ आकर इस लोक और परलोक दोनों के लिए हितकारी बनती है - वह असल में पुराना प्रयत्न ही है; और उसी को लोग भाग्य शब्द से कहते हैं।

2.6.36

तद्युक्तमेतदेतस्मिन्नास्ति नापवादामहे । मूढैः प्रकल्पितं दैवं मन्यन्ते ये क्षयं गताः ॥ ३६ ॥

tadyuktametadetasminnāsti nāpavadāmahe | mūḍhaiḥ prakalpitaṁ daivaṁ manyante ye kṣayaṁ gatāḥ || 36 ||

That much is fair, and we do not deny it. But fate, in the sense fools imagine it, is something they have invented - only those already ruined believe in it.

इतनी बात सही है और हम इसे नहीं नकारते। लेकिन भाग्य को जिस रूप में मूर्ख लोग मानते हैं, वह उन्हीं की गढ़ी हुई कल्पना है - जो लोग पहले ही बर्बाद हो चुके हैं, वही इस पर विश्वास करते हैं।

2.6.37

नित्यं स्वपौरुषादेव लोकद्वयहितं भवेत् । ह्यस्तनी दुष्क्रियाभ्येति शोभां सत्क्रियया यथा ॥ ३७ ॥

nityaṁ svapauruṣādeva lokadvayahitaṁ bhavet | hyastanī duṣkriyābhyeti śobhāṁ satkriyayā yathā || 37 ||

Benefit in both worlds always comes from one's own effort alone - just as yesterday's bad deed can be made good through a good deed today.

दोनों लोकों का हित हमेशा अपने ही प्रयत्न से मिलता है - ठीक वैसे ही जैसे कल का बुरा काम आज के अच्छे काम से सुधर जाता है।

2.6.38

अद्यैवं प्राक्तनी तस्माद्यत्नाद्यः कार्यवान्भवेत् । करामलकवद्दृष्टं पौरुषादेव तत्फलम् । मूढः प्रत्यक्षमुत्सृज्य दैवमोहे निमज्जति ॥ ३८ ॥

adyaivaṁ prāktanī tasmādyatnādyah kāryavānbhavet | karāmalakavadrṣṭaṁ pauruṣādeva tatphalam | mūḍhaḥ pratyakṣamutsṛjya daivamohe nimajjati || 38 ||

In just this way, today's deed becomes tomorrow's past action; so whoever acts with effort gets his work done. That result, coming only from effort, is as plain to see as a fruit held in the palm of the hand. But the fool turns away from what is right in front of his eyes and sinks into the delusion of fate.

इसी तरह आज का काम ही कल का पुराना कर्म बन जाता है; इसलिए जो प्रयत्न से काम करता है, वही अपना काम पूरा कर पाता है। यह फल, जो सिर्फ प्रयत्न से मिलता है, हथेली पर रखे फल जितना साफ दिखाई देता है। पर मूर्ख आदमी अपनी आँखों के सामने की सच्चाई को छोड़कर भाग्य के मोह में डूब जाता है।

2.6.39

सकलकारणकार्यविवर्जितं निजविकल्पबलादुपकल्पितम् । तदनपेक्ष्य हि दैवमसन्मयं श्रय शुभाशय पौरुषमात्मनः ॥ ३९ ॥

sakalakāraṇakāryavivarjitaṁ nijavikalpabalādūpakalpitaṁ | tadanapekṣya hi daivamasanmayam śraya śubhāśaya pauruṣamātmanaḥ || 39 ||

Fate has no real cause and no real effect; it is only something built up by the force of one's own imagination. So set aside this unreal fate, and instead, good-hearted one, rely on your own effort.

भाग्य का न कोई असली कारण है, न कोई असली नतीजा; यह तो बस अपनी ही कल्पना के ज़ोर से गढ़ी हुई चीज़ है। इसलिए इस झूठे भाग्य को छोड़ दो, और हे शुभ हृदय वाले, अपने ही प्रयत्न का सहारा लो।

2.6.40

शास्त्रैः सदाचरविजृम्भितदेशधर्मैर्यत्कल्पितं फलमतीव चिरप्ररूढम् । तस्मिन्हृदि स्फुरति चोपनमेति चित्तमङ्गावली तदनु पौरुषमेतदाहुः ॥ ४० ॥

śāstraiḥ sadācaravijṛmbhitadeśadharmairyatkalpitaṃ phalamatīva ciraprarūḍham | tasminhṛdi sphurati copanameti cittamaṅgāvalī tadanu pauṛuṣametadāhuḥ || 40 ||

The result that the scriptures, and the customs of a land shaped by long good conduct, have built up over a very long time - when it rises and stirs in the heart, and the mind, together with the whole body, bends toward it, this very inclination is what people call effort.

शास्त्रों और किसी देश के अच्छे आचरण से लंबे समय में बने रीति-रिवाजों ने जो नतीजा गहरा जमा दिया है, जब वह दिल में उभरता है और मन तथा पूरा शरीर उसकी ओर झुक जाता है, तो इसी झुकाव को लोग प्रयत्न कहते हैं।

2.6.41

बुद्धैव पौरुषफलं पुरुषत्वमेतदात्मप्रयत्नपरतैव सदैव कार्या । नेया ततः सफलतां परमामथासौ सच्छास्त्रसाधुजनपण्डितसेवनेन ॥ ४१ ॥

buddhvaiva pauṛuṣaphalaṃ puruṣatvameta dātmaprayatnaparataiva sadaiva kāryā | neyā tataḥ sapphalatām paramāmathāsau sacchāstrasādhujanapaṇḍitasevanena || 41 ||

Once you understand what effort achieves, and what it truly means to be a person, you should always devote yourself to making your own effort. Then, through the company and service of true teachings, good people, and the wise, that effort should be carried to its highest fulfilment.

प्रयत्न का फल क्या है और सच में इंसान होने का मतलब क्या है, यह समझकर हमेशा अपने प्रयत्न में लगे रहना चाहिए। फिर सच्चे शास्त्रों, अच्छे लोगों और विद्वानों की सेवा करके इस प्रयत्न को उसकी सबसे बड़ी सफलता तक पहुँचाना चाहिए।

2.6.42

दैवपौरुषविचारचारुभिश्चेदमाचरितमात्मपौरुषम् । नित्यमेव जयतीति भावितैः कार्य आर्यजनसेवयोद्यमः ॥ ४२ ॥

daivapauṛuṣavicārācārubhiścedamācaritamātmapauṛuṣam | nityameva jayatīti bhāvitaiḥ kārya āryajanasevayodyamaḥ || 42 ||

Those who are wise in weighing fate against effort, and who are convinced that one's own effort, practised in this way, always wins in the end, should keep striving through the service of noble, good people.

जो लोग भाग्य और प्रयत्न के बीच के भेद को अच्छी तरह समझते हैं, और जिन्हें यह विश्वास है कि इस तरह किया गया अपना प्रयत्न हमेशा जीतता है, उन्हें भले लोगों की सेवा करते हुए प्रयत्न करते रहना चाहिए।

2.6.43

जन्मप्रबन्धमयमामयमेष जीवो बुद्धैहिकं सहजपौरुषमेव सिद्ध्यै । शान्तिं नयत्ववितथेन वरौषधेन मृष्टेन तुष्टपरपण्डितसेवनेन ॥ ४३ ॥

janmaprabandhamayamāmaya meṣa jīvo buddhvaihikaṃ sahajapauṛuṣameva siddhyai | śāntiṃ nayatvavitathaena varauṣadhena mṛṣṭena tuṣṭaparaṇḍitasevanena || 43 ||

This living being, once he understands that his own natural effort in this world alone leads to accomplishment, should bring the disease that is the endless chain of births to peace, through a true and excellent medicine - the pure practice of serving good, contented, wise people.

यह जीव, यह समझकर कि इस दुनिया में अपना सहज प्रयत्न ही सफलता की ओर ले जाता है, जन्मों की अंतहीन कड़ी वाली इस बीमारी को शांत कर ले - एक सच्ची और उत्तम औषधि से, यानी संतुष्ट, भले, विद्वान लोगों की सेवा रूपी शुद्ध औषधि से।

Chapter 7

2.7.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । प्राप्य व्याधिविनिर्मुक्तं देहमल्पाधिवेदनम् । तथात्मनि समादध्याद्यथा भूयो न जायते ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | prāpya vyādhivinirmuktaṁ dehamalpādhivedanam | tathātmani samādadhyādyathā bhūyo na jāyate || 1 ||

Vasishtha said: Having obtained a body free from illness, one that feels little pain, a person should settle his mind on the self in such a way that he is never born again.

वसिष्ठ जी ने कहा - बीमारी से मुक्त और कम कष्ट वाला शरीर पाकर, इंसान को अपने मन को आत्मा में इस तरह लगाना चाहिए कि वह फिर कभी जन्म न ले।

2.7.2

दैवं पुरुषकारेण यो निवर्तितुमिच्छति । इह वामुत्र जगति स संपूर्णाभिवाञ्छितः ॥ २ ॥

daivam puruṣakāreṇa yo nivartitumicchati | iha vāmutra jagati sa saṁpūrṇābhivāñchitaḥ || 2 ||

Whoever wants to turn back fate through his own effort has all his wishes fully granted, in this world and the next.

जो अपने प्रयत्न से भाग्य को पलटना चाहता है, उसकी सारी इच्छाएँ इस लोक और परलोक दोनों में पूरी तरह पूरी हो जाती हैं।

2.7.3

ये समुद्योगमुत्सृज्य स्थिता दैवपरायणाः । ते धर्ममर्थं कामं च नाशयन्त्यात्मविद्विषः ॥ ३ ॥

ye samudyogamutsrjya sthitā daivaparāyaṇāḥ | te dharmamarthaṁ kāmam ca nāśayantyātmaavidviṣaḥ || 3 ||

Those who give up their own effort and remain devoted to fate destroy dharma, wealth, and pleasure alike - they are enemies of their own selves.

जो अपना प्रयत्न छोड़कर भाग्य के भरोसे बैठे रहते हैं, वे धर्म, अर्थ और काम - तीनों को नष्ट कर लेते हैं; वे अपने ही दुश्मन हैं।

2.7.4

संवित्स्पन्दो मनःस्पन्द ऐन्द्रियस्पन्द एव च । एतानि पुरुषार्थस्य रूपाण्येभ्यः फलोदयः ॥ ४ ॥

saṁvitspando manaḥspanda aindriyaspanda eva ca | etāni puruṣārthasya rūpāṇyebhyaḥ phalodayaḥ || 4 ||

The stirring of awareness, the stirring of the mind, and the stirring of the senses - these are the forms that effort takes, and from them the result comes about.

चेतना की हलचल, मन की हलचल और इंद्रियों की हलचल - ये ही प्रयत्न के अलग-अलग रूप हैं; और इन्हीं से फल पैदा होता है।

2.7.5

यथा संवेदनं चेतस्तथा तत्स्पन्दमृच्छति । तथैव कायश्चलति तथैव फलभोक्ता ॥ ५ ॥

yathā saṁvedanam cetastathā tatspanmamṛcchati | tathaiva kāyaścalati tathaiva phalabhokṛtā || 5 ||

As the mind feels something, it stirs in just that way; the body then moves in just that same way, and in just that way comes the experience of the result.

जैसा मन कुछ महसूस करता है, वैसे ही उसमें हलचल पैदा होती है; उसी हलचल के अनुसार शरीर हरकत करता है, और उसी के अनुसार फल भोगने का अनुभव मिलता है।

2.7.6

आबालमेतत्संसिद्धं यत्र यत्र यथा यथादैवं तु न क्वचिद्दृष्टमतो जगति पौरुषम् ॥ ६ ॥

ābālametatsamsiddham yatra yatra yathā yathādaivam tu na kvacidṛṣṭamato jagati pauruṣam || 6 ||

This has been true and known from childhood, wherever and however it happens; but fate has never been seen anywhere - so in this world, it is effort that is real.

यह बात बचपन से ही सबको पता है, चाहे जहाँ भी और जैसे भी हो; लेकिन भाग्य कहीं भी कभी नहीं देखा गया - इसलिए इस दुनिया में तो बस प्रयत्न ही असली चीज़ है।

2.7.7

पुरुषार्थेन देवानां गुरुरेव बृहस्पतिःशुक्रो दैत्येन्द्रगुरुतां पुरुषार्थेन चास्थितः ॥ ७ ॥

puruṣārthena devānāṃ gurureva bṛhaspatiḥśukro daityendragurutāṃ puruṣārthena cāsthitaḥ || 7 ||

It was through his own effort that Brihaspati became the guru of the gods, and it was through effort that Shukra came to hold the position of guru to the king of the demons.

अपने ही प्रयत्न से बृहस्पति देवताओं के गुरु बने, और प्रयत्न से ही शुक्राचार्य दैत्यों के राजा के गुरु बने।

2.7.8

दैन्यदारिद्र्यदुःखार्ता अपि साधो नरोत्तमाःपौरुषेणैव यत्नेन याता देवेन्द्रतुल्यताम् ॥ ८ ॥

dainyadāridryaduḥkhārtā api sādho narottamāḥpauruṣeṇaiva yatnena yātā devendratulyatām || 8 ||

O sadho, even the finest of men, once afflicted by misery, poverty, and suffering, have risen through effort alone to become equal to Indra, the king of the gods.

हे साधो, दीनता, गरीबी और दुख से पीड़ित रहे बड़े-बड़े श्रेष्ठ पुरुष भी सिर्फ प्रयत्न के दम पर इंद्र देवराज के बराबर पद तक पहुँच गए।

2.7.9

महान्तो विभवास्वादैनानाश्चर्यसमाश्रयाःपौरुषेणैव दोषेण नरकातिथितां गताः ॥ ९ ॥

mahānto vibhavāsvādairnānāścaryasamāśrayāḥpauruṣeṇaiva doṣeṇa narakātithitāṃ gatāḥ || 9 ||

Great men, who tasted vast wealth and enjoyed countless marvels, have also, through faults in their own effort, ended up as guests in hell.

बड़े-बड़े महान लोग, जिन्होंने बड़ी दौलत का स्वाद चखा और तरह-तरह के अचरज भोगे, अपने ही प्रयत्न की गलती से नरक के मेहमान बन गए।

2.7.10

भावाभावसहस्रेषु दशासु विविधासु चस्वपौरुषवशादेव निवृत्ता भूतजातयः ॥ १० ॥

bhāvābhāvasahasreṣu daśāsu vividhāsu casvapauruṣavaśādeva nivṛttā bhūtajātayaḥ || 10 ||

Amid thousands of ups and downs, and in all sorts of different circumstances, the many kinds of living beings have made their way through only by the strength of their own effort.

हज़ारों उतार-चढ़ावों में और तरह-तरह की परिस्थितियों में, तरह-तरह के जीव अपने ही प्रयत्न के बल पर ही उनसे पार निकल पाए हैं।

2.7.11

शास्त्रतो गुरुतश्चैव स्वतश्चेति त्रिसिद्धयःसर्वत्र पुरुषार्थस्य न दैवस्य कदाचन ॥ ११ ॥

śāstrato gurutaścaiva svataśceti trisiddhayaḥsarvatra puruṣārthasya na daivasya kadācana || 11 ||

From scripture, from a teacher, and from oneself - these are the three ways anything is accomplished; and everywhere, this belongs to effort, never at all to fate.

शास्त्र से, गुरु से, और खुद से - सिद्धि पाने के ये तीन ही रास्ते हैं; और हर जगह यह प्रयत्न से ही मिलती है, भाग्य से कभी नहीं।

2.7.12

अशुभेषु समाविष्टं शुभेष्वेवावतारयेत्प्रयत्नाच्चित्तमित्येष सर्वशास्त्रार्थसंग्रहः ॥ १२ ॥

aśubheṣu samāviṣṭaṁ śubheṣvevāvatārayetprayatnācittamityeṣa sarvaśāstrārthasaṁgrahaḥ || 12 ||

The mind that has fallen into bad things should be steered, through effort, into good things alone - this is the whole essence of what all the scriptures teach.

जो मन बुरी बातों में उलझ गया हो, उसे प्रयत्न के ज़रिए सिर्फ अच्छी बातों की ओर मोड़ देना चाहिए - यही सारे शास्त्रों की सीख का सार है।

2.7.13

यच्छ्रेयो यदतुच्छं च यदपायविवर्जितमत्तदाचर यत्नेन पुत्रेति गुरवः स्थिताः ॥ १३ ॥

yacchreyo yadatucchaṁ ca yadapāyavivarjitamtattadācara yatnena putreti guravaḥ sthitāḥ || 13 ||

Whatever is truly good, whatever is not trifling, and whatever brings no harm - do just that, through effort, my son - this is what the elders have always taught.

जो सचमुच अच्छा हो, जो तुच्छ न हो, और जिसमें कोई नुकसान न हो, बेटा, वही काम प्रयत्न से करो - गुरुजन हमेशा से यही सिखाते आए हैं।

2.7.14

यथा यथा प्रयत्नो मे फलमाशु तथा तथाइत्यहं पौरुषादेव फलभाङ् न तु दैवतः ॥ १४ ॥

yathā yathā prayatno me phalamāśu tathā tathāityahaṁ pauruṣādeva phalabhāṅ na tu daivataḥ || 14 ||

The more effort I make, the sooner the result comes - so I get results only through effort, never through fate.

जितना ज़्यादा मैं प्रयत्न करता हूँ, उतनी ही जल्दी फल मिलता है - इस तरह मुझे फल सिर्फ प्रयत्न से मिलता है, भाग्य से कभी नहीं।

2.7.15

पौरुषादृश्यते सिद्धिः पौरुषाद्धीमतां क्रमः दैवमाश्वासनामात्रं दुःखे पेलवबुद्धिषु ॥ १५ ॥

pauruṣādṛśyate siddhiḥ pauruṣāddhīmatāṁ kramaḥ daivamāśvanāmātraṁ duḥkhe pelavabuddhiṣu || 15 ||

Success is seen to come from effort, and the progress of the wise, too, comes from effort. Fate is only something for weak-minded people to lean on for comfort when they are in pain.

सफलता प्रयत्न से ही मिलती दिखती है; समझदार लोगों की तरक्की भी प्रयत्न से ही होती है। भाग्य तो बस कमज़ोर दिमाग वाले लोगों के लिए दुख में मन बहलाने का एक सहारा भर है।

2.7.16

प्रत्यक्षप्रमुखैर्नित्यं प्रमाणैः पौरुषक्रमः फलितो दृश्यते लोके देशान्तरगमादिकः ॥ १६ ॥

pratyakṣapramukhairnityaṁ pramāṇaiḥ pauruṣakramaḥ phalito dṛśyate loke deśāntaragamādikaḥ || 16 ||

Through evidence, direct perception first of all, we can always see in the world that the working of effort bears fruit - for example, when someone travels from one place to another, and so on.

प्रत्यक्ष जैसे प्रमाणों से यह हमेशा साफ दिखता है कि प्रयत्न का सिलसिला फल देता है - जैसे किसी का एक जगह से दूसरी जगह जाना, वगैरह।

2.7.17

भोक्ता तृप्यति नाभोक्ता गन्ता गच्छति नागतिःवक्ता वक्ति न चावक्ता पौरुषं सफलं नृणाम् ॥ १७ ॥

bhoktā tṛpyati nābhoktā gantā gacchati nāgatiḥvaktā vakti na cāvaktā pauruṣaṁ saphalaṁ nṛṇām || 17 ||

The one who eats is satisfied, not the one who does not eat. The one who walks reaches somewhere, not the one who does not walk. The one who speaks says something, not the one who stays silent. Effort is what bears fruit for people.

जो खाता है, वही तृप्त होता है, जो नहीं खाता वह नहीं। जो चलता है, वही कहीं पहुँचता है, जो नहीं चलता वह नहीं। जो बोलता है, वही कुछ कहता है, जो नहीं बोलता वह नहीं। इंसानों के लिए फल तो प्रयत्न से ही मिलता है।

2.7.18

पौरुषेण दुरन्तेभ्यः संकटेभ्यः सुबुद्धयःसमुत्तरन्त्ययत्नेन न तु मोघतयानया ॥ १८ ॥

pauruṣeṇa durantebhyaḥ saṁkatebhyaḥ subuddhayaḥsamuttarantyaayatnena na tu moghatayānaya || 18 ||

Through effort, wise people cross over even endless dangers with ease - and that ease is not for nothing.

प्रयत्न के दम पर समझदार लोग बड़ी-बड़ी अंतहीन मुसीबतों को भी आसानी से पार कर जाते हैं - और यह आसानी यँ ही नहीं मिलती।

2.7.19

यो यो यथा प्रयतते स स तत्तत्फलैकभाक्त्र तु तूष्णीं स्थितेनेह केनचित्प्राप्यते फलम् ॥ १९ ॥

yo yo yathā prayatate sa sa tattatphalaikabhākna tu tūṣṇīm sthiteneha kenacitprāpyate phalam || 19 ||

Whoever makes effort, in whatever way, is the one who gets that particular result. No one who simply sits still gets any result at all.

जो जैसा प्रयत्न करता है, उसे वैसा ही फल मिलता है। जो चुपचाप बैठा रहता है, उसे कोई फल कभी नहीं मिलता।

2.7.20

शुभेन पुरुषार्थेन शुभमासाद्यते फलमशुभेनाशुभं राम यथेच्छसि तथा कुरु ॥ २० ॥

śubhena puruṣārthēna śubhamāsādyate phalamashubhenāśubhaṁ rāma yatheccchasi tathā kuru || 20 ||

Good effort brings a good result, and bad effort brings a bad result. Now, Rama, do as you please.

शुभ प्रयत्न से शुभ फल मिलता है, और अशुभ प्रयत्न से अशुभ फल। अब हे राम, जैसी तुम्हारी इच्छा हो, वैसा करो।

2.7.21

पुरुषार्थात्फलप्राप्तिर्देशकालवशादिहप्राप्ता चिरेण शीघ्रं वा यासौ दैवमिति स्मृता ॥ २१ ॥

puruṣārthātphalaprāptirdeśakālavāśādihaprāptā cireṇa śīghraṁ vā yāsau daivamiti smṛtā || 21 ||

The result comes from effort, but depending on place and time it comes slowly or quickly - and it is this that is called fate.

फल तो प्रयत्न से ही मिलता है, पर देश और काल के हिसाब से वह कभी देर से मिलता है, कभी जल्दी - बस इसी को भाग्य कहा जाता है।

2.7.22

न दैवं दृश्यते दृष्ट्या न च लोकान्तरे स्थितमुक्तं दैवाभिधानेन स्वर्लोके कर्मणः फलम् ॥ २२ ॥

na daivaṁ dṛśyate dṛṣṭyā na ca lokāntare sthitamuktaṁ daivābhidhānena svarloke karmaṇaḥ phalam || 22 ||

Fate cannot be seen with the eyes, nor does it sit as something in another world. What goes by the name fate is simply the fruit of one's own actions, to be had in the heavenly world.

भाग्य को आँखों से देखा नहीं जा सकता, और वह किसी दूसरी दुनिया में कोई ठोस चीज़ बनकर बैठा भी नहीं है। जिसे भाग्य कहा जाता है, वह असल में अपने ही कर्मों का फल है, जो स्वर्गलोक में मिलता है।

2.7.23

पुरुषो जायते लोके वर्धते जीर्यते पुनः न तत्र दृश्यते दैवं जरायौवनबाल्यवत् ॥ २३ ॥

puruṣo jāyate loka vardhate jīryate punaḥ na tatra dṛśyate daivaṃ jarāyauvanabālyavat || 23 ||

A person is born into the world, grows up, and then grows old - and in all this, no fate is to be seen, any more than there is some separate cause behind childhood, youth, and old age.

इंसान इस दुनिया में जन्म लेता है, बड़ा होता है और फिर बूढ़ा होता है - इस पूरे सिलसिले में कहीं कोई अलग से भाग्य नहीं दिखता, ठीक वैसे ही जैसे बचपन, जवानी और बुढ़ापे के पीछे भी कोई अलग भाग्य नहीं होता।

2.7.24

अर्थप्रापककार्यैकप्रयत्नपरता बुधैः प्रोक्ता पौरुषशब्देन सर्वमासाद्यतेऽनया ॥ २४ ॥

arthaprāpakakāryaikaṣrayatnaparatā budhaiḥ proktā pauruṣaśabdena sarvamāsādyate'nyā || 24 ||

A steady, single-minded effort directed at the one action that achieves one's purpose - this is what the wise mean by the word effort, and everything is gained through it.

अपने मकसद को पाने वाले काम में एकाग्र होकर लगातार किया गया प्रयत्न - समझदार लोग इसी को पुरुषार्थ कहते हैं; और इसी से सब कुछ हासिल होता है।

2.7.25

देशादेशान्तरप्राप्तिर्हस्तस्य द्रव्यधारणम्व्यापारश्च तथाङ्गानां पौरुषेण न दैवतः ॥ २५ ॥

deśāddeśāntaraprāptirhastasya dravyadhāraṇamvyāpāraśca tathāṅgānāṃ pauruṣeṇa na daivataḥ || 25 ||

Travelling from one place to another, the hand grasping an object, and the movement of the body's limbs - all of this happens through effort, not through fate.

एक जगह से दूसरी जगह पहुँचना, हाथ का किसी चीज़ को पकड़ना, और शरीर के अंगों का हिलना-डुलना - यह सब प्रयत्न से होता है, भाग्य से नहीं।

2.7.26

अनर्थप्राप्तिकार्यैकप्रयत्नपरता तु याप्रोक्ता प्रोन्मत्तचेष्टेति न किञ्चित्प्राप्यतेऽनया ॥ २६ ॥

anarthaprāptikāryaikaṣrayatnaparatā tu yāproktā pronmattaceṣṭeti na kiñcitprāpyate'nyā || 26 ||

But when that same single-minded effort is put into an action that only brings harm, it is called the behaviour of a madman - nothing at all is gained by it.

लेकिन वही एकाग्र प्रयत्न अगर नुकसान पहुँचाने वाले काम में लगाया जाए, तो उसे पागलपन का व्यवहार कहा जाता है - और उससे कुछ भी हासिल नहीं होता।

2.7.27

क्रियया स्पन्दधर्मिण्या स्वार्थसाधकता स्वयंसाधुसंगमसच्छास्त्रतीक्ष्णयोन्नीयते धिया ॥ २७ ॥

kriyayā spandadharmiṇyā svārthasādhakatā svayamsādhusaṅgamasacchāstratīkṣṇayonnīyate dhiyā || 27 ||

Through action that involves real movement and exertion, the ability to achieve one's own good develops on its own - and it grows sharper with the intelligence gained from the company of good people and true teachings.

हलचल-भरे यानी सक्रिय काम के ज़रिए अपने हित को पाने की क्षमता खुद-ब-खुद बढ़ती है - और अच्छे लोगों की संगति और सच्चे शास्त्रों से मिलने वाली तीखी समझ से यह और निखर जाती है।

2.7.28

अनन्तसमतानन्दं परमार्थं स्वकं विदुःस येभ्यः प्राप्यते यत्नात्सेव्यास्ते शास्त्रसाधवः ॥ २८ ॥

anantasamatānandaṁ paramārthaṁ svakaṁ viduḥsa yebhyaḥ prāpyate yatnātsevyāste śāstrasādhavaḥ || 28 ||

They know the endless bliss of perfect evenness as their own highest truth; and those good, scripture-knowing people through whom this is gained by effort should be served.

वे समता के अनंत आनंद को ही अपना सबसे बड़ा सत्य मानते हैं; और जिन शास्त्रज्ञ सज्जनों से यह प्रयत्नपूर्वक मिलता है, उनकी सेवा करनी चाहिए।

2.7.29

सच्छास्त्रादिगुणो मत्या सच्छास्त्रादिगुणान्मतिःविवर्धते मिथोऽभ्यासात्सरोजाविव कालतः ॥ २९ ॥

sacchāstrādiguṇo matyā sacchāstrādiguṇānmatihvivardhete mitho'bhyāsātsarojāviva kālataḥ || 29 ||

The virtue found in true teachings grows through the mind, and the mind grows through the virtue found in true teachings; the two grow together through practice, like two lotuses growing together over time.

सच्चे शास्त्रों का गुण बुद्धि से बढ़ता है, और बुद्धि सच्चे शास्त्रों के गुण से बढ़ती है; ये दोनों अभ्यास से आपस में साथ-साथ बढ़ते हैं, जैसे समय के साथ दो कमल साथ-साथ खिलते हैं।

2.7.30

आबाल्यादलमभ्यस्तैः शास्त्रसत्संगमादिभिःगुणैः पुरुषयत्नेन स्वार्थः संपद्यते हितः ॥ ३० ॥

ābālyādalamabhyastaiḥ śāstrasatsaṁgamādibhiḥguṇaiḥ puruṣayatnena svārthaḥ saṁpadyate hitaḥ || 30 ||

By practising, from childhood on, virtues such as studying true teachings and keeping the company of good people, and through one's own effort, one's real good is achieved.

बचपन से ही शास्त्र-अध्ययन और अच्छे लोगों की संगति जैसे गुणों का भरपूर अभ्यास करके, और अपने प्रयत्न से ही इंसान का सच्चा हित सिद्ध होता है।

2.7.31

पौरुषेण जिता दैत्याः स्थापिता भुवनक्रियाःरचितानि जगन्तीह विष्णुना न च दैवतः ॥ ३१ ॥

pauruṣeṇa jītā daityāḥ sthāpitā bhuvanakriyāḥrakitāni jagantiha viṣṇunā na ca daivataḥ || 31 ||

It was through effort that Vishnu conquered the demons, set up the workings of the universe, and fashioned the worlds here - not through fate.

विष्णु ने प्रयत्न से ही दैत्यों को जीता, संसार के कामकाज को स्थापित किया, और यहाँ लोकों की रचना की - भाग्य से नहीं।

2.7.32

जगति पुरुषकारकारणेऽस्मिन् कुरु रघुनाथ चिरं तथा प्रयत्नम्व्रजसि तरुसरीसृपाभिधानां सुभग यथा न दशमशङ्क एव ॥ ३२ ॥

jagati puruṣakāraḥkārāṇe'smin kuru raghunātha ciram tathā prayatnamvrajasi tarusarīsṛpābhidhānāṁ subhaga yathā na daśāmaśaṅka eva || 32 ||

In this world, where human effort is the real cause of everything, keep up such effort for a long time, Raghunatha, so that you never fall, fortunate one, without a doubt, into a state such as that of a tree or a crawling reptile.

इस दुनिया में, जहाँ हर चीज़ का असली कारण इंसान का अपना प्रयत्न ही है, हे रघुनाथ, लंबे समय तक ऐसा ही प्रयत्न करते रहो, ताकि तुम कभी, हे सौभाग्यशाली, पेड़ या रेंगने वाले जीव जैसी नीच योनि में न गिरो - इसमें कोई शक नहीं।

Chapter 8

2.8.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । नाकृतिर्न च कर्माणि न स्पन्दो न पराक्रमः । तन्मिथ्याज्ञानवद्रूढं दैवं नाम किमुच्यते ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | nākṛtirna ca karmāṇi na spando na parākramaḥ | tanmithyājñānavadrūḍhaṁ daivaṁ nāma kimucyate || 1 ||

Sri Vasishtha said: Fate is not a shape, not an action, not a movement, not a strength. So what is this thing called "fate," fixed in people's minds like a wrong belief that has taken root?

श्री वसिष्ठ बोले, भाग्य न कोई आकार है, न कोई काम है, न कोई हलचल है, न कोई ताकत है। तो फिर यह "भाग्य" नाम की चीज़ क्या है, जो लोगों के मन में एक गलत सोच की तरह जम गई है?

2.8.2

स्वकर्मफलसंप्राप्ताविदमित्थमितीति याः । गिरस्ता दैवनाम्नैताः प्रसिद्धिं समुपागताः ॥ २ ॥

svakarmaphalasamprāptāvidamitthamitīti yāḥ | girastā daivanāmnaiḥtāḥ prasiddhiṁ samupāgatāḥ || 2 ||

When the result of one's own past action comes, people say, "This happened this way" — these very words have come to be called by the name "fate."

जब अपने ही पुराने किए काम का फल मिलता है, तो लोग कहते हैं, "यह ऐसे ही हुआ" — इन्हीं शब्दों को "भाग्य" नाम दे दिया गया है।

2.8.3

तत्रैव मूढमतिभिर्दैवमस्तीति निश्चयः । आत्तो दुरवबोधेन रज्ज्वामिव भुजंगमः ॥ ३ ॥

tatraiva mūḍhamatibhirdaivamastīti niścayaḥ | ātto duravabodhena rajjvāmiva bhujaṅgamaḥ || 3 ||

It is right there that foolish minds have become sure that fate exists — grasped through a lack of understanding, like a snake seen in a rope.

यहीं पर मूर्ख लोगों को यह पक्का यकीन हो गया है कि भाग्य है — यह समझ की कमी से पकड़ी गई बात है, जैसे रस्सी में साँप दिख जाए।

2.8.4

ह्यस्तनी दुष्क्रियाभ्येति शोभां सत्क्रियया यथा । अद्यैवं प्राक्तनी तस्माद्यत्नात्सत्कार्यवान्भवेत् ॥ ४ ॥

hyastanī duṣkriyābhyeti śobhāṁ satkriyayā yathā | adyaivaṁ prāktanī tasmādyatnātsatkāryavānbhavet || 4 ||

Just as a bad deed done yesterday can turn to good through a good deed, so a deed done before can turn to good today in the same way. So one should make the effort to do good deeds.

जैसे कल का बुरा काम आज के अच्छे काम से अच्छा बन सकता है, वैसे ही पहले किया गया काम भी आज उसी तरह अच्छा बन सकता है।

इसलिए मेहनत करके अच्छे काम करने चाहिए।

2.8.5

दैवमेवेह चेत्कर्तुं पुंसः किमिव चेष्टया । स्नानदानासनोच्चारान्दैवमेव करिष्यति ॥ ६ ॥

daivameveha cetkartuṁ puṁsaḥ kimiva ceṣṭayā | snānadānāsanoccārāndaivameva kariṣyati || 6 ||

If fate alone did everything here, what use would a man's effort be? Then fate alone would have to do the bathing, the giving, the sitting, and the passing of stool!

अगर यहाँ सब कुछ भाग्य ही करता, तो आदमी की मेहनत का क्या फायदा? फिर तो नहाना, दान देना, बैठना और शौच जाना — यह सब भाग्य को ही करना पड़ता!

2.8.6

किंवा शास्त्रोपदेशेन मूकोऽयं पुरुषः किल । संचार्यते तु दैवेन किं कस्येहोपदिश्यते ॥ ७ ॥

kiṃvā śāstropadeśena mūko'yaṃ puruṣaḥ kila | saṃcāryate tu daivena kiṃ kasyehopadiśyate || 7 ||

Or what use is the teaching of the scriptures? This man is like someone mute, and is only moved about by fate — so then what is being taught, and to whom, here?

या फिर शास्त्रों की शिक्षा का क्या फायदा? यह आदमी तो जैसे गूँगा है, और उसे भाग्य ही चला रहा है — तो फिर यहाँ किसे क्या सिखाया जा रहा है?

2.8.7

न च निस्पन्दता लोके दृष्टेह शवतां विना । स्पन्दाच्च फलसंप्राप्तिस्तस्माद्दैवं निरर्थकम् ॥ ८ ॥

na ca nispanadatā loke dṛṣṭeḥa śavatāṃ vinā | spandācca phalasaṃprāptistasmāddaivaṃ nirarthakam || 8 ||

In this world, no stillness is ever seen except in a dead body. And the result of any action comes only through movement. So fate is of no use at all.

इस दुनिया में मुर्दे के सिवा कहीं भी पूरी तरह रुकना नहीं दिखता। और काम का फल मिलता है हलचल से ही। इसलिए भाग्य किसी काम का नहीं है।

2.8.8

न च निस्पन्दता लोके दृष्टेह शवतां विनास्पन्दाच्च फलसंप्राप्तिस्तस्माद्दैवं निरर्थकम् ॥ ८ ॥

na ca nispanadatā loke dṛṣṭeḥa śavatāṃ vināspandācca phalasaṃprāptistasmāddaivaṃ nirarthakam || 8 ||

In this world, no stillness is ever seen except in a dead body. And the result of any action comes only through movement. So fate is of no use at all.

इस दुनिया में मुर्दे के सिवा कहीं भी पूरी तरह रुकना नहीं दिखता। और काम का फल मिलता है हलचल से ही। इसलिए भाग्य किसी काम का नहीं है।

2.8.9

मिथोऽङ्गानि समासाद्य द्वयोरेकैककर्तृता । हस्तादीनां हतत्वे ह न दैवेन क्वचित्कृतम् ॥ १० ॥

mitho'ṅgāni samāsādya dvayorekaikakarṭṛtā | hastādīnāṃ hatatve ha na daivena kvacitkṛtam || 10 ||

When two limbs come together and act on each other, each one is its own doer — when the hands and other limbs strike and get hurt, this is never done by fate at all.

जब दो अंग आपस में मिलकर एक-दूसरे पर काम करते हैं, तो हर एक अपने आप में करने वाला होता है — जब हाथ वगैरह आपस में टकराकर चोट खाते हैं, तो यह भाग्य कभी नहीं करता।

2.8.10

मिथोऽङ्गानि समासाद्य द्वयोरेकैककर्तृता हस्तादीनां हतत्वे ह न दैवेन क्वचित्कृतम् ॥ १० ॥

mitho'ṅgāni samāsādya dvayorekaikakarṭṛtāhastādīnāṃ hatatve ha na daivena kvacitkṛtam || 10 ||

When two limbs come together and act on each other, each one is its own doer — when the hands and other limbs strike and get hurt, this is never done by fate at all.

जब दो अंग आपस में मिलकर एक-दूसरे पर काम करते हैं, तो हर एक अपने आप में करने वाला होता है — जब हाथ वगैरह आपस में टकराकर चोट खाते हैं, तो यह भाग्य कभी नहीं करता।

2.8.11

मनोबुद्धिवदप्येतद्वैवं नेहानुभूयते । आगोपालं कृतप्रज्ञैस्तेन दैवमसत्सदा ॥ ११ ॥

manobuddhivadapyetaddaivam nehanubhūyate | āgopālaṃ kṛtaprajñāisten daivamasatsadā || 11 ||

Unlike the mind and the intellect, this thing called fate is never actually felt by anyone here. So, down to the cowherd, all who have some understanding know that fate is never real.

मन और बुद्धि की तरह यह "भाग्य" कभी किसी को महसूस नहीं होता। इसलिए गोपाल तक, जिस किसी को भी थोड़ी समझ है, वह जानता है कि भाग्य कभी सच नहीं है।

2.8.12

पृथक्चेद्बुद्धिरन्योऽर्थः सैव चेत्कान्यता तयोः । कल्पनायां प्रमाणं चेत्यौरुषं किं न कल्प्यते ॥ १२ ॥

prṭhakcedbuddhiranyo'rthaḥ saiva cetkānyatā tayoh | kalpanāyāṃ pramāṇaṃ cetpauruṣaṃ kiṃ na kalpyate || 12 ||

If fate is a thing separate from the intellect, then it is something else entirely. And if it is the very same as the intellect, then what difference is there between the two? And if mere imagination is enough proof for you, then why not accept self-effort the same way?

अगर भाग्य बुद्धि से अलग कोई चीज़ है, तो वह बिल्कुल ही अलग चीज़ हुई। और अगर वह बुद्धि के बराबर ही है, तो फिर दोनों में फर्क ही क्या रहा? और अगर सिर्फ कल्पना को ही काफी सबूत मान लिया जाए, तो फिर मेहनत को भी उसी तरह क्यों न मान लिया जाए?

2.8.13

नामूर्तेस्तेन सङ्गोऽस्ति नभसेव वपुष्मतः । मूर्तं च दृश्यते लग्नं तस्माद्वैवं न विद्यते ॥ १३ ॥

nāmūrtes tena saṅgo'sti nabhaseva vapuṣmataḥ | mūrtaṃ ca dṛśyate lagnaṃ tasmāddaivam na vidyate || 13 ||

A thing without a shape cannot touch a body, just as empty space cannot touch a body. But what we see actually joined to us and acting on us has a shape. So fate does not exist.

जिस चीज़ का कोई आकार नहीं, वह शरीर को छू नहीं सकती, जैसे खाली आकाश शरीर को नहीं छू सकता। पर जो चीज़ हमसे जुड़कर असर डालती दिखती है, उसका आकार होता है। इसलिए भाग्य है ही नहीं।

2.8.14

विनियोक्रथ भूतानामस्त्यन्यच्चेज्जगत्त्रये । शेरते भूतवृन्दानि दैवं सर्वं करिष्यति ॥ १४ ॥

viniyokratha bhūtānām astyanyaccej jagattraye | śerate bhūtavṛndāni daivam sarvaṃ kariṣyati || 14 ||

If there really were, in the three worlds, some other power that controls every being, then let all beings just lie down and do nothing — fate would do everything for them!

अगर तीनों लोकों में सच में कोई और ताकत हो जो हर जीव को चलाती है, तो फिर सब जीव बस लेट जाएँ — भाग्य ही सब कुछ कर देगा!

2.8.15

दैवेन त्वभियुक्तोऽहं तत्करोमीदृशं स्थितम् । समाश्वासनवागेषा न दैवं परमार्थतः ॥ १५ ॥

daiven tvabhiyukto'haṃ tatkaromīdṛśaṃ sthitam | samāśvāsanavāgeṣā na daivam paramārthataḥ || 15 ||

When someone says, "I am driven by fate, so I do this," that is only how it looks from outside. These are only words said to comfort oneself — they are not fate in the true sense.

जब कोई कहता है, "मुझे भाग्य ने ऐसा करने पर मजबूर किया है," तो यह सिर्फ बाहर से ऐसा दिखता है। ये तो बस अपने आपको दिलासा देने वाले शब्द हैं — असल में यह भाग्य नहीं है।

2.8.16

मूढैः प्रकल्पितं दैवं तत्परास्ते क्षयं गताः । प्राज्ञास्तु पौरुषार्थेन पदमुत्तमतां गताः ॥ १६ ॥

mūḍhaiḥ prakalpitam daivam tatparāste kṣayaṃ gatāḥ | prājñāstu pauruṣārtheṇa padamuttamatām gatāḥ || 16 ||

Fate is a thing made up by fools; those who rely on it come to ruin. But wise people, through the power of their own effort, reach the highest place.

भाग्य मूर्खों की बनाई हुई एक बात है; जो उस पर टिके रहते हैं, वे बर्बाद हो जाते हैं। पर समझदार लोग अपनी मेहनत के दम पर सबसे ऊँचे स्थान तक पहुँच जाते हैं।

2.8.17

ये शूरा ये च विक्रान्ता ये प्राज्ञा ये च पण्डिताः । तैस्तैः किमिव लोकेऽस्मिन्वद दैवं प्रतीक्ष्यते ॥ १७ ॥

ye śūrā ye ca vikrāntā ye prājñā ye ca paṇḍitāḥ | taiḥtaiḥ kimiva loke'sminvada daivam pratīkṣyate || 17 ||

Tell me, in this world, do brave men, mighty men, wise men, and learned men — any of them — ever sit and wait for fate?

बताओ, इस दुनिया में बहादुर लोग, ताकतवर लोग, समझदार लोग और पढ़े-लिखे लोग — इनमें से कोई भी — क्या कभी बैठकर भाग्य का इंतज़ार करता है?

2.8.18

कालविद्धिर्विनिर्णीता यस्यातिचिरजीविता । स चेज्जीवति संचिन्नशिवास्तदैवमुत्तमम् ॥ १८ ॥

kālaviddhīrvinirṇītā yasyāticirajīvītā | sa cejjīvati saṁchinnashirāstaddaivamuttamam || 18 ||

If astrologers who know the movement of time have decided that a man's life will be very long, and he still lives on even with his head cut off — then fate would truly be supreme.

अगर समय की गणना जानने वाले ज्योतिषियों ने तय किया हो कि किसी आदमी की उम्र बहुत लंबी है, और उसका सिर कटने के बाद भी वह जीवित रहे — तभी भाग्य को सबसे बड़ा माना जा सकता है।

2.8.19

कालविद्धिर्विनिर्णीतं पाण्डित्यं यस्य राघव । अनध्यापित एवासौ तज्ज्ञश्चेद्वैवमुत्तमम् ॥ १९ ॥

kālaviddhīrvinirṇītam paṇḍityam yasya rāghava | anadhyāpita evāsau tajjñāśceddaivamuttamam || 19 ||

Raghava, if astrologers who know the movement of time have decided that a man will be very learned, and he becomes learned in that subject without ever being taught — then fate would truly be supreme.

राघव, अगर समय की गणना जानने वाले ज्योतिषियों ने तय किया हो कि कोई आदमी बहुत विद्वान बनेगा, और वह बिना कभी पढ़ाए ही उस विषय में विद्वान बन जाए — तभी भाग्य को सबसे बड़ा माना जा सकता है।

2.8.20

विश्वामित्रेण मुनिना दैवमुत्सृज्य दूरतः । पौरुषेणैव संप्राप्तं ब्राह्मण्यं राम नान्यथा ॥ २० ॥

viśvāmitreṇa muninā daivamutsṛjya dūrataḥ | pauruṣeṇaiva saṁprāptam brāhmaṇyam rāma nānyathā || 20 ||

Rama, the sage Vishvamitra threw fate far away and became a Brahmin only through his own effort — not in any other way.

राम, ऋषि विश्वामित्र ने भाग्य को दूर फेंककर सिर्फ अपनी मेहनत से ब्राह्मण बनने का दर्जा पाया — किसी और तरीके से नहीं।

2.8.21

अस्माभिरपरै राम पुरुषैर्मुनितां गतैः । पौरुषेणैव संप्राप्ता चिरं गगनगामिता ॥ २१ ॥

asmābhiraparai rāma puruṣairmunitāṃ gataiḥ | pauruṣeṇaiva saṃprāptā ciram gaganagāmitā || 21 ||

Rama, I myself and other men who became sages gained, long ago, the power to move through the sky only through our own effort.

राम, मैंने और दूसरे लोगों ने भी, जो ऋषि बने, बहुत पहले सिर्फ अपनी मेहनत से आकाश में उड़ने की शक्ति पाई थी।

2.8.22

उत्साद्य देवसंघातं चक्रुस्त्रिभुवनोदरे । पौरुषेणैव यत्नेन साम्राज्यं दानवेश्वराः ॥ २२ ॥

utsādy devasaṃghātaṃ cakruṣtribhuvanodare | pauruṣeṇaiva yatnena sāmrajyaṃ dānaveśvarāḥ || 22 ||

By destroying the group of gods, the lords of the demons built their empire inside the three worlds only through their own effort and hard work.

देवताओं के समूह को हराकर, दानवों के राजाओं ने तीनों लोकों में अपना राज्य सिर्फ अपनी मेहनत और कोशिश से खड़ा किया।

2.8.23

आलूनशीर्णमाभोगि जगदाजहुरोजसा । पौरुषेणैव यत्नेन दानवेभ्यः सुरेश्वराः ॥ २३ ॥

ālūnaśīrṇamābhogi jagadājahurojasā | pauruṣeṇaiva yatnena dānavebhyaḥ sureśvarāḥ || 23 ||

The lords of the gods took the rich world back from the demons — even after it was cut apart and torn to pieces — by their own strength, through effort and hard work alone.

देवताओं के राजाओं ने इस भरी-पूरी दुनिया को दानवों से वापस ले लिया — भले ही वह तोड़ी-फोड़ी और बिखरी हुई थी — अपनी ताकत से, सिर्फ मेहनत और कोशिश के दम पर।

2.8.24

राम पौरुषयुक्त्या च सलिलं धार्यतेऽनया । चिरं करण्डके चारु न दैवं तत्र कारणम् ॥ २४ ॥

rāma pauruṣayuktyā ca salilaṃ dhāryate'anyā | ciram karaṇḍake cāru na daivam tatra kāraṇam || 24 ||

Rama, by a method that comes from human effort, water is kept beautifully in a basket for a long time — fate is not the reason for that.

राम, इंसान की मेहनत से बनी एक तरकीब से पानी को टोकरी में बड़ी अच्छी तरह से लंबे समय तक रोका जा सकता है — इसकी वजह भाग्य नहीं है।

2.8.25

भरणादानसंरम्भविभ्रमश्रमभूमिषु । शक्तता दृश्यते राम न दैवस्यौषधेरिव ॥ २५ ॥

bharaṇādānasamrambhavibhramaśramabhūmiṣu | śaktatā dṛśyate rāma na daivasyaauśadheriva || 25 ||

Rama, in feeding a family, earning, starting new work, moving about, and hard labor, the power that shows itself is the power of effort — the way a medicine shows its power — not the power of fate.

राम, परिवार पालने में, कमाने में, नया काम शुरू करने में, चलने-फिरने में और मेहनत करने में, जो ताकत दिखती है वह मेहनत की ताकत है — जैसे दवा अपना असर दिखाती है — भाग्य की ताकत नहीं।

सकलकारणकार्यविवर्जितं निजविकल्पवशादुपकल्पितम् । त्वमनपेक्ष्य हि दैवमसन्मयं श्रय शुभाशय पौरुषमुत्तमम् ॥ २६ ॥

*sakalakāraṇakāryavivarjitam nijavikalpavaśādupakalpitaṃ | tvamanapekṣya hi daivamasanmayam śraya
śubhāśaya pauruṣamuttamam || 26 ||*

Fate has no real cause and no real effect; it is only something made up under the power of one's own imagination. So, good-hearted one, without relying on this fate, which is completely unreal, hold on to the best thing there is — self-effort.

भाग्य का न कोई सच्चा कारण है, न कोई सच्चा नतीजा; यह तो बस अपनी ही कल्पना के दम पर बनाई गई एक बात है। इसलिए, हे भले मन वाले, इस पूरी तरह झूठे भाग्य पर भरोसा किए बिना, सबसे बढ़िया चीज़ यानी अपनी मेहनत को थाम लो।

Chapter 9

2.9.1

श्रीराम उवाच । भगवन्तत्त्वधर्मज्ञ प्रतिष्ठामलमागतम् । यल्लोके तद्वद् ब्रह्मन्दैव नाम किमुच्यते ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | bhagavantatvadharmājña pratiṣṭhāmalamāgatam | yallope tadvad brahmandaiva nāma kimucyate || 1 ||

Sri Rama said: Lord, you know the true nature of right conduct — this thing that has become so firmly known in the world, tell me that, Brahmin: what is this called "fate"?

श्री राम बोले, हे भगवन, आप धर्म का असली रूप जानने वाले हैं — जो बात दुनिया में इतनी मशहूर हो गई है, वह मुझे बताइए, हे ब्राह्मण: यह जो "भाग्य" कहलाता है, वह क्या है?

2.9.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । पौरुषं सर्वकार्याणां कर्तृ राघव नेतरत् । फलभोक्तृ च सर्वत्र न दैवं तत्र कारणम् ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | pauruṣaṁ sarvakāryāṇāṁ kartṛ rāghava netarat | phalabhoktr ca sarvatra na daivaṁ tatra kāraṇam || 2 ||

Sri Vasishtha said: Raghava, self-effort is the doer of all deeds, nothing else. And it is self-effort that gets the result everywhere — fate is not the reason for it.

श्री वसिष्ठ बोले, राघव, हर काम को करने वाली सिर्फ मेहनत है, और कुछ नहीं। और हर जगह फल भी मेहनत को ही मिलता है — इसकी वजह भाग्य नहीं है।

2.9.3

दैवं न किञ्चित्कुरुते न भुङ्क्ते न च विद्यते । न दृश्यते नाद्रियते केवलं कल्पनेदृशी ॥ ३ ॥

daivaṁ na kiñcitkurate na bhuñkte na ca vidyate | na drśyate nādriyate kevalaṁ kalpanedṛśī || 3 ||

Fate does nothing at all, gets nothing at all, and does not even exist. It is not seen, and it is not respected — it is only a made-up idea of this kind.

भाग्य कुछ भी नहीं करता, कुछ भी नहीं पाता, और है भी नहीं। यह न दिखता है, न इसे कोई मानता है — यह तो बस इस तरह की एक बनाई हुई सोच है।

2.9.4

सिद्धस्य पौरुषेणेह फलस्य फलशालिना । शुभाशुभार्थसंपत्तिर्दैवशब्देन कथ्यते ॥ ४ ॥

siddhasya pauruṣeṇeha phalasya phalaśālinā | śubhāśubhārthasampattirdaivaśabdena kathyate || 4 ||

Here, when effort succeeds and bears fruit, the good or bad result that comes about is what people call by the word "fate."

यहाँ जब मेहनत सफल होकर फल देती है, तो जो अच्छा या बुरा नतीजा निकलता है, उसी को लोग "भाग्य" कहते हैं।

2.9.5

पौरुषोपनता नित्यमिष्टानिष्टस्य वस्तुनः । प्राप्तिरिष्टाप्यनिष्टा वा दैवशब्देन कथ्यते ॥ ५ ॥

pauruṣopanatā nityamiṣṭāniṣṭasya vastunaḥ | prāptiriṣṭāpyaniṣṭā vā daivaśabdena kathyate || 5 ||

Getting a wanted or an unwanted thing always comes through effort — whether the result is wanted or unwanted, it is what people call by the word "fate."

चाही या अनचाही चीज़ हमेशा मेहनत से ही मिलती है — चाहे नतीजा अच्छा लगे या बुरा, उसी को लोग "भाग्य" कहते हैं।

2.9.6

भावी त्ववश्यमेवार्थः पुरुषार्थैकसाधनः । यः सोऽस्मिँल्लोकसंघाते दैवशब्देन कथ्यते ॥ ६ ॥

bhāvī tvavaśyamevārthaḥ puruṣārthaikasādhanaḥ | yaḥ so'smiṅllokasaṅghāte daivaśabdena kathyate || 6 ||

Something that is bound to happen and is brought about only by the means of effort — that very thing, among people in this world, is called by the word "fate."

जो कुछ होना ही है और जो सिर्फ मेहनत के ज़रिए ही होता है — उसी चीज़ को इस दुनिया में लोग "भाग्य" कहते हैं।

2.9.7

ननु राघव लोकस्य कस्यचित्किंचिदेव हि । दैवमाकाशरूपं हि करोति न करोति च ॥ ७ ॥

nanu rāghava lokasya kasyacitkiñcideva hi | daivamākāśarūpaṁ hi karoti na karoti ca || 7 ||

But Raghava, someone might ask: for some person, in some particular matter, does fate — which is as empty as the sky — act, or does it not act?

पर राघव, कोई पूछ सकता है, किसी आदमी के लिए, किसी खास मामले में, क्या भाग्य — जो आकाश जितना खाली है — असर करता है, या नहीं करता?

2.9.8

पुरुषार्थस्य सिद्धस्य शुभाशुभफलोदये । इदमित्थं स्थितमिति योक्तिस्तदैवमुच्यते ॥ ८ ॥

puruṣārthasya siddhasya śubhāśubhaphalodaye | idamitthaṁ sthitamiti yoktistaddaivamucyate || 8 ||

When effort has succeeded and a good or bad result comes about, the saying "this is just how it turned out" — that is what is called "fate."

जब मेहनत सफल हो जाती है और अच्छा या बुरा नतीजा निकलता है, तो यह कहना कि "यह तो बस ऐसे ही हो गया" — इसी को "भाग्य" कहा जाता है।

2.9.9

इत्थं ममाभवद्बुद्धित्थि मे निश्चयो ह्यभूत् । इति कर्मफलप्राप्तौ योक्तिस्तदैवमुच्यते ॥ ९ ॥

itthaṁ mamābhavadbuddhititha me niścayo hyabhūt | iti karmaphalaprāptau yoktistaddaivamucyate || 9 ||

"This is how my thinking was, and this is how my mind was made up" — this kind of talk, said after getting the result of one's action, is what is called "fate."

"मेरी सोच ऐसी थी, और मेरा मन ऐसा बन गया था" — काम का फल मिलने के बाद कही गई इस तरह की बात को ही "भाग्य" कहते हैं।

2.9.10

इष्टानिष्टफलप्राप्ताविदमित्यस्य वाचकम् । आश्वासनामात्रवचो दैवमित्येव कथ्यते ॥ १० ॥

iṣṭāniṣṭaphalaprāptāvidamityasya vācakam | āśvāsanāmātravaco daivamityeva kathyate || 10 ||

When a wanted or an unwanted result comes, the words that say "this is how it is" about it — these are only words said to comfort oneself, and this alone is called "fate."

जब चाहा या अनचाहा नतीजा मिलता है, तो उसके बारे में यह कहना कि "यह तो ऐसा ही है" — ये बस अपने आपको दिलासा देने वाले शब्द हैं, और इसी को "भाग्य" कहा जाता है।

2.9.11

श्रीराम उवाच । भगवन्सर्वधर्मज्ञ यत्प्राक्कर्मोपसंचितम् । तद्देव दैवमित्युक्तमपमृष्ट कथं त्वया ॥ ११ ॥

śrīrāma uvāca | bhagavansarvadharmajña yatprāṅkarmaopasaṁcitam | taddaiva daivamityuktamapamṛṣṭa katham tvayā || 11 ||

Sri Rama said: Lord, you know all right conduct — the action gathered up from before is what is called "fate." How have you wiped that away?

श्री राम बोले, हे भगवन, आप सारे धर्म को जानने वाले हैं — जो काम पहले से इकट्ठा हुआ है, उसी को "भाग्य" कहा जाता है। आपने उसे कैसे मिटा दिया?

2.9.12

श्रीवसिष्ठ उवाच । साधु राघव जानासि शृणु वक्ष्यामि तेऽखिलम् । दैवं नास्तीति ते येन स्थिरा बुद्धिर्भविष्यति ॥ १२ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | sādhu rāghava jānāsi śṛṇu vakṣyāmi te'khilam | daivaṁ nāstīti te yena sthirā buddhirbhaviṣyati || 12 ||

Sri Vasishtha said: Well said, Raghava, you understand well. Listen, I will tell you everything, so that you become firmly sure that fate does not exist.

श्री वसिष्ठ बोले, अच्छा कहा, राघव, तुम अच्छी तरह समझते हो। सुनो, मैं तुम्हें सब कुछ बताऊँगा, ताकि तुम्हें पूरा यकीन हो जाए कि भाग्य है ही नहीं।

2.9.13

या मनोवासना पूर्व बभूव किल भूरिशः । सैवेयं कर्मभावेन नृणां परिणतिं गता ॥ १३ ॥

yā manovāsanaṁ pūrva babhūva kila bhūriśaḥ | saiveyaṁ karmabhāvena nṛṇāṁ pariṇatiṁ gatā || 13 ||

Whatever wish of the mind existed in plenty before, that very same thing has, for human beings, turned into action.

पहले मन में जो इच्छा बहुत ज़्यादा रहती थी, वही इच्छा आदमियों के लिए काम बनकर सामने आती है।

2.9.14

जन्तुर्यद्वासनो राम तत्कर्ता भवति क्षणात् । अन्यकर्मन्यभावश्चेत्येतन्नैवोपपद्यते ॥ १४ ॥

janturyadvāsano rāma tatkartā bhavati kṣaṇāt | anyakarmānyabhāvaścetyetannaivopapadyate || 14 ||

Rama, a creature at once becomes the doer of whatever it has a wish for. That the action would be one thing and the wish behind it another — this simply cannot be true.

राम, कोई भी जीव जिस चीज़ की इच्छा रखता है, उसे करने वाला वह तुरंत बन जाता है। यह बात नहीं हो सकती कि काम कुछ और हो और उसके पीछे की इच्छा कुछ और।

2.9.15

ग्रामगो ग्राममाप्नोति पत्तनार्थी च पत्तनम् । यो यो यद्वासनास्तत्र स स प्रयतते सदा ॥ १५ ॥

grāmagho grāmamāpnoti pattnārthī ca pattanam | yo yo yadvāsanaḥ tatra sa sa prayatate sadā || 15 ||

One heading to a village reaches the village, and one wanting a town reaches the town. Whoever has a wish for a thing always makes the effort to go toward it.

गाँव जाने वाला गाँव पहुँच जाता है, और शहर जाने की इच्छा वाला शहर पहुँच जाता है। जिस किसी को जिस चीज़ की इच्छा होती है, वह उसकी तरफ हमेशा मेहनत करता है।

2.9.16

यदेव तीव्रसंवेगादृढं कर्म कृतं पुरा । तदेव दैवशब्देन पर्यायेणेह कथ्यते ॥ १६ ॥

yadeva tīvrasaṁvegāddṛḍhaṁ karma kṛtaṁ purā | tadeva daivaśabdena paryāyeṇeha kathyate || 16 ||

Whatever firm action was done before, driven by a strong urge, that very thing is here called, under another name, "fate."

पहले जो पक्का काम किसी तेज़ इच्छा से किया गया था, उसी को यहाँ दूसरे नाम से "भाग्य" कहा जाता है।

2.9.17

एवं कर्मस्थकर्माणि कर्मप्रौढा स्ववासना । वासना मनसो नान्या मनो हि पुरुषः स्मृतः ॥ १७ ॥

evaṁ karmasthakarmāṇi karmapraudhā svavāsanā | vāsanā manaso nānyā mano hi puruṣaḥ smṛtaḥ || 17 ||

So one action rests on another action, and one's own wish grows stronger through action. This wish is nothing other than the mind, and the mind is what we call the person.

इस तरह एक काम दूसरे काम पर टिका होता है, और अपनी इच्छा काम करने से और मज़बूत होती जाती है। यह इच्छा मन से अलग कोई चीज़ नहीं है, और मन को ही हम इंसान कहते हैं।

2.9.18

यदैवं तानि कर्माणि कर्म साधो मनो हि तत् । मनो हि पुरुषस्तस्माद्दैव नास्तीति निश्चयः ॥ १८ ॥

yadaivaṁ tāni karmāṇi karma sādho mano hi tat | mano hi puruṣastasmāddaiva nāstīti niścayaḥ || 18 ||

Good man, since those actions are, in this way, actions of the mind, and the mind is that doer, and the mind is the person — so it is settled that fate does not exist.

हे भले इंसान, चूँकि वे सारे काम इस तरह मन के ही काम हैं, और करने वाला मन ही है, और मन ही इंसान है — इसलिए यह पक्का है कि भाग्य है ही नहीं।

2.9.19

एष एव मनोजन्तुर्यद्यत्प्रयतते हितम् । कृतं तत्तदवाप्नोति स्वत एव हि दैवतः ॥ १९ ॥

eṣa eva manojanturyadyatprayatate hitam | kṛtaṁ tattadavāpnoti svata eva hi daivataḥ || 19 ||

This very being that is the mind, whatever good thing it works for, gets exactly that result by itself — this alone is what is truly meant by "fate."

यही जीव जो मन के रूप में है, जिस भली चीज़ के लिए मेहनत करता है, उसे वही नतीजा अपने आप मिल जाता है — असल में इसी को "भाग्य" कहते हैं।

2.9.20

मनश्चित्तं वासना च कर्म दैवं च निश्चयः । राम दुर्निश्चयस्यैताः संज्ञाः सद्भिरुदाहृताः ॥ २० ॥

manaścittaṁ vāsanā ca karma daivaṁ ca niścayaḥ | rāma durniścayasyaitāḥ saṁjñāḥ sadbhirudāhṛtāḥ || 20 ||

Rama, the mind, thought, wish, action, fate, and a fixed idea — the wise say these are all just names for one and the same stubborn, mistaken belief.

राम, मन, सोच, इच्छा, काम, भाग्य, और एक पक्की धारणा — समझदार लोग कहते हैं कि ये सब एक ही ज़िद्दी, गलत सोच के अलग-अलग नाम हैं।

2.9.21

एवंनामा हि पुरुषो दृढभावनया यथा नित्यं प्रयतते राम फलमाप्नोत्यलं तथा ॥ २१ ॥

evaṃnāmā hi puruṣo dṛḍhabhāvanayā yathā nityaṃ prayatate rāma phalamāpnotyalam tathā || 21 ||

Rama, the person who goes by all these names, when he keeps working with a firm resolve, gets the full result of it in the same measure.

राम, यह इंसान जिसे इन सब नामों से जाना जाता है, जब वह पक्के इरादे से लगातार मेहनत करता है, तो उसे उसी हिसाब से पूरा फल मिल जाता है।

2.9.22

एवं पुरुषकारेण सर्वमेव रधूद्वह प्राप्यते नेतरेणेह तस्मात्स शुभदोऽस्तु ते ॥ २२ ॥

evaṃ puruṣakāreṇa sarvameva radhūdvaha prāpyate netareṇeha tasmāt sa śubhado'stu te || 22 ||

So, best of the Raghus, everything here is gained through self-effort alone, and by nothing else. So may that self-effort bring you good.

इसलिए, हे रघुवंश के सबसे बड़े, यहाँ सब कुछ सिर्फ अपनी मेहनत से मिलता है, और किसी और चीज़ से नहीं। तो यही मेहनत तुम्हारे लिए भला करे।

2.9.23

श्रीराम उवाच प्राक्तनं वासनाजालं नियोजयति मां यथा मुने तथैव तिष्ठामि कृपणः किं करोम्यहम् ॥ २३ ॥

śrīrāma uvāca prāktanam vāsanājālam niyojayati māṃ yathā mune tathaiva tiṣṭhāmi kṛpaṇaḥ kiṃ karomya aham || 23 ||

Sri Rama said: Sage, just as the net of my old wishes drives me, so I stay, exactly like that, helpless. What can I do?

श्री राम बोले, हे मुनि, जैसे मेरी पुरानी इच्छाओं का जाल मुझे चलाता है, वैसे ही मैं बना रहता हूँ, बेबस। मैं क्या करूँ?

2.9.24

श्रीवसिष्ठ उवाच अत एव हि राम त्वं श्रेयः प्राप्नोषि शाश्वतम् स्वप्रयत्नोपनीतेन पौरुषेणैव नान्यथा ॥ २४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca ata eva hi rāma tvaṃ śreyah prāpnoṣi śāśvatam svaprayatnopanītena pauruṣeṇaiva nānyathā || 24 ||

Sri Vasishtha said: For this very reason, Rama, you will get lasting good — only through self-effort brought about by your own hard work, not in any other way.

श्री वसिष्ठ बोले, इसी वजह से, राम, तुम्हें हमेशा रहने वाली भलाई मिलेगी — सिर्फ अपनी मेहनत से लाए गए अपने प्रयास से, किसी और तरीके से नहीं।

2.9.25

द्विविधो वासनाव्यूहः शुभश्चैवाशुभश्च ते प्राक्तनो विद्यते राम द्वयोरेकतरोऽथ वा ॥ २५ ॥

dvividho vāsanāvūhaḥ śubhaścaivāśubhaśca te prāktano vidyate rāma dvayorekataro'tha vā || 25 ||

Rama, your store of old wishes is of two kinds, good and bad — or else one of the two is there more than the other.

राम, तुम्हारी पुरानी इच्छाओं का भंडार दो तरह का है, अच्छा और बुरा — या फिर इन दोनों में से एक ज़्यादा है।

2.9.26

वासनौघेन शुद्धेन तत्र चेदद्य नीयसे । तत्क्रमेण शुभेनैव पदप्राप्स्यसि शाश्वतम् ॥ २६ ॥

vāsanaughēna śuddhēna tatra cēdadya nīyasē | tatkrāmēṇa śubhēnaiva padaprāpsyasi śāśvatam || 26 ||

If, in that, you are now carried along by the pure flow of good wishes, then, by that good path, you will reach the lasting state.

अगर उसमें से अच्छी इच्छाओं की साफ धारा तुम्हें आज ले जा रही है, तो उसी अच्छे रास्ते से तुम हमेशा रहने वाली स्थिति पा लोगे।

2.9.27

अथ चेदशुभो भावस्त्वां योजयति संकटे । प्राक्तनस्तदसौ यत्नाज्जेतव्यो भवता बलात् ॥ २७ ॥

atha cēdaśubho bhāvastvāṃ yōjayati saṅkaṭē | prāktanastadasau yatnājjētavyō bhavatā balāt || 27 ||

But if a bad old tendency puts you in trouble, then that must be beaten by you, by force, through effort.

पर अगर कोई पुरानी बुरी आदत तुम्हें मुसीबत में डाल दे, तो उसे तुम्हें ज़ोर लगाकर, मेहनत से हराना होगा।

2.9.28

प्राज्ञश्चेतनमात्रस्त्वं न देहस्त्वं जडात्मकः अन्येन चेतसा तत्ते चेत्यत्वं क्वेव विद्यते ॥ २८ ॥

prājñāścetanamātrastvaṃ na dehastvaṃ jaḍātmaḥanyena cetasā tatte cetyatvaṃ kveva vidyate || 28 ||

You are wise, you are pure awareness alone — you are not the body, which is made of dull, unfeeling matter. If some other awareness had to know you, then where would this being-known-by-another even exist for you?

तुम समझदार हो, तुम सिर्फ शुद्ध चेतना हो — तुम यह शरीर नहीं हो, जो बेजान, बिना समझ वाले पदार्थ से बना है। अगर तुम्हें जानने के लिए कोई और चेतना चाहिए होती, तो तुम्हारे लिए यह "किसी और से जाना जाना" कहीं होता ही नहीं।

2.9.29

अन्यस्त्वां चेतयति चेत्तं चेतयति कोऽपरः । क इमं चेतयेत्तस्मादनवस्था न वास्तवी ॥ २९ ॥

anyastvāṃ cētayati cēttam cētayati kō'paraḥ | ka imam cētayēttasmādanavasthā na vāstavī || 29 ||

If you say another awareness knows you, then who knows that other one? And who would know that next one? So this chain without end is not real.

अगर तुम कहो कि तुम्हें कोई और चेतना जानती है, तो उस दूसरी चेतना को कौन जानता है? और उस अगली को कौन जानेगा? इसलिए यह बिना अंत की कड़ी सच नहीं हो सकती।

2.9.30

शुभाशुभाभ्यां मार्गाभ्यां वहन्ती वासनासरित् । पौरुषेण प्रयत्नेन योजनीया शुभे पथि ॥ ३० ॥

śubhāśubhābhyāṃ mārḡābhyāṃ vahantī vāsanāsarit | pauruṣēṇa prayatnēna yōjanīyā śubhē pathi || 30 ||

The river of wishes, flowing along two paths, the good and the bad, must be turned, through self-effort, onto the good path.

इच्छाओं की यह नदी, जो अच्छे और बुरे — दोनों रास्तों पर बहती है, उसे अपनी मेहनत से अच्छे रास्ते पर मोड़ना चाहिए।

2.9.31

अशुभेषु समाविष्टं शुभेष्वेवावतारय । स्वं मनः पुरुषार्थेन बलेन बलिनां वर ॥ ३१ ॥

aśubheṣu samāviṣṭaṃ śubheṣvevāvatāraya | svaṃ manaḥ puruṣārtheṇa balena balināṃ vara || 31 ||

Best of the strong, bring your own mind, which is caught up in bad things, down into good things alone, by the strength of your own effort.

हे ताकतवरों में सबसे ताकतवर, अपने मन को, जो बुरी चीज़ों में फँसा है, अपनी मेहनत की ताकत से सिर्फ अच्छी चीज़ों में ले आओ।

2.9.32

अशुभाच्चालितं याति शुभं तस्मादपीतरत् । जन्तोश्चित्तं तु शुवित्तन्मुहृश्चतूयेद्गलात् ॥ ३२ ॥

aśubhāccālitaṃ yāti śubhaṃ tasmādapītarat | jantościttaṃ tu śuvittanmuhṛścatūyedgalāt || 32 ||

Moved away from the bad, the mind goes to the good, and from the good it can move back to the bad. In the same way, the mind of any creature keeps moving, again and again.

बुराई से हटकर मन भलाई की ओर जाता है, और भलाई से वह फिर बुराई की ओर भी मुड़ सकता है। इसी तरह किसी भी जीव का मन बार-बार डोलता रहता है।

2.9.33

समता सांत्वनेनाशु न द्रागिति शनेशनेः । पौरुषेणैव यत्नेन पालयेच्चित्तबालकम् ॥ ३३ ॥

samatā sāṃtvanenāśu na drāgiti śaneśaneḥ | pauruṣeṇaiva yatnena pālayecittabālakam || 33 ||

Balance comes through gentle, soothing words, not quickly, not all at once, but slowly, step by step. One should look after the mind, which is like a child, only through one's own effort.

संतुलन धीरे-धीरे, प्यार से समझाने पर आता है, जल्दी या एक झटके में नहीं, बल्कि थोड़ा-थोड़ा करके। मन को, जो एक बच्चे जैसा है, अपनी ही मेहनत से संभालना चाहिए।

2.9.34

वासनौघस्त्वया पूर्वमभ्यासेन घनीकृतः । शुभो वाप्यशुभो वापि शुभमद्य घनीकुरु ॥ ३४ ॥

vāsanaughastvayā pūrvamabhyāsena ghanīkṛtaḥ | śubho vāpyaśubho vāpi śubhamadya ghanīkuru || 34 ||

You yourself made your store of wishes solid before, through practice — whether it was good or bad. Now, today, make the good one solid.

तुमने ही अपनी इच्छाओं के भंडार को पहले, बार-बार करके, पक्का बनाया था — चाहे वह अच्छा हो या बुरा। अब, आज, अच्छे को पक्का बनाओ।

2.9.35

प्रागभ्यासवशाद्याता यदा ते वासनोदयम् । तदाभ्यासस्य साफल्यं विद्धि त्वमरिमर्दन ॥ ३५ ॥

prāgabhyāśavaśādyātā yadā te vāsanodayam | tadābhyāsasya sāphalyaṃ viddhi tvamarimardana || 35 ||

Crusher of enemies, when a wish, coming up from your earlier practice, rises in you now, know that as the success of that earlier practice.

हे शत्रुओं को कुचलने वाले, जब पहले के अभ्यास से आई कोई इच्छा अब तुम्हारे मन में उठे, तो उसे उसी पुराने अभ्यास की कामयाबी समझो।

2.9.36

इदानीमपि ते याति घनतां वासनानघ । अभ्यासवशतस्तस्माच्छुभाभ्यासमुपाहर ॥ ३६ ॥

idānīmapi te yāti ghanatām vāsanānagha | abhyāsaśatastasmācchubhābhyāsamupāhara || 36 ||

Sinless one, even now your wish is becoming solid, through the force of practice. So take up the practice of good.

हे निर्दोष, अभी भी तुम्हारी इच्छा अभ्यास के ज़ोर से पक्की होती जा रही है। इसलिए अच्छे अभ्यास को अपनाओ।

2.9.37

पूर्वे चेद्धनतां याता नाभ्यासात्तव वासना । वर्धिष्यते तु नेदानीमपि तात सुखी भव ॥ ३७ ॥

pūrve ceddhantām yātā nābhyāsāttava vāsanā | vardiṣyate tu nedānīmapi tāta sukhī bhava || 37 ||

Dear one, if in the past your wish did not become solid through practice, it will not grow now either — so be happy.

हे प्रिय, अगर पहले तुम्हारी इच्छा अभ्यास से पक्की नहीं बनी, तो अब भी वह नहीं बढ़ेगी — इसलिए खुश रहो।

2.9.38

संदिग्धायामपि भृशं शुभामेव समाहर । अस्यां तु वासनावृद्धौ शुभादोषो न कश्चन ॥ ३८ ॥

sandigdhyāyāmapi bhr̥śaṃ śubhāmeva samāhara | asyām tu vāsanāvṛddhau śubhādoṣo na kaścana || 38 ||

Even when it is very much in doubt, gather only the good. In growing this wish, there is no fault at all in choosing the good.

भले ही बात बहुत शक में हो, फिर भी सिर्फ अच्छी इच्छा को ही बढ़ाओ। इस इच्छा को बढ़ाने में, अच्छे को चुनने में कोई नुकसान नहीं है।

2.9.39

यद्यदभ्यस्यते लोके तन्मयेनैव भूयते । इत्याकुमारं प्राज्ञेषु दृष्टं संदेहवजितम् ॥ ३९ ॥

yadyadabhyasyate loka tanmayenaiva bhūyate | ityākumāraṃ prājñeṣu dr̥ṣṭaṃ saṁdehavajitam || 39 ||

Whatever a person keeps practicing in this world, that person becomes made of that very thing. This is seen among wise people, plain even to a child, and it is beyond all doubt.

इंसान इस दुनिया में जिस चीज़ का बार-बार अभ्यास करता है, वह उसी का बन जाता है। यह बात समझदार लोगों में देखी गई है, एक बच्चे को भी साफ समझ आती है, और इसमें कोई शक नहीं है।

2.9.40

यूभासना युक्तस्तदत्र भव भूतये । परं पोरुषमाश्रित्य विजित्येन्द्रियपञ्चकम् ॥ ४० ॥

yūbhāsanā yuktastadatra bhava bhūtaye | paraṃ poruṣamāśritya vijityendriyapañcakam || 40 ||

So, joined with a good wish, be here for your own good, relying on the highest self-effort, having beaten the five senses.

इसलिए, अच्छी इच्छा के साथ, यहाँ अपनी भलाई के लिए रहो, अपनी सबसे बड़ी मेहनत पर भरोसा रखकर, और पाँचों इंद्रियों को जीतकर।

2.9.41

अव्युत्पन्नमना यावद्भवानज्ञाततत्पदः । गुरुशास्त्रप्रमाणैस्तु निर्णीतं तावदाचर ॥ ४१ ॥

avyutpannamanā yāvadbhavanājñātatatpadaḥ | guruśāstrapramāṇaistu nirṇītaṃ tāvadācara || 41 ||

As long as you have not fully trained your mind and do not know that highest state, till then, act according to what has been settled by your teacher and by the scriptures.

जब तक तुमने अपने मन को पूरी तरह नहीं साधा है और उस सबसे ऊँची स्थिति को नहीं जाना है, तब तक अपने गुरु और शास्त्रों की तय की हुई बात के अनुसार चलो।

2.9.42

ततः पक्वकषायेण नूनं विज्ञातवस्तुना । शुभोप्यसौत्वया त्याज्यो वासनौघो निराधिना ॥ ४२ ॥

tataḥ pakvakaṣāyeṇa nūnaṁ vijñātavastunā | śubhopyasautvayā tyājyo vāsanaughō nirādhinā || 42 ||

Then, once your impurities have burned away and you truly know the real nature of things, you must give up even the good store of wishes, needing no support anymore.

फिर, जब तुम्हारी सारी मैल जल जाए और तुम चीज़ों का असली रूप सच में जान लो, तो तुम्हें इच्छाओं का अच्छा भंडार भी छोड़ देना होगा, क्योंकि तब तुम्हें किसी सहारे की ज़रूरत नहीं रहेगी।

2.9.43

यदतिसुभगमार्यसेवितं च्छुभमनुसृत्य मनोज्ञभावबुद्ध्या । अधिगमय पदं सदा विशोक तदनु तदप्यवमुच्य साधु तिष्ठ ॥ ४३ ॥

yadatisubhagamāryasevitaṁ cchubhamanusṛtya manojñabhāwabuddhyā | adhigamaya padaṁ sadā viśoka tadānu tadapyavamucya sādhu tiṣṭha || 43 ||

Following that very good path, walked by noble people, with a mind full of a pleasing feeling, reach that lasting state, sorrowless one; and after that, let go of that too, and stay steady and good.

उस बहुत अच्छे रास्ते पर चलकर, जिस पर भले लोग चले हैं, मन में एक अच्छे भाव के साथ, हे दुखरहित, उस हमेशा रहने वाली स्थिति को पा लो; और उसके बाद, उसे भी छोड़कर, स्थिर और अच्छे बने रहो।

Chapter 10

2.10.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । यथास्थितं ब्रह्मतत्त्वं सत्तानियतिरुच्यते । सा विनेतुर्विनेतृत्वं सा विनेयविनेयता ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | yathāsthitaṁ brahmatattvaṁ sattānīyatirucyate | sā vineturvinetṛtvaṁ sā vineyavineyatā || 1 ||

Sri Vasishtha said: The truth about Brahman, exactly as it stands, is called the fixed order of all being. That same order is what makes a teacher a teacher, and it is what makes a pupil a pupil.

श्री वसिष्ठ बोले - ब्रह्म का सच जैसा है वैसा ही, हर चीज़ के होने का पक्का नियम कहलाता है। यही नियम गुरु को गुरु बनाता है, और यही नियम शिष्य को शिष्य बनाता है।

2.10.2

अतः पौरुषमाश्रित्य श्रेयसे नित्यबान्धवम् । एकाग्रं कुरु तच्चित्तं शृणु चोक्तमिदं मम ॥ २ ॥

ataḥ pauruṣamāśritya śreyase nityabāndhavam | ekāgraṁ kuru taccittaṁ śṛṇu cuktamidaṁ mama || 2 ||

So, relying on your own effort — the true friend that always helps toward the highest good — make your mind one-pointed, and listen to what I tell you.

इसलिए अपने ही प्रयास का सहारा लो, जो भलाई के लिए हमेशा साथ देने वाला सच्चा दोस्त है। अपने मन को एक जगह टिकाओ, और जो मैं कहता हूँ उसे सुनो।

2.10.3

अवान्तरनिपातीनि स्वारूढानि मनोरथम् । पौरुषेणेन्द्रियाण्याशु संयम्य समतां नय ॥ ३ ॥

avāntaranipātīni svārūḍhāni manoratham | pauruṣeṇendriyāṇyāśu saṁyamya samatāṁ naya || 3 ||

The senses keep falling on one passing thing after another, carried away by their own wishful fancy. Restrain them quickly through effort, and bring your mind to a state of even balance.

इंद्रियाँ बार-बार इधर-उधर की चीज़ों पर जा गिरती हैं, अपनी ही इच्छा में बहकर। अपने प्रयास से इन्हें जल्दी रोको, और मन को बराबर की स्थिति में लाओ।

2.10.4

इहामुत्र च सिद्ध्यर्थं पुरुषार्थफलप्रदाम् । मोक्षोपायमयीं वक्ष्ये संहितां सारनिर्मिताम् ॥ ४ ॥

ihāmutra ca siddhyartham puruṣārthaphalapradām | mokṣopāyamayīṁ vakṣye saṁhitāṁ sārānirmitām || 4 ||

I will now speak of a treatise made of pure essence — the means to freedom — one that gives the fruit of life's true purpose, and that brings success both in this world and in the next.

अब मैं एक ऐसा ग्रंथ बताऊँगा जो सार से बना है, जो मुक्ति का उपाय है, जो जीवन के असली मकसद का फल देता है, और जो इस लोक में और अगले लोक में सफलता देता है।

2.10.5

अपुनर्ग्रहणायान्तस्त्यक्त्वा संसारवासनाम् । संपूर्णौ शमसंतोषावादायोदारया धिया ॥ ५ ॥

apunargrahaṇāyāntasttyaktvā saṁsāravāsanām | sampūrṇau śamaśantoṣāvādāyodārayā dhiyā || 5 ||

Inwardly give up, for good, the old pull toward worldly life, so that it never returns. With a generous mind, take up calm and contentment, both in full.

अपने भीतर संसार के प्रति पुरानी खिंचाव की आदत को हमेशा के लिए छोड़ दो, ताकि वह फिर कभी न लौटे। बड़े और खुले मन से शांति और संतोष, दोनों को पूरी तरह अपना लो।

2.10.6

सपूर्वापरवाक्यार्थविचारविषयाहतम् । मनः समरसं कृत्वा सानुसंधानमात्मनि ॥ ६ ॥

sapūrvāparavākyaārthavicāravīṣayāhatam | manaḥ samarasam kṛtvā sānusandhānamātmāni || 6 ||

Make your mind — steadied by weighing the meaning of the scriptures, looking at what comes before and after — even and calm, joined constantly with inquiry into the Self.

अपने मन को, जो शास्त्रों की बातों का आगे-पीछे मिलाकर मतलब समझने से जमा है, एक-सा और शांत बनाओ, और उसे लगातार आत्मा की खोज से जोड़े रखो।

2.10.7

सुखदुःखक्षयकरं महानन्देककारणम् । मोक्षोपायमिमं राम वक्ष्यमाणं मया शृणु ॥ ७ ॥

sukhaduḥkhakṣayakaram mahānandekakāraṇam | mokṣopāyamimaṁ rāma vakṣyamāṇaṁ mayā śṛṇu || 7 ||

Listen, Rama, to this means to freedom that I am about to tell you. It ends both pleasure and pain, and it is the one true cause of great bliss.

राम, अब मैं जो मुक्ति का उपाय बताने जा रहा हूँ, उसे सुनो। यह सुख और दुख दोनों को खत्म कर देता है, और यही बड़े आनंद का असली कारण है।

2.10.8

इमां मोक्षकथां श्रुत्वा सह सर्वैर्विवेकिभिः । परं यास्यसि निर्दुःखं नाशो यत्र न विद्यते ॥ ८ ॥

imāṁ mokṣakathāṁ śrutvā saha sarvairvivekibhiḥ | paraṁ yāsyasi nirdhuḥkhaṁ nāśo yatra na vidyate || 8 ||

When you have heard this teaching about freedom — together with all who have this same understanding — you will reach that highest state, free of all sorrow, where nothing is ever destroyed.

यह मुक्ति की बात सुनकर, उन सब समझदार लोगों के साथ जिनमें यही सूझ है, तुम उस सबसे ऊँची स्थिति में पहुँचोगे, जहाँ कोई दुख नहीं है और जहाँ कुछ भी कभी नष्ट नहीं होता।

2.10.9

इदमुक्तं पुराकल्पे ब्रह्मणा परमेष्ठिना । सर्वदुःखक्षयकरं परमाश्वासनं श्रियः ॥ ९ ॥

idamuktam purākalpe brahmaṇā parameṣṭhinā | sarvaduḥkhakṣayakaram paramāśvāsanaṁ śriyaḥ || 9 ||

This teaching was first spoken long ago, in an earlier age, by Brahma, the highest lord. It destroys all sorrow and gives the deepest comfort and true well-being.

यह बात सबसे पहले बहुत पुराने समय में, ब्रह्मा ने, जो सबसे बड़े स्वामी हैं, कही थी। यह हर दुख को मिटा देती है और सबसे गहरा सुकून और असली भलाई देती है।

2.10.10

श्रीराम उवाच । केनोक्तं कारणेनेदं ब्रह्मन्पूर्वं स्वयंभुवा । कथं च भवता प्राप्तमेतत्कथय मे प्रभो ॥ १० ॥

śrīrāma uvāca | kenoktaṁ kāraṇenedaṁ brahmanpūrva svayambhuvā | katham ca bhavatā prāptametatkathaya me prabho || 10 ||

Sri Rama said: Brahmin, why did the Self-born Brahma speak this teaching long ago? And how did you come to receive it? Tell me this, my lord.

श्री राम बोले - हे ब्राह्मण, स्वयं जन्मे ब्रह्मा ने यह बात पहले क्यों कही थी? और आपको यह कैसे मिली? स्वामी, यह मुझे बताइए।

2.10.11

श्रीवसिष्ठ उवाच । अस्त्यनन्तविलासात्मा सर्वगः सर्वसंश्रयः । चिदाकाशोऽविनाशात्मा प्रदीपः सर्वजन्तुषु ॥ ११ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | astyanantavilāsātmā sarvagah sarvasaṁśrayaḥ | cidākāśo'vināśātmā pradīpaḥ sarvajantuṣu || 11 ||

Sri Vasishtha said: There is one whose very nature is endless, playful expansion — present everywhere, the shelter of everything, the space of pure consciousness, never perishing, the light shining inside every living being.

श्री वसिष्ठ बोले - एक ऐसी सत्ता है जिसका स्वभाव ही अनंत, खेल जैसा फैलाव है - जो हर जगह मौजूद है, जो सबका सहारा है, जो चेतना का आकाश है, जो कभी नष्ट नहीं होती, और जो हर जीव के भीतर जलती हुई रोशनी है।

2.10.12

स्पन्दास्पन्दसमाकारात्ततो विष्णुरजायत । स्यन्दमानरसापूरात्तरङ्गः सागरादिव ॥ १२ ॥

spandāspandasamākārāttato viṣṇurajāyata | syandamānarasāpūrāttaraṅgaḥ sāgarādīva || 12 ||

From that being, whose form holds both movement and stillness together, Vishnu was born — just as a wave rises from the sea, out of its full, flowing water.

उस सत्ता से, जिसके रूप में हलचल और ठहराव दोनों साथ-साथ हैं, विष्णु पैदा हुए - बिल्कुल वैसे जैसे समुद्र के भरे हुए, बहते पानी से एक लहर उठती है।

2.10.13

सुमेरुर्गणिकान्तस्य दिग्दलाद्दृदयाम्बुजात् । तारकाकेसरवतः परमेष्ठी व्यजायत ॥ १३ ॥

sumerukarṇikāntasya digdalāddhṛdayāmbujāt | tārakākesaravataḥ parameṣṭhī vyajāyata || 13 ||

From the lotus of his heart — a lotus whose seed-pod is Mount Meru, whose petals are the directions of space, and whose threads are the stars — Brahma, the highest lord, was born.

उनके हृदय के कमल से - जिस कमल की बीज-गद्दी मेरु पर्वत है, जिसकी पंखुड़ियाँ दिशाएँ हैं, और जिसके रेशे तारे हैं - सबसे बड़े स्वामी ब्रह्मा पैदा हुए।

2.10.14

वेदवेदार्थविद्वेवमुनिमूण्डलमण्डितः । सोऽसृजत्सकल सग विकल्पौघं यथा मनः ॥ १४ ॥

vedavedārthaviddevamunimūṇḍalamañḍitaḥ | so'asṛjatsakala saga vikalpaugham yathā manaḥ || 14 ||

He, the knower of the Vedas and their meaning, surrounded by a great gathering of divine sages, created this whole universe as a flood of imagined forms, just as the mind creates its flow of thoughts.

वे, जो वेदों और उनके अर्थ को जानते हैं, देव-ऋषियों की एक बड़ी सभा से घिरे हुए, उन्होंने यह पूरा संसार कल्पना के एक सैलाब की तरह बनाया, ठीक वैसे ही जैसे मन विचारों की धारा बनाता है।

2.10.15

जम्बूद्वीपस्य कोणेऽखिरवर्षे भारतनामनि । ससज जनसर्गौघं ह्याधिव्याधिपरिप्लुतम् ॥ १५ ॥

jambūdvīpisya koṇe'khiravarṣe bhāratanaṁani | sasaja janasargaudham hyādhivyādhipariplutam || 15 ||

In a corner of Jambudvīpa, in the whole land called Bharata, he created a flood of people, overwhelmed by illnesses of mind and body.

जम्बूद्वीप के एक कोने में, भारत नाम की पूरी धरती पर, उन्होंने लोगों का एक सैलाब बनाया, जो मन और शरीर की बीमारियों से घिरे हुए थे।

2.10.16

भावाभावविषण्णाङ्गमुत्पातध्वसतत्परम् । सर्गेऽस्मिन्भूतजातीना नानाव्यसनसकुलम् ॥ १६ ॥

bhāvābhāvaviṣaṇṇāṅgamutpātadhvasatatparam | sarge'sminbhūtajātīnā nānāvyaśanasakulam || 16 ||

In this creation, the bodies of all kinds of living beings were worn down by the coming and going of birth and death, always about to be struck by disaster, and crowded with many kinds of misfortune.

इस सृष्टि में, हर तरह के जीवों के शरीर जन्म और मृत्यु के आने-जाने से थके हुए थे, हमेशा किसी न किसी विपत्ति की चपेट में आने वाले थे, और तरह-तरह के दुर्भाग्य से भरे हुए थे।

2.10.17

जनस्यैतस्य दुःखं तद्दृष्ट्वा सकललोककृत् । जगाम करुणामीशः पुत्रदुःखात्पिता यथा ॥ १७ ॥

janasyaetasya duḥkhaṁ taddṛṣṭvā sakalalokakṛt | jagāma karuṇāmīśaḥ putraduḥkhātpitā yathā || 17 ||

Seeing the suffering of these people, the lord who made all the worlds felt compassion for them — the way a father feels pain at his son's suffering.

इन लोगों का दुख देखकर, सारे लोकों को बनाने वाले स्वामी को उन पर दया आई - बिल्कुल वैसे जैसे एक पिता को अपने बेटे के दुख से पीड़ा होती है।

2.10.18

क एतेषां हताशानां दुःखस्यान्तो हतायुषाम् । स्यादिति क्षणमेकाग्रं चिन्तयामास भूतये ॥ १८ ॥

ka eteṣāṁ hatāśānāṁ duḥkhasyānto hatāyusaṁ | syāditi kṣaṇamekāgraṁ cintayāmāsa bhūtaye || 18 ||

He thought: 'What could end the suffering of these unlucky people, whose lives are being wasted?' He pondered this closely, for a moment, for their good.

उन्होंने सोचा - 'इन बदनसीब लोगों का दुख कैसे खत्म हो, जिनकी ज़िंदगी बर्बाद हो रही है?' उन्होंने एक पल के लिए इस पर ध्यान से, उनकी भलाई के लिए, गहराई से सोचा।

2.10.19

इति संचिन्त्य भगवान्ससर्ज स्वयमीश्वरः । तपो धर्म च दानं च सत्यं तीर्थानि चैव हि ॥ १९ ॥

iti saṁcintya bhagavānsasarja svayamīśvaraḥ | tapo dharma ca dānaṁ ca satyaṁ tīrthāni caiva hi || 19 ||

Thinking this, the lord himself then created austerity, right conduct, giving to others, truthfulness, and also holy places of pilgrimage.

यह सोचकर, स्वामी ने खुद तप, धर्म, दान, सच बोलना, और तीर्थ स्थान बनाए।

2.10.20

एतत्सृष्ट्वा पुनर्दवाश्चिन्तयामास भूतकृत् । पुंसां नानेन सर्गस्य दुःखस्यान्त इति स्वयम् ॥ २० ॥

etatsṛṣṭvā punardavāścintayāmāsa bhūtakṛt | puṁsāṁ nānena sargasya duḥkhasyānta iti svayam || 20 ||

Having created these, the god who made all beings thought again, on his own: 'This alone will not end the suffering of men.'

यह सब बनाने के बाद, सारे जीवों को बनाने वाले भगवान ने फिर से खुद सोचा - 'सिर्फ इससे लोगों का दुख खत्म नहीं होगा।'

2.10.21

निर्वाणं नाम परमं सुखं येन पुनर्जनः । न जायते न म्रियते तज्ज्ञानादेव लभ्यते ॥ २१ ॥

nirvāṇaṃ nāma paramaṃ sukhaṃ yena punarjanaḥ | na jāyate na mriyate tajjñānādeva labhyate || 21 ||

There is a highest happiness called liberation. Through it, a person is never born again and never dies again. It is reached only through knowledge.

एक सबसे बड़ा सुख है जिसे मुक्ति कहते हैं। इसे पाकर इंसान फिर कभी जन्म नहीं लेता और फिर कभी नहीं मरता। यह सिर्फ ज्ञान से ही मिलता है।

2.10.22

संसारोत्तरणे जन्तोरुपायो ज्ञानमेव हि । तपो दानं तथा तीर्थमनुपायाः प्रकीर्तिताः ॥ २२ ॥

saṃsārottarāṇe jantorupāyo jñānameva hi | tapo dānaṃ tathā tīrthamanupāyāḥ prakīrtitāḥ || 22 ||

To cross over this worldly life, the only real means for a person is knowledge. Austerity, giving, and pilgrimage are said not to be means to that end.

इस संसार को पार करने का इंसान के लिए असली उपाय सिर्फ ज्ञान है। तप, दान और तीर्थ को इसके लिए उपाय नहीं माना गया है।

2.10.23

तत्तावदुःखमोक्षार्थं जनस्यास्य हतात्मनः । प्रत्यग्रं तरणोपायमाशु प्रकटयाम्यहम् ॥ २३ ॥

tattāvadduḥkhamokṣārtha janasyāsya hatātmanaḥ | pratyagraṃ taraṇopāyamāśu prakṛṭayāmyaham || 23 ||

So now, to free these broken people from suffering, I will quickly show a fresh way to cross over.

तो अब, इन टूटे हुए लोगों को दुख से छुड़ाने के लिए, मैं जल्दी ही पार जाने का एक नया रास्ता दिखाऊँगा।

2.10.24

इति संचिन्त्य भगवान्ब्रह्मा कमलसंस्थितः । मनसा परिसंकल्प्य मामुत्पादितवानिमम् ॥ २४ ॥

iti saṃcintya bhagavānbrahmā kamalasaṃsthitaḥ | manasā parisamkalpya māmūtpāditavānimam || 24 ||

Thinking this, the lord Brahma, seated on his lotus, resolved it in his mind and brought me — this very one — into being.

यह सोचकर, कमल पर बैठे स्वामी ब्रह्मा ने अपने मन में तय किया और मुझे - यानी इसी वसिष्ठ को - पैदा किया।

2.10.25

कुतोऽप्युत्पन्न एवाशु ततोऽहं समुपस्थितः । पितुस्तस्य पुनः शीघ्रमूर्मिरूर्मेरिवानघ ॥ २५ ॥

kuto'pyutpanna evāśu tato'haṃ samupasthitaḥ | pitustasya punaḥ śīghramūrmirūrmērivānagha || 25 ||

As soon as I came into being from somewhere, I appeared at once before that father of mine — quickly, the way one wave follows another wave, sinless Rama.

जैसे ही मैं कहीं से पैदा हुआ, मैं तुरंत अपने उस पिता के सामने आ गया - बिल्कुल वैसे जैसे एक लहर के बाद दूसरी लहर आती है, हे निष्पाप राम।

2.10.26

कमण्डलुधरो नाथः सकमण्डलुना मया । साक्षमालः साक्षमालं स प्रणम्याभिवादितः ॥ २६ ॥

kamaṇḍaludharo nāthaḥ sakamaṇḍalunā mayā | sākṣamālaḥ sākṣamālaṃ sa praṇamyābhivāditaḥ || 26 ||

That lord held a water-pot, and I too held a water-pot; he held a string of prayer-beads, and I too held a string of prayer-beads. I bowed down and greeted him.

उन स्वामी के हाथ में कमंडल था, और मेरे हाथ में भी कमंडल था; उनके हाथ में जप की माला थी, और मेरे हाथ में भी जप की माला थी। मैंने झुककर उन्हें प्रणाम किया।

2.10.27

एहि पुत्रेति मामुत्त्वा स स्वाब्जस्योत्तरे दले । शुक्लाश्च इव शीतांशु योजयामास पाणिना ॥ २७ ॥

ehi putreti māmuktva sa svābjasya uttare dale | śuklāśca iva śītāṁśu yojayāmāsa pāṇinā || 27 ||

Saying to me, 'Come, my son,' he set me, white as the cool moon, on the upper petal of his own lotus, with his own hand.

मुझसे कहा - 'आओ, बेटा' - और उन्होंने मुझे, जो चाँद जैसा ठंडा-सफेद था, अपने कमल की ऊपर की पंखुड़ी पर, अपने ही हाथ से बिठाया।

2.10.28

मृगकृत्तिपरीधानो मृगकृत्तिनिजाम्बरम् । मामुवाच पिता ब्रह्मा सुहंसः सारसं यथा ॥ २८ ॥

mṛgakṛttiparīdhāno mṛgakṛttinijāmbaram | māmuvāca pitā brahmā suhaṁsaḥ sārasaṁ yathā || 28 ||

Then Brahma, my father, who wore a deerskin as his own robe, spoke to me — the way a graceful swan speaks to a crane.

फिर मेरे पिता ब्रह्मा ने, जो हिरण की खाल को ही अपना वस्त्र पहने थे, मुझसे बात की - बिल्कुल वैसे जैसे एक सुंदर हंस किसी सारस से बात करे।

2.10.29

मुहूर्तमात्रं ते पुत्र चेतो वानरचञ्चलम् । अज्ञानमभ्यासशतु शशः शशधरं यथा ॥ २९ ॥

muhūrtamātraṁ te putra cetovānaracañcalam | ajñānamabhyāśraśatu śaśaḥ śaśadharaṁ yathā || 29 ||

'For just a moment, my son, may not-knowing take hold of your mind, restless like a monkey — the way a hare rests inside the moon.'

'बस एक पल के लिए, बेटा, तेरे मन पर, जो बंदर जैसा चंचल है, अनजानपन छा जाए - जैसे चाँद में खरगोश समाया रहता है।'

2.10.30

इति तेनाशु शप्तः सन्विचारसमनन्तरम् । अहं विस्मृतवान्सर्वे स्वरूपममलं किल ॥ ३० ॥

iti tenāśu śaptaḥ sanvicārasamanantaram | ahaṁ vismṛtavānsarve svarūpamamalaṁ kila || 30 ||

As soon as he cursed me like this, right after those words, I completely forgot my own pure, true nature.

उन्होंने मुझे यह श्राप दिया, और उन शब्दों के तुरंत बाद, मैं अपना असली और शुद्ध रूप पूरी तरह भूल गया।

2.10.31

अथाहं दीनता यातः स्थितोऽसंबुद्धया धिया । दुःखशोकाभिसंतप्तो जातो जन इवाधनः ॥ ३१ ॥

athāhaṁ dīnatā yātaḥ sthito'sambuddhayā dhiyā | duḥkhaśokaābhisantapto jāto jana ivādhanāḥ || 31 ||

Then I became wretched, staying with a mind that no longer understood, burning with sorrow and grief, like a man who has become poor and has nothing.

फिर मैं दुखी हो गया, मेरा मन समझ खो बैठा, मैं दुख और शोक से जल रहा था, बिल्कुल वैसे जैसे कोई गरीब आदमी जिसके पास कुछ भी नहीं बचा।

2.10.32

कष्टं संसारनामायं दोषः कथमिहागतः । इति चिन्तितवानन्तस्तूष्णीमेव व्यवस्थितः ॥ ३२ ॥

kaṣṭhaṁ saṁsāranāmāyaṁ doṣaḥ kathamihāgataḥ | iti cintitavānantastūṣṇīmeva vyavasthitaḥ || 32 ||

I thought to myself, 'Oh, how did this trouble called worldly life come upon me?' And I just stayed there in silence.

मैंने अपने मन में सोचा - 'हाय, यह संसार नाम की मुसीबत मुझ पर कैसे आ गई?' और मैं बस चुपचाप वहीं बैठा रहा।

2.10.33

अथाभ्यधात्स मां तातः पुत्र किं दुःखवानसि । दुःखोपघातं मां पृच्छ सुखी नित्यं भविष्यसि ॥ ३३ ॥

athābhyadhātsa mām tātaḥ putra kiṃ duḥkhavānasi | duḥkhopaghātaṃ mām prccha sukhī nityaṃ bhaviṣyasi || 33 ||

Then my father said to me, 'Son, why are you suffering? Ask me how suffering is destroyed, and you will be happy forever.'

तब मेरे पिता ने मुझसे कहा - 'बेटा, तू दुखी क्यों है? मुझसे पूछ कि दुख कैसे मिटता है, और तू हमेशा के लिए सुखी हो जाएगा।'

2.10.34

ततः पृष्ठः स भगवान्मया सकललोककृत् । हेमपद्मदलस्थेन संसारव्याधिभेषजम् ॥ ३४ ॥

tataḥ prṣṭaḥ sa bhagavānmayā sakalalokakṛt | hemabaddmadalasthena saṃsāravāyādhibheṣajam || 34 ||

Then, sitting on the petal of the golden lotus, I asked that lord, the maker of all worlds, about the remedy for the disease of worldly life.

फिर, सोने के कमल की पंखुड़ी पर बैठे-बैठे, मैंने उन स्वामी से, जो सारे लोकों को बनाने वाले हैं, संसार नाम की बीमारी की दवा के बारे में पूछा।

2.10.35

कथं नाथ महादुःखमयः संसार आगतः । कथं च क्षीयते जन्तोरिति पृष्टेन तेन मे ॥ ३५ ॥

kathaṃ nātha mahāduḥkhamayaḥ saṃsāra āgataḥ | kathaṃ ca kṣīyate jantōriti prṣṭena tena me || 35 ||

I asked him: 'Lord, how did this world of great suffering come to be? And how can it be ended for a person?'

मैंने उनसे पूछा - 'स्वामी, यह बड़े दुख से भरा संसार कैसे बना? और यह इंसान के लिए कैसे खत्म हो सकता है?'

2.10.36

तज्ज्ञानं सुबहु प्रोक्तं यज्ज्ञात्वा पावनं परम् । अहं पितुरभिप्रायः किलाधिक इव स्थितः ॥ ३६ ॥

tajjñānaṃ subahu proktaṃ yajñātvā pāvanaṃ param | ahaṃ piturabhiprāyaḥ kilādhipika iva sthitaḥ || 36 ||

He told me this knowledge at great length — knowing it makes a person supremely pure. It seems I had become the special aim of my father's purpose in teaching it.

उन्होंने मुझे यह ज्ञान बहुत विस्तार से बताया - इसे जानकर इंसान पूरी तरह पवित्र हो जाता है। ऐसा लगता है कि मैं ही अपने पिता के इस ज्ञान देने के मकसद का खास निशाना बन गया था।

2.10.37

ततो विदितवेद्यं मां निजां प्रकृतिमास्थितम् । स उवाच जगत्कर्ता वक्ता सकलकारणम् ॥ ३७ ॥

tato viditavedyaṃ mām nijāṃ prakṛtimāsthitaṃ | sa uvāca jagatkartā vaktā sakalakāraṇam || 37 ||

Then, seeing that I had learned what was to be learned and was now settled in my own true nature, he — the maker of the world, the one who reveals the cause of all things — spoke to me:

फिर, यह देखकर कि मैं वह सब सीख चुका था जो सीखना था, और अब अपने असली स्वरूप में ठिका हुआ था, उन्होंने - जो संसार को बनाने वाले हैं और हर चीज़ का कारण बताने वाले हैं - मुझसे कहा -

2.10.38

शापेनाज्ञपदं नीत्वा पृच्छकस्त्वं मया कृतः । पुत्रस्य ज्ञानसारस्य समस्तजनसिद्धये ॥ ३८ ॥

śāpenājñapadam nītvā prcchakastvaṃ mayā kṛtaḥ | putrāsya jñānasārasya samastajanāsiddhaye || 38 ||

'By my curse, son, I brought you to a state of not-knowing, and made you the one who asks — so that, through this essence of knowledge, all people could gain success.'

'बेटा, मैंने अपने श्राप से तुझे अनजानपन की हालत में पहुँचाया, और तुझे सवाल पूछने वाला बनाया - ताकि इस ज्ञान के सार से सारे लोगों का भला हो सके।'

2.10.39

इदानीं शान्तशापस्त्वं परं बोधमुपागतः । संस्थितोऽहमिवैकान्माऽकनक कनकादिवत् ॥ ३९ ॥

idānīm śāntaśāpastvaṃ paraṃ bodhamupāgataḥ | saṁsthito'hamivaikānmā'kanaka kanakādivat || 39 ||

'Now that the curse is over, you have reached the highest awakening. I remain present in you as one and the same — the way one piece of gold is the same as another piece of gold.'

'अब श्राप खत्म हो गया है, और तू सबसे ऊँची जागृति को पा चुका है। मैं तुझमें एक ही रूप में मौजूद हूँ - जैसे सोने का एक टुकड़ा दूसरे सोने के टुकड़े से अलग नहीं होता।'

2.10.40

गच्छेदानीं महीपृष्ठे जम्बूद्वीपान्तरस्थितम् । साधो भरतवर्ष त्वं लोकानुग्रहहेतुना ॥ ४० ॥

gacchedānīm mahīpṛṣṭhe jambūdvīpāntarasthitam | sādho bharatavarṣa tvaṃ lokānugrahaḥētunā || 40 ||

'Now go, gentle one, to the surface of the earth, to the land called Bharata within Jambudvipa, to bless and help all people.'

'अब जा, हे सज्जन, धरती पर, जम्बूद्वीप के भीतर भारत नाम की भूमि पर, लोगों का भला करने और उनकी मदद करने के लिए।'

2.10.41

तत्र क्रियाकाण्डपरास्त्वया पुत्र महाधिया । उपदेशाः क्रियाकाण्डक्रमेण क्रमशालिना ॥ ४१ ॥

tatra kriyākāṇḍaparāstvayā putra mahādhiyā | upadeśvāḥ kriyākāṇḍakrameṇa kramśālīnā || 41 ||

'There, son, with your great wisdom, teach those devoted to ritual action — instructing them, step by step, in the proper order of ritual practice.'

'वहाँ, बेटा, अपनी बड़ी बुद्धि से, जो लोग कर्मकांड में लगे हैं उन्हें सिखा - उन्हें कर्मकांड का सही तरीका, एक-एक कदम करके, बता।'

2.10.42

विरक्ताचेत्ताश्च तथा महाप्राज्ञा विचारिणः । उपदेश्यास्त्वया साधो ज्ञानेनानन्ददायिना ॥ ४२ ॥

virarktācettāśca tathā mahāprājñā vicāriṇaḥ | upadeśyāstvayā sādho jñānenānandadāyinā || 42 ||

'And those who are detached, and the truly wise who reflect deeply — teach them, gentle one, with the knowledge that gives bliss.'

'और जो लोग विरक्त हैं, और जो बड़े बुद्धिमान गहराई से सोचने वाले हैं - उन्हें, हे सज्जन, वह ज्ञान सिखा जो आनंद देता है।'

2.10.43

इति तेन नियुक्तोऽहं पित्रा कमलयोनिना । इह राघव तिष्ठामि यावद्भूतपरम्परा ॥ ४३ ॥

iti tena niyukto'haṃ pitrā kamalayoninā | iha rāghava tiṣṭhāmi yāvadbhūtaparamparā || 43 ||

So, Raghava, appointed by my father, the lotus-born Brahma, I remain here for as long as the line of living beings continues.

तो, हे राघव, अपने पिता कमल से जन्मे ब्रह्मा के कहने पर, मैं यहाँ तब तक रहता हूँ जब तक जीवों की यह कड़ी चलती रहती है।

कर्तव्यमस्ति न ममेह हि किञ्चिदेव स्थातव्यमित्यतिमना भुवि संस्थितोऽस्मि । संशान्तया सततसुप्तधियेह वृत्त्या कार्यं करोमि
न च किञ्चिदहं करोमि ॥ ४४ ॥

*kartavyamasti na mameha hi kiñcideva sthātavyamityatimanā bhuvi saṁsthito'smi | saṁśāntayā
satatasuptadhiyeha vṛtyā kārya karomi na ca kiñcidahaṁ karomi || 44 ||*

I have nothing at all that I must do here, yet, thinking 'one must still remain,' with a mind that has gone beyond all this, I stay on this earth. Living calmly, my mind always at complete rest as if asleep, I carry out my task — and yet I do nothing at all.

यहाँ मुझे कुछ भी नहीं करना है, फिर भी यह सोचकर कि 'फिर भी रहना ही होगा,' एक ऐसे मन के साथ जो इन सब से आगे निकल चुका है, मैं इस धरती पर टिका रहता हूँ। शांत तरीके से जीते हुए, मेरा मन हमेशा ऐसे पूरी तरह टिका रहता है जैसे सोया हुआ हो, मैं अपना काम करता हूँ - और फिर भी मैं कुछ नहीं करता।

Chapter 11

2.11.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । एतत्ते कथितं सर्वं ज्ञानावतरणं भुवि । मया स्वमीहितं चेव कमलोद्भवचेष्टितम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | etatte kathitaṃ sarva jñānāvatarāṇaṃ bhuvi | mayā svamīhitaṃ caiva kamalodbhavaceṣṭitaṃ || 1 ||

Sri Vasishtha said: I have now told you everything — how this knowledge came down to earth, and also my own story, along with what the lotus-born Brahma did.

श्री वसिष्ठ बोले - मैंने अब तुम्हें सब कुछ बता दिया है - यह ज्ञान धरती पर कैसे उतरा, और मेरी अपनी कहानी भी, साथ ही कमल से जन्मे ब्रह्मा ने क्या किया, वह भी।

2.11.2

तदिदं परमं ज्ञानं श्रोतुमद्य तवानघ । भृशमुत्कण्ठितं चेतो महतः सुकृतोदयात् ॥ २ ॥

tadidaṃ paramaṃ jñānaṃ śrotumadya tavānagha | bhṛśamutkaṇṭhitaṃ ceto mahataḥ sukṛtodayāt || 2 ||

Now, sinless Rama, your mind today is deeply eager to hear this highest knowledge — an eagerness that has come from your own great merit.

अब, हे निष्पाप राम, तुम्हारा मन आज इस सबसे ऊँचे ज्ञान को सुनने के लिए बहुत बेचैन है - यह बेचैनी तुम्हारे अपने बड़े पुण्य से पैदा हुई है।

2.11.3

श्रीराम उवाच । कथं ब्रह्मन्मगवतो लोके ज्ञानावतारणे । सर्गादनन्तरं बुद्धिः प्रवृत्ता परमेष्ठिनः ॥ ३ ॥

śrīrāma uvāca | kathaṃ brahmaṇmagavato loke jñānāvātāraṇe | sargādanantaraṃ buddhiḥ pravṛttā parameṣṭhinaḥ || 3 ||

Sri Rama said: Brahmin, how was it that, right after creation, the mind of the divine lord Brahma turned toward bringing knowledge down into the world?

श्री राम बोले - हे ब्राह्मण, सृष्टि बनने के तुरंत बाद, भगवान ब्रह्मा का मन ज्ञान को दुनिया में उतारने की ओर कैसे मुड़ा?

2.11.4

श्रीवसिष्ठ उवाच । परमे ब्रह्मणि ब्रह्मा स्वभाववशतः स्वयम् । जातः स्पन्दमयो नित्यमूर्मिरम्बुनिधाविव ॥ ४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | parame brahmaṇi brahmā svabhāvavaśataḥ svayam | jātaḥ spandamayo nityamūrmirambunidhāviva || 4 ||

Sri Vasishtha said: Out of the supreme Brahman, Brahma was born on his own, simply by the force of his own nature — a being made of motion, the way a wave keeps rising in the ocean.

श्री वसिष्ठ बोले - सबसे ऊँचे ब्रह्म से, ब्रह्मा अपने आप पैदा हुए, बस अपने ही स्वभाव के बल से - एक ऐसी सत्ता जो हलचल से बनी है, जैसे समुद्र में लगातार लहर उठती रहती है।

2.11.5

दृष्ट्वैवमातुरं सर्गं सर्गस्य सकलां गतिम् । भूतभव्यभविष्यस्थां दश परमेश्वरः ॥ ५ ॥

dr̥ṣṭvāivamāturaṃ sarga sargasya sakalāṃ gatim | bhūtabhavyabhaviṣyasthāṃ daśa parameśvaraḥ || 5 ||

The supreme lord saw the whole course of this troubled creation — its entire movement through past, present, and future.

सबसे बड़े स्वामी ने इस दुखी सृष्टि की पूरी चाल देखी - इसकी सारी गति, जो बीते समय, आने वाले समय और अभी के समय में फैली थी।

2.11.6

सक्रियाक्रमकालस्य कृतादेः क्षय आगते । मोहमालोच्य लोकानां कारुण्यमगमत्प्रभुः ॥ ६ ॥

sakriyākramakālasya kṛtādeḥ kṣaya āgate | mohamālocya lokānāṃ kārūṇyamagamatprabhuḥ || 6 ||

When the age of right action, beginning with the Krita Yuga, had come to its end, and its whole order was falling apart, the lord looked closely at the confusion of the people and felt compassion for them.

जब सही कर्म का युग, कृत युग से शुरू होकर, अपने अंत पर पहुँच गया, और उसका पूरा तरीका बिगड़ने लगा, तो स्वामी ने लोगों की उलझन को गौर से देखा और उन पर दया आई।

2.11.7

ततो मामीश्वरः सृष्ट्वा ज्ञानेनायोज्य चासकृत् । विससर्ज महीपीठं लोकस्याज्ञानशान्तये ॥ ७ ॥

tato māmīśvaraḥ sṛṣṭvā jñānena yojya cāsakṛt | visasarja mahīpīṭhaṃ lokasyājñānaśāntaye || 7 ||

Then the lord created me, joined me again and again with knowledge, and sent me down to the earth, to quiet the ignorance of the world.

फिर स्वामी ने मुझे बनाया, मुझे बार-बार ज्ञान से जोड़ा, और मुझे धरती पर भेज दिया, ताकि दुनिया का अनजानपन शांत हो सके।

2.11.8

यथाहं प्रहितस्तेन तथान्ये च महर्षयः । सनत्कुमारप्रमुखा नारदाद्याश्च भूरिशः ॥ ८ ॥

yathāhaṃ prahitastena tathānye ca maharṣayaḥ | sanatkumārāpramukhā nārādādyāśca bhūriśaḥ || 8 ||

Just as I was sent by him, in the same way many other great sages were sent too — Sanatkumara chief among them, and Narada and others, a great many of them.

जैसे मुझे उन्होंने भेजा, वैसे ही और भी कई बड़े ऋषियों को भेजा - सनतकुमार सबसे आगे, और नारद वगैरह, बहुत सारे।

2.11.9

क्रियाक्रमेण पुण्येन तथा ज्ञानक्रमेण च । मनोमोहामयोन्नद्धमुद्धर्तुं लोकमीरिताः ॥ ९ ॥

kriyākramena puṇyena tathā jñānakramena ca | manomohāmayonnaddhamuddhartuṃ lokamīritāḥ || 9 ||

They were sent to rescue the world, which was tied down by the sickness of confusion in the mind — some through the right way of righteous action, and some through the right way of knowledge. उन्हें दुनिया को बचाने के लिए भेजा गया, जो मन की उलझन नाम की बीमारी में बंधी हुई थी - कुछ को सही कर्म के रास्ते से, और कुछ को सही ज्ञान के रास्ते से।

2.11.10

महर्षिभिस्ततस्तैस्तैः क्षीणे कृतयुगे पुरा । क्रमात्क्रियाक्रमे शुद्धे पृथिव्या तनुतां गते ॥ १० ॥

maharṣibhistatastaiḥstaiḥ kṣīṇe kṛtayuge purā | kramātkriyākrame śuddhe pṛthivyā tanutām gate || 10 ||

So, long ago, when the Krita Yuga had ended, and the pure order of right action on earth had gradually grown thin, those great sages did the following —

तो, बहुत पहले, जब कृत युग खत्म हो गया, और धरती पर सही कर्म का शुद्ध तरीका धीरे-धीरे कमज़ोर पड़ने लगा, तो उन बड़े ऋषियों ने यह किया -

2.11.11

क्रियाक्रमविधानार्थं मर्यादानियमाय च । पृथग्देशविभागेन भूपालाः परिकल्पिताः ॥ ११ ॥

kriyākramavidhānārthaṁ maryādānīyamāya ca | prthagdeśavibhāgena bhūpālāḥ parikalpitāḥ || 11 ||

to set up rules for right action and to keep proper limits in place, kings were appointed for each separate region of the land.

सही कर्म के नियम बनाने और सीमाओं को ठीक रखने के लिए, ज़मीन के अलग-अलग हिस्सों में राजा नियुक्त किए गए।

2.11.12

बहूनि स्मृतिशास्त्राणि यज्ञशास्त्राणि चावनौ । धर्मकामार्थसिद्ध्यर्थं कल्पितान्युचितान्यथ ॥ १२ ॥

bahūni smṛtiśāstrāṇi yajñśāstrāṇi cāvanau | dharmakāmārthasiddhyartham kalpitānyucitānyatha || 12 ||

And many books of law and many manuals for sacrifice were composed on earth, each one fitting, so that people could fulfill duty, desire, and wealth.

और धरती पर कानून की कई किताबें और यज्ञ की कई विधियाँ बनाई गईं, जो सब सही थीं, ताकि लोग धर्म, इच्छा और धन पा सकें।

2.11.13

कालचक्रे वहत्यस्मिंस्ततो विगलिते क्रमे । प्रत्यहं भोजनपरे जने शाल्यर्जनोन्मुखे ॥ १३ ॥

kālacakre vahatyasmiṁstato vigalite krame | pratyaham bhojanapare jane śālyarjanonmukhe || 13 ||

As this wheel of time went on turning, that order slowly fell apart. People became absorbed every day in eating, eager only to gather their grain.

जैसे-जैसे समय का यह चक्र चलता रहा, वह तरीका धीरे-धीरे बिगड़ता गया। लोग हर दिन खाने-पीने में डूब गए, और बस अनाज इकट्ठा करने में लगे रहे।

2.11.14

द्वन्द्वानि संप्रवृत्तानि विषयार्थे महीभुजाम् । दण्ड्यतां संप्रयातानि भूतानि भूवि भूरिशः ॥ १४ ॥

dvandvāni saṁpravṛttāni viṣayārthe mahībhujām | daṇḍyatāṁ saṁprayātāni bhūtāni bhūvi bhūriśaḥ || 14 ||

Quarrels broke out among kings over land and wealth, and, in great numbers, people on earth fell into wrongdoing that called for punishment.

राजाओं के बीच ज़मीन और धन को लेकर झगड़े शुरू हो गए, और धरती पर बहुत सारे लोग ऐसे गलत काम करने लगे जिनके लिए सज़ा ज़रूरी थी।

2.11.15

ततो युद्धं विना भूपा मही पालयितुं क्षमाः । न समथोस्तदा याताः प्रजाभिः सह दैन्यताम् ॥ १५ ॥

tato yuddha vinā bhūpā mahī pālayituṁ kṣamāḥ | na samathostadā yātāḥ prajābhiḥ saha dainyatām || 15 ||

Then kings found they could no longer protect the land without fighting wars. Unable to manage, they fell into misery, together with their people.

तब राजाओं को लगा कि वे बिना लड़ाई किए धरती की रक्षा नहीं कर सकते। कुछ न कर पाने की हालत में, वे अपनी प्रजा के साथ दुखी हो गए।

2.11.16

तेषां दैन्यापनोदार्थं सम्यग्दृष्टिक्रमाय च । ततोऽस्मदादिभिः प्रोक्ता महत्यो ज्ञानदृष्टयः ॥ १६ ॥

teṣāṃ dainyāpanodārtham samyagdr̥ṣṭīkramāya ca | tato'smadādibhiḥ proktā mahatyō jñānadṛṣṭayaḥ || 16 ||

So, to end their misery and to give them a right way of seeing things, we sages — myself among the first — taught them great teachings, ways of seeing through knowledge.

इसलिए, उनका दुख मिटाने के लिए और उन्हें चीजों को सही तरीके से देखना सिखाने के लिए, हम ऋषियों ने - जिनमें मैं भी शुरू में शामिल था - उन्हें बड़ी शिक्षाएँ दीं, यानी ज्ञान से देखने के तरीके।

2.11.17

अध्यात्मविद्या तेनेयं पूर्व राजसु वर्णिता । तदनु प्रसृता लोके राजविद्येत्युदाहृता ॥ १७ ॥

adhyātmavidyā teneyam pūrva rājasu varṇitā | tadanu prasṛtā loke rājavidyetyudāhṛtā || 17 ||

This knowledge of the Self was taught first among kings in this way. After that it spread through the world, and it came to be called 'the king's knowledge.'

आत्मा का यह ज्ञान इसी तरह सबसे पहले राजाओं में सिखाया गया। उसके बाद यह पूरी दुनिया में फैल गया, और इसे 'राजा का ज्ञान' कहा जाने लगा।

2.11.18

राजविद्या राजगुह्यमध्यात्मज्ञानमुत्तमम् । ज्ञात्वा राघव राजानः परां निर्दुःखतां गताः ॥ १८ ॥

rājavidyā rājaguhyamadhyātmañānamuttamam | jñātvā rāghava rājānaḥ parāṃ nirdhuhkhatāṃ gatāḥ || 18 ||

Knowing this royal knowledge — the king's secret, the highest knowledge of the Self — kings reached, Raghava, the highest state, completely free of suffering.

इस राजा के ज्ञान को - जो राजा का राज है, आत्मा का सबसे ऊँचा ज्ञान है - जानकर, हे राघव, राजा उस सबसे ऊँची स्थिति तक पहुँचे, जहाँ कोई दुख नहीं है।

2.11.19

अथ राजस्वतीतेषु बहुष्वमलकीर्तिषु । अस्माद्दशरथाद्राम जातोऽद्य त्वमिहावनौ ॥ १९ ॥

atha rājasvatīteṣu bahuṣvāmalakīrtiṣu | asmāddaśarathādrāma jāto'dya tvamiha avanau || 19 ||

Then, after many kings of pure and spotless fame had come and gone, you, Rama, were born today on this earth from Dasharatha here.

फिर, कई ऐसे राजाओं के आने-जाने के बाद जिनकी शोहरत बेदाग थी, तुम, हे राम, आज इसी धरती पर इन्हीं दशरथ से पैदा हुए।

2.11.20

तव चातिप्रसन्नेऽस्मिञ्जातं मनसि पावनम् । निर्निमित्तमिदं चारु वैराग्यमरिमर्दन ॥ २० ॥

tava cātiprasanne'smiñjātaṃ manasi pāvanam | nirnimittamidam cāru vairāgyamari mardana || 20 ||

And in this your very clear mind, crusher of enemies, a beautiful, causeless dispassion for the world has arisen, one that purifies.

और तुम्हारे इस बिल्कुल साफ मन में, हे शत्रुओं को कुचलने वाले, संसार से एक सुंदर और बिना किसी वजह वाली विरक्ति पैदा हुई है, जो मन को पवित्र करती है।

2.11.21

सर्वस्यैव हिं सर्वस्य साधोरपि विवेकिनः । निमित्तपूर्वं वैराग्यं जायते राम राजसम् ॥ २१ ॥

sarvasyaiva hiṃ sarvasya sādhorāṃpe vivekinaḥ | nimittapūrvam vairāgyam jāyate rāma rājasam || 21 ||

Indeed, Rama, for anyone at all — even for a good and discerning person — dispassion usually arises because of some cause, and such dispassion is of the restless, passion-tinged kind.

सच तो यह है, हे राम, कि किसी भी इंसान में - चाहे वह भला और समझदार ही क्यों न हो - विरक्ति अक्सर किसी न किसी वजह से पैदा होती है, और ऐसी विरक्ति बेचैन और आवेश भरी होती है।

2.11.22

इदं त्वपूर्वमुत्पन्न चमत्कारकरं । तवानिमित्तं वैराग्यं सात्त्विकं स्वविवेकजम् ॥ २२ ॥

idaṃ tvapūrvamutpanna camatkārakaram | tavānimittaṃ vairāgyam sāttvikam svavivekajam || 22 ||

But this dispassion of yours has arisen without any outside cause. It is something new, never seen before, truly astonishing — the pure kind, born only from your own inner discernment.

लेकिन तुम्हारी यह विरक्ति बिना किसी बाहरी वजह के पैदा हुई है। यह बिल्कुल नई है, पहले कभी न देखी गई, सच में हैरान करने वाली - यह शुद्ध किस्म की है, जो सिर्फ तुम्हारी अपनी अंदरूनी समझ से पैदा हुई है।

2.11.23

बीभत्सं विषयं दृष्ट्वा कौ नाम न विरज्यते । सतामुत्तमवैराग्य विवेकादेव जायते ॥ २३ ॥

bībhatsaṃ viṣayaṃ dṛṣṭvā kau nāma na virajyate | satāmuttamavairāgya vivekādeva jāyate || 23 ||

Who does not turn away in dispassion after seeing something disgusting? But for the truly good, the highest dispassion is born from discernment alone, with no such trigger needed.

कोई घिनौनी चीज़ देखकर कौन विरक्त नहीं होता? लेकिन सच में भले लोगों में सबसे ऊँची विरक्ति सिर्फ समझ से पैदा होती है, उसके लिए किसी वजह की ज़रूरत नहीं होती।

2.11.24

ते महान्तौ महाप्राज्ञा निमित्तेन विनैव हि । वैराग्यं जायते येषां तेषां ह्यमलमानसम् ॥ २४ ॥

te mahāntau mahāprājñā nimittena vinaiva hi | vairāgyam jāyate yeṣāṃ teṣāṃ hyamalamānasam || 24 ||

Those great and truly wise people, in whom dispassion arises without any outside cause at all — theirs is a mind that is completely pure.

वे बड़े और सच में बुद्धिमान लोग, जिनमें बिना किसी भी बाहरी वजह के विरक्ति पैदा होती है - उनका मन पूरी तरह साफ होता है।

2.11.25

स्वविवेकचमत्कारपरामर्शविरक्तया । राजते हि धिया जन्तुर्युवेव वरमालया ॥ २५ ॥

svavivekacamatkāraparāmarśaviraktyā | rājate hi dhīyā janturyuveva varamālayā || 25 ||

With a mind made detached by reflecting on the wonder of one's own discernment, a person truly shines — like a young man wearing a wedding garland.

अपनी ही समझ के चमत्कार पर सोच-विचार करके जो मन विरक्त हो जाता है, उस मन के साथ इंसान सच में चमकता है - जैसे कोई जवान आदमी शादी की माला पहनकर चमकता है।

2.11.26

परामृश्य विवेकेन संसाररचनामिमाम् । वैराग्यं येऽधिगच्छन्ति त एव पुरुषोत्तमाः ॥ २६ ॥

parāmṛśya vivekenasāraṣārācanāmimām | vairāgyaṁ ye'dhigacchanti ta eva puruṣottamāḥ || 26 ||

Those who look closely, with discernment, at this whole construction called worldly life, and thereby reach dispassion — they alone are the best of men.

जो लोग समझ के साथ इस पूरे ढांचे को, जिसे संसार कहते हैं, गौर से परखते हैं, और इस तरह विरक्ति तक पहुँचते हैं - वही असली सबसे अच्छे इंसान हैं।

2.11.27

स्वविवेकवाशदेव विचार्येदं पुनःपुनः । इन्द्रजालं परित्याज्यं सबाह्याभ्यन्तरं बलात् ॥ २७ ॥

svavivekavaśādeva vicāryedaṁ punaḥpunaḥ | indrajālaṁ parityājyaṁ sabāhyābhyantaraṁ balāt || 27 ||

By the strength of your own discernment alone, think about this again and again, and by force give up this whole magic-show of a world, both outside and inside.

सिर्फ अपनी समझ के बल पर, इस बारे में बार-बार सोचो, और ज़ोर लगाकर इस पूरी जादू जैसी दुनिया को छोड़ दो, बाहर से भी और भीतर से भी।

2.11.28

श्मशानमापद दैन्यं दृष्ट्वा को न विरज्यते । तद्वैराग्यं परं श्रेयः स्वतो यदभिजायते ॥ २८ ॥

śmaśānamāpada daīnyaṁ dṛṣṭvā ko na virajyate | tadvairāgyaṁ paraṁ śreyaḥ svato yadabhiajāyate || 28 ||

Who does not feel dispassion at the sight of a cremation ground, a disaster, or someone in misery? But the dispassion that arises all by itself, with no such cause, is the highest good.

श्मशान देखकर, या कोई आफत, या किसी की बद्दहाली देखकर कौन विरक्त नहीं होता? लेकिन जो विरक्ति अपने आप, बिना किसी ऐसी वजह के पैदा होती है, वही सबसे बड़ी भलाई है।

2.11.29

अकृत्रिमविरागत्वं महत्त्वमलमागतः । योग्योऽसि ज्ञानसारस्य बीजस्येव मृदुस्थलम् ॥ २९ ॥

akṛtrimavirāgatvaṁ mahattvamalamāgataḥ | yogyo'si jñānasārasya bījasyaiva mṛdusthalam || 29 ||

You have fully attained both natural dispassion and true greatness. You are fit to receive the essence of knowledge, the way soft, fertile ground is fit for a seed.

तुमने बिना बनावट वाली विरक्ति और सच्ची महानता, दोनों पूरी तरह पा ली है। तुम ज्ञान के सार को पाने के लायक हो, जैसे नरम और उपजाऊ ज़मीन बीज के लायक होती है।

2.11.30

प्रसादात्परमेशस्य नाथस्य परमात्मनः । त्वादृशस्य शुभा बुद्धिर्विवेकमनुधावति ॥ ३० ॥

prasādātparameśasya nāthasya paramātmnaḥ | tvādrśasya śubhā buddhirvivekamanudhāvati || 30 ||

By the grace of the highest lord, the master who is the supreme Self, the good mind of a person like you keeps running after discernment.

सबसे बड़े स्वामी की, यानी परम आत्मा की, कृपा से, तुम जैसे इंसान का भला मन हमेशा समझ के पीछे-पीछे दौड़ता रहता है।

2.11.31

क्रियाक्रमेण महता तपसा नियमेन च । दानेन तीर्थयात्राभिश्चिरकालं विवेकतः ॥ ३१ ॥

kriyākrameṇa mahatā tapasā niyamena ca | dānena tīrthayātrābhiścīrakālaṃ vivekataḥ || 31 ||

Through a long course of ritual action, great austerity, discipline, giving, and pilgrimages — over a long time, and through discernment —

कर्मकांड के लंबे रास्ते से, बड़े तप से, नियम से, दान से, और तीर्थयात्राओं से - लंबे समय तक, और समझ के साथ -

2.11.32

दुष्कृते क्षयमापन्ने परमार्थविचारणे । काकतालीययोगेन बुद्धिर्जन्तोः प्रवर्तते ॥ ३२ ॥

duṣkṛte kṣayamāpannē paramārthavicāraṇē | kākatāliya-yōgēna buddhirjantōḥ pravartatē || 32 ||

when one's bad deeds have finally worn away, the mind of a person turns, purely by chance, the way a crow lands on a branch just as its fruit happens to fall, toward inquiry into the highest truth. जब किसी के बुरे कर्म आखिरकार खत्म हो जाते हैं, तो इंसान का मन बस इत्तेफाक से, जैसे कौआ किसी डाल पर बैठे और ठीक उसी वक्त वहाँ से फल गिर जाए, सबसे बड़े सच को खोजने की ओर मुड़ता है।

2.11.33

क्रियापरास्तावदलं चक्रावर्तिभिरावृताः । भ्रमन्तीह जना यावन्न पश्यन्ति परं पदम् ॥ ३३ ॥

kriyāparāstāvadalaṃ cakrāvartibhirāvṛtāḥ | bhramantīha janā yāvann na paśyanti paraṃ padam || 33 ||

People devoted only to ritual action stay caught in whirlpool after whirlpool, wandering around here, for as long as they fail to see the highest state.

जो लोग सिर्फ कर्मकांड में लगे रहते हैं, वे एक के बाद एक भँवर में फँसे रहते हैं, यहाँ भटकते रहते हैं, जब तक कि उन्हें वह सबसे ऊँची स्थिति दिखाई नहीं देती।

2.11.34

यथाभूतमिदं दृष्ट्वा संसारं तन्मयीं धियम् । परित्यज्य परं यान्ति निरालाना गजा इव ॥ ३४ ॥

yathābhūtamidaṃ dṛṣṭvā saṃsāraṃ tanmayīṃ dhiyam | parityajya paraṃ yānti nirālānā gajā iva || 34 ||

Seeing this world exactly as it really is, and giving up the mind that clings to it, they go on to the highest state — like elephants set free from the post that once tied them.

इस संसार को बिल्कुल वैसा ही देखकर जैसा यह सच में है, और उससे चिपके हुए मन को छोड़कर, वे उस सबसे ऊँची स्थिति की ओर बढ़ जाते हैं - जैसे हाथी उस खूँटे से आज़ाद हो जाएँ जिससे वे बंधे थे।

2.11.35

विषमेयमनन्तेह राम संसारसंसृतिः । देहयुक्तो महाजन्तुर्विना ज्ञानं न पश्यति ॥ ३५ ॥

viṣameyamānanteha rāma saṃsārasaṃsṛtiḥ | dehayukto mahājanturvinā jñānaṃ na paśyati || 35 ||

Rama, this river of worldly life is rough and has no end. A great being joined to a body cannot see beyond it without knowledge.

राम, संसार की यह धारा ऊबड़-खाबड़ है और इसका कोई अंत नहीं है। शरीर से जुड़ा हुआ कोई भी बड़ा जीव बिना ज्ञान के इसके आगे नहीं देख सकता।

2.11.36

ज्ञानयुक्तिप्लवेनैव संसाराब्धिं सुदुस्तरम् । महाधियः समुत्तीर्णा निमेषेण रघूद्वह ॥ ३६ ॥

jñānayuktiplavenaiva saṁsārābhiṁ sudustaram | mahādhiyaḥ samuttīrṇā nimeṣeṇa raghūdvaha || 36 ||

Only by the raft of the true method of knowledge have the truly wise crossed the ocean of worldly life — an ocean very hard to cross — crossing it in the blink of an eye, best of the Raghus.

सिर्फ ज्ञान के सही तरीके की नाव से ही सच में समझदार लोगों ने संसार के सागर को पार किया है - एक ऐसा सागर जिसे पार करना बहुत मुश्किल है - और उन्होंने इसे पलक झपकते ही पार कर लिया, हे रघुकुल के सबसे श्रेष्ठ।

2.11.37

तामिमां ज्ञानयुक्तिं त्वं संसाराम्बोधितारिणीम् । शृणुष्ववहितो बुद्ध्या नित्यावहितया तया ॥ ३७ ॥

tāmimāṁ jñānayuktiṁ tvaṁ saṁsārāmbodhitāriṇīm | śṛṇuṣvāvahito buddhyā nityāvahitayā tayā || 37 ||

So listen carefully, with a mind that stays constantly attentive, to this method of knowledge that carries a person across the ocean of the world.

तो ध्यान से सुनो, ऐसे मन से जो लगातार सजग रहे, इस ज्ञान के तरीके को, जो इंसान को संसार के सागर के पार ले जाता है।

2.11.38

यस्मादनन्तसंरम्भा जागत्यो दुःखभीतयः । चिरायान्तर्दहन्त्येता विना युक्तिमनिन्दिताम् ॥ ३८ ॥

yasmādanantasamrāmbhā jāgatyō duḥkhabhīṭayaḥ | cirāyāntardahantyetā vinā yuktimaninditām || 38 ||

Because the fears of suffering that belong to this world are endless and fierce, and without this flawless method they keep burning a person from within for a very long time.

क्योंकि इस संसार से जुड़े दुख के डर अंतहीन और तेज़ होते हैं, और इस बेदाग तरीके के बिना, ये किसी इंसान को भीतर ही भीतर बहुत लंबे समय तक जलाते रहते हैं।

2.11.39

शीतवातातपादीनि द्वन्द्वदुःखानि राघव । ज्ञानशक्तिं विना केन सह्यतां यान्ति साधुषु ॥ ३९ ॥

śītavātātapādīni dvandvaduḥkhāni rāghava | jñānaśaktiṁ vinā kena sahyatāṁ yānti sādhuṣu || 39 ||

Raghava, without the power of knowledge, how could the pairs of suffering — cold, wind, heat, and the rest — ever become bearable, even for good people?

हे राघव, ज्ञान की ताकत के बिना, सर्दी, हवा, गर्मी जैसे दुख के जोड़े भला और लोगों के लिए भी सहने लायक कैसे बन सकते हैं?

2.11.40

आपतन्ति प्रतिपदं यथाकालं दहन्ति च । दुःखचिन्ता नरं मूढं तृणमग्निशिखा इव ॥ ४० ॥

āpatanti pratipadam yathākālaṁ dahanti ca | duḥkhacintā naraṁ mūḍhaṁ tṛṇamagnīśikhā iva || 40 ||

Anxious thoughts of suffering fall on a foolish man at every step, and in time they burn him up — just as a tongue of fire burns dry grass.

दुख की चिन्ताएँ किसी मूर्ख आदमी पर हर कदम पर आ गिरती हैं, और समय के साथ उसे जला देती हैं - बिल्कुल जैसे आग की लपट सूखी घास को जला देती है।

2.11.41

प्राज्ञं विज्ञातविज्ञेयं सम्यग्दर्शनमाधयः न दहन्ति वनं वर्षासिक्तमग्निशिखा इव ॥ ४१ ॥

prajñam vijñātavijñeyam samyagdarśanamādhayaḥ na dahanti vanam varṣāsiktamagnīśikhā iva || 41 ||

But such worries cannot burn a wise man, one who has understood what needs to be understood and who sees things rightly — just as a tongue of fire cannot burn a forest soaked by the monsoon rains.

लेकिन ऐसी चिंताएँ किसी समझदार इंसान को नहीं जला सकतीं, जिसने वह सब समझ लिया है जो समझना था और जो चीज़ों को सही तरह देखता है - बिल्कुल जैसे आग की लपट बरसात में भीगे हुए जंगल को नहीं जला सकती।

2.11.42

आधिव्याधिपरावर्ते संसारमरुमारुते क्षुभितेऽपि न तत्त्वज्ञो भज्यते कल्पवृक्षवत् ॥ ४२ ॥

ādhi vyādhīparāvarte saṁsāramarumārute kṣubhite'pi na tattvajño bhajyate kalpavṛkṣavat || 42 ||

Even when the desert storm-wind of worldly life rages, whirling with troubles of mind and body, one who knows the truth is not broken by it — like a wish-granting tree that never breaks.

संसार की रेगिस्तानी आँधी जब मन और शरीर की परेशानियों के साथ ज़ोर से चलती है, तब भी जो सच को जानता है वह इससे टूटता नहीं - जैसे मनचाहा फल देने वाला वह पेड़ कभी नहीं टूटता।

2.11.43

तत्त्वं ज्ञातुमतो यत्नाद्धीमानेव हि धीमता प्रामाणिकः प्रबुद्धात्मा प्रष्टव्यः प्रणयान्वितम् ॥ ४३ ॥

tattvaṁ jñātumato yatnāddhīmāneva hi dhīmatā prāmāṇikaḥ prabuddhātmā praṣṭavyaḥ praṇayānvitam || 43 ||

So, to know the truth, a wise person should make the effort to question — with real respect and warmth — another wise person, one who is trustworthy and truly awake.

इसलिए, सच को जानने के लिए, एक समझदार इंसान को कोशिश करके - सच्ची इज़्ज़त और अपनेपन के साथ - किसी दूसरे समझदार इंसान से पूछना चाहिए, जो भरोसेमंद हो और सच में जागा हुआ हो।

2.11.44

प्रामाणिकस्य पृष्ठस्य वक्तुरुत्तमचेतसः यत्नेन वचनं ग्राह्यमंशुकेनेव कुङ्कुमम् ॥ ४४ ॥

prāmāṇikasya pṛṣṭasya vakturuttamacetaso yatnena vacanam grāhyamaṁśukeṇeva kuṅkumam || 44 ||

The words of a trustworthy teacher, once asked, whose mind is of the finest kind, should be taken in carefully — the way a cloth soaks up saffron dye.

एक भरोसेमंद गुरु के शब्द, जिनसे पूछा गया हो, जिनका मन सबसे बढ़िया हो, उन्हें ध्यान से अपनाना चाहिए - जैसे कपड़ा केसर के रंग को सोख लेता है।

2.11.45

अतत्त्वज्ञमनादेयवचनं वाग्विदां वर यः पृच्छति नरं तस्मान्नास्ति मूढतरोऽपरः ॥ ४५ ॥

atattvajñam anādeyavacanam vāgvidāṁ vara yaḥ pṛcchati naram tasmān nāsti mūḍhataro'paraḥ || 45 ||

Best of speakers, there is no greater fool than a man who goes and questions someone who does not know the truth, whose words are not worth taking.

हे वाणी में सबसे श्रेष्ठ, उस आदमी से बड़ा कोई मूर्ख नहीं जो किसी ऐसे इंसान से सवाल पूछता है जिसे सच का पता नहीं और जिसकी बातें मानने लायक नहीं हैं।

2.11.46

प्रामाणिकस्य तज्ज्ञस्य वक्तुः पृष्ठस्य यत्नतः । नानुतिष्ठति यो वाक्य नान्यस्तस्मान्नराधमः ॥ ४६ ॥

prāmāṇikasya tajjñasya vaktuḥ pṛṣṭasya yatnataḥ | nānutiṣṭhati yo vākya nānyastasmānnarādhamah || 46 ||

And there is no lower man than one who carefully questions a trustworthy teacher who knows the truth, and then does not follow what he says.

और उस आदमी से नीचे कोई नहीं जो किसी भरोसेमंद गुरु से, जो सच जानता है, ध्यान से पूछता तो है, लेकिन फिर उसकी बात नहीं मानता।

2.11.47

अज्ञतातज्ज्ञते पूर्व वक्तुर्निर्णय कार्यतः । यः करति नरः प्रश्नं प्रच्छकः स महामतिः ॥ ४७ ॥

ajñatātajjñate pūrva vakturnirṇaya kāryataḥ | yaḥ karati naraḥ praśnaṁ pracchakaḥ sa mahāmatiḥ || 47 ||

The man who first judges, by how a person actually acts, whether that person is ignorant or truly knows the truth, and only then asks his question — that questioner has real intelligence.

जो आदमी पहले यह देखता है कि सामने वाला अपने काम-व्यवहार से अनजान है या सच में जानने वाला है, और उसके बाद ही अपना सवाल पूछता है - वही पूछने वाला सच में समझदार है।

2.11.48

अनिर्णय प्रवक्तारं बालः प्रश्नं करोति यः । अधम प्रच्छकः स स्यान्न महार्थस्य भाजनम् ॥ ४८ ॥

anirṇaya pravaktāraṁ bālaḥ praśnaṁ karoti yaḥ | adhama pracchakaḥ sa syānna mahārthasya bhājanam || 48 ||

But a foolish person who asks his question without first judging the teacher is the lowest kind of questioner, and is not fit to receive anything of real value.

लेकिन जो नादान इंसान बिना गुरु को परखे ही अपना सवाल पूछ बैठता है, वह सबसे घटिया किस्म का पूछने वाला है, और वह किसी असली कीमती बात को पाने के लायक नहीं है।

2.11.49

पूर्वापरसमाधानक्षमबुद्धावनिन्दिते । पृष्ठं प्राज्ञेन वक्तव्यं नाधमे पशुधर्मिणि ॥ ४९ ॥

pūrvāparasamādhānakṣamabuddhāvanindite | pṛṣṭaṁ prājñena vaktavyaṁ nādhame paśudharmini || 49 ||

A wise man should answer a question only when it is asked by someone whose mind can properly connect what comes before and after, and who is of good character — not by a low person who behaves like an animal.

एक समझदार इंसान को सवाल का जवाब तभी देना चाहिए जब पूछने वाले का मन आगे-पीछे की बातों को ठीक से जोड़ पाता हो, और जो अच्छे चरित्र का हो - न कि किसी ऐसे घटिया इंसान को जो जानवर जैसा बर्ताव करता है।

2.11.50

प्रामाणिकार्थयोग्यत्वं प्रच्छकस्याविचार्य च । यो वक्ति तमिह प्राज्ञाः प्राहुर्मूढतरं नरम् ॥ ५० ॥

prāmāṇikārthayogyatvaṁ pracchakasyāvicārya ca | yo vakti tamih prājñāḥ prāhurmūḍhatarāṇaṁ naram || 50 ||

And the wise call a person an even greater fool if he answers without first checking whether the one asking is trustworthy and fit to receive it.

और बुद्धिमान लोग उस इंसान को और भी बड़ा मूर्ख कहते हैं जो बिना यह जाँचे कि पूछने वाला भरोसे लायक है या नहीं और इसे पाने के काबिल है या नहीं, जवाब दे देता है।

2.11.51

त्वमतीव गुणश्लाघी प्रच्छको रघुनन्दन । अहं च वक्तुं जानामि समो योगोऽयमावयो ॥ ५१ ॥

tvamāṭiva guṇaślāghī pracchako raghunandana | ahaṃ ca vaktuṃ jānāmi samo yogo'yamāvayom || 51 ||

You, joy of the Raghu line, are a truly excellent questioner, full of good qualities, and I know how to answer well. So this match between the two of us is a fitting one.

तुम, हे रघुकुल के आनंद, सच में एक बेहतरीन पूछने वाले हो, अच्छे गुणों से भरे हुए, और मुझे अच्छी तरह जवाब देना आता है। तो हम दोनों की यह जोड़ी सही बैठती है।

2.11.52

यदहं वच्मि तद्यत्नात्त्वया शब्दार्थकोविद । एतद्वस्त्विति निर्णयि हृदि कार्यमखण्डितम् ॥ ५२ ॥

yadahaṃ vacmi tadyatnāttvayā śabdārthakovidā | etadvastviti nirṇaya hr̥di kāryamakṣṇḍitam || 52 ||

So, you who understand the meaning of words so well, whatever I tell you, hold it firmly and completely in your heart, deciding for yourself, 'This is the real truth.'

तो, तुम जो शब्दों का मतलब इतनी अच्छी तरह समझते हो, मैं जो भी कहूँ, उसे अपने मन में मज़बूती से और पूरी तरह पकड़े रखना, और खुद तय करना कि 'यही असली सच है।'

2.11.53

महानसि विरक्तोऽसि तत्त्वज्ञोऽसि जनस्थितौ । त्वयि चोक्तं लगत्यन्तः कुङ्कुमाम्बु यथांशुके ॥ ५३ ॥

mahānasi virakto'si tattvajño'si janasthitau | tvayi coktaṃ lagatyantaḥ kuṅkumāmbu yathāṃśuke || 53 ||

You are a great soul, you are free of worldly attachment, and you already know the truth even while living your daily life. Whatever is told to you sinks deep inside and stays there, the way saffron dye sinks into cloth.

तुम एक महान आत्मा हो, तुम संसार के मोह से मुक्त हो, और रोज़मर्रा की ज़िंदगी जीते हुए भी तुम सच को जानते हो। तुमसे जो भी कहा जाता है वह भीतर गहरे उतर जाता है और वहीं टिका रहता है, जैसे केसर का रंग कपड़े में उतर जाता है।

2.11.54

उक्तावधानपरमा परमार्थविवेचिनी । विशत्यर्थं तव प्रज्ञा जलमध्यमिवार्कभाः ॥ ५४ ॥

uktāvadhānaparamā paramārthavivecinī | viśatyarthaṃ tava prajñā jalamadhyamivārkabhāḥ || 54 ||

Your mind pays complete attention to what is said and can tell apart the highest truth. It enters into the meaning the way sunlight enters deep into water.

तुम्हारा मन जो कहा जाता है उस पर पूरा ध्यान देता है और सबसे बड़े सच को अलग पहचान लेता है। यह मतलब के भीतर वैसे ही उतर जाता है जैसे सूरज की रोशनी पानी के भीतर गहरे उतर जाती है।

2.11.55

यद्यद्वच्मि तदादेयं हृदि कार्यं प्रयत्नतः । नोचेत्प्रष्टव्य एवाहं न त्वयेह निरर्थकम् ॥ ५५ ॥

yadyadvacmi tadādeyaṃ hr̥di kārya prayatnataḥ | nocetpraṣṭavya evāhaṃ na tvayeha nirarthakam || 55 ||

Whatever I tell you, you must take it in and hold it carefully in your heart. Otherwise, there was no point in your asking me at all.

मैं जो भी कहूँ, तुम्हें उसे अपनाना है और अपने मन में सँभालकर रखना है। नहीं तो, तुम्हारा मुझसे यह सब पूछना ही बेकार होगा।

2.11.56

मनो हि चपलं राम संसारवनमर्कटम् । संशोध्य हृदि यत्नेन श्रोतव्या परमार्थगीः ॥ ५६ ॥

mano hi capalaṃ rāma saṃsāravanamarkaṭam | saṃśodhya hṛdi yatnena śrotavyā paramārthagīḥ || 56 ||

For the mind, Rama, is restless, like a monkey swinging through the forest of this world. Purify it carefully within your heart, and only then listen to this speech about the highest truth.

क्योंकि मन, हे राम, चंचल होता है, जैसे बंदर इस संसार रूपी जंगल में उछल-कूद करता है। इसे अपने मन में ध्यान से साफ करो, और तभी सबसे बड़े सच की यह बात सुनो।

2.11.57

अविवेकिनमज्ञानमसज्जनरतिं जनम् । चिरं दूरतरे कृत्वा पूजनीया हि साधवः ॥ ५७ ॥

avivekinamajñānamasajjanaratiṃ janam | ciraṃ dūratara kṛtvā pūjanīyā hi sādhaḥ || 57 ||

Keep well away, for good, from a person who lacks judgment, who is ignorant, and who enjoys the company of bad people. Good people, on the other hand, are truly worth honoring.

जो इंसान समझदार नहीं है, जो अनजान है, और जिसे बुरे लोगों की संगत पसंद है, उससे हमेशा के लिए दूर रहो। दूसरी तरफ, अच्छे लोग सच में इज़्ज़त के लायक हैं।

2.11.58

नित्यं सज्जनसंपर्काद्विवेक उपजायते । विवेकपादपस्यैव भोगमोक्षौ फले स्मृतौ ॥ ५८ ॥

nityaṃ sajjanaṃsampaṅkādviveka upajāyate | vivekapādapasyeva bhogamokṣau phale smṛtau || 58 ||

Discernment is always born from keeping company with good people. And enjoyment and liberation, we are told, are the two fruits that grow on the tree of discernment.

समझ हमेशा अच्छे लोगों की संगत से पैदा होती है। और भोग और मुक्ति, ऐसा कहा गया है, समझ के पेड़ पर लगने वाले दो फल हैं।

2.11.59

मोक्षद्वारे द्वारपालाश्चत्वारः परिकीर्तिताः । शमो विचारः संतोषश्चतुर्थः साधुसंगमः ॥ ५९ ॥

mokṣadvāre dvārapālāścātvarāḥ parikīrtitāḥ | śamo vicāraḥ saṃtoṣaścaturthaḥ sādhusaṅgamaḥ || 59 ||

At the door of liberation, four gatekeepers are named: calm, inquiry, contentment, and the fourth — keeping company with good people.

मुक्ति के दरवाज़े पर चार पहरेदार बताए गए हैं - शांति, विचार, संतोष, और चौथा - अच्छे लोगों की संगत।

2.11.60

एते सेव्याः प्रयत्नेन चत्वारौ द्वौ त्रयोऽथवा । द्वारमुद्घाटयन्त्येते मोक्षराजगृहे तथा ॥ ६० ॥

ete sevyaḥ prayatnena catvārau dvau trayo'thavā | dvāramuddhāṭayantye te mokṣarājagṛhe tathā || 60 ||

These should be cultivated with real effort — all four of them, or two, or three. They are the ones who open the door to the great house of liberation.

इन्हें पूरी कोशिश से अपनाना चाहिए - चारों को, या दो को, या तीन को। यही मुक्ति के बड़े घर का दरवाज़ा खोलते हैं।

2.11.61

एकं वा सर्वयत्नेन प्राणांस्त्यक्त्वा समाश्रयेत् । एकस्मिन्वशगे यान्ति चत्वारोऽपि वशं यतः ॥ ६१ ॥

ekam vā sarvayatnena prāṇāṁstyaktvā samāśrayet ekasminvaśage yānti catvāro'pi vaśam yataḥ || 61 ||

Or, with all your effort — even at the cost of your very life — take hold of just one of these four.

Because once one of them is under your control, all four come under your control.

या फिर, पूरी ताकत लगाकर - चाहे इसके लिए जान भी क्यों न देनी पड़े - इन चारों में से सिर्फ एक को पकड़ लो। क्योंकि जैसे ही इनमें से एक तुम्हारे बस में आ जाता है, बाकी तीनों भी अपने आप तुम्हारे बस में आ जाते हैं।

2.11.62

सविवेको हि शास्त्रस्य ज्ञानस्य तपसः श्रुतेः । भाजनं भूषणाकारो भास्करस्तेजसामिव ॥ ६२ ॥

saviveko hi śāstrasya jñānasya tapasaḥ śruteḥ bhājanam bhūṣaṇākāro bhāskarastejasāmiva || 62 ||

A person with discernment is a true vessel for scripture, knowledge, austerity, and sacred learning — indeed their very ornament — just as the sun is the greatest among all sources of light.

समझ वाला इंसान शास्त्र, ज्ञान, तप और वेद-विद्या को धारण करने के लायक असली पात्र है - बल्कि उनका गहना है - बिल्कुल जैसे सूरज सारी रोशनियों में सबसे बड़ा है।

2.11.63

घनतषपयातं हि प्रज्ञामान्द्यमचेतसाम् । याति स्थावरतामम्बु जाड्यात्पाषाणतामिव ॥ ६३ ॥

ghanataṣapayātaṁ hi prajñāmāndyamacetāsām yāti sthāvaratāmambu jāḍyātpāṣāṇatāmiva || 63 ||

The dull understanding of thoughtless people turns hard and fixed, the way water, through cold, freezes and becomes hard like stone.

बिना सोचे-समझे रहने वाले लोगों की सुस्त समझ सख्त और जमी हुई हो जाती है, बिल्कुल जैसे पानी ठंड से जमकर पत्थर जैसा सख्त हो जाता है।

2.11.64

त्वं तु राघव सौजन्यगुणशास्त्रार्थदृष्टिभिः । विकसितान्तःकरणः स्थितः पद्म इवोदये ॥ ६४ ॥

tvam tu rāghava saujanyaguṇaśāstrārthadr̥ṣṭibhiḥ vikāsītāntaḥkaraṇaḥ sthitaḥ padma ivodaye || 64 ||

But you, Raghava, with your good nature, your virtues, and your insight into the meaning of the scriptures, stand with your heart wide open — like a lotus opening at sunrise.

लेकिन तुम, हे राघव, अपने अच्छे स्वभाव, अपने गुणों, और शास्त्रों का मतलब समझने की अपनी सूझ के साथ, अपना मन पूरी तरह खुला रखे खड़े हो - जैसे सूरज उगते ही कमल खिल जाता है।

2.11.65

इमां ज्ञानगिरिं श्रोतुमवबोधं च सन्मते । अर्हस्युद्धतकर्णस्त्वं जन्तुर्वीणास्वनं यथा ॥ ६५ ॥

imāṁ jñānagiraṁ śrotumavabodhaṁ ca sanmate arhasyuddhatakarṇastvam janturvīṇāsvanaṁ yathā || 65 ||

Good-hearted one, you deserve to hear and to truly understand this speech of knowledge, listening with ears wide open — the way a wild creature turns its ears toward the sound of a lute.

हे भले मन वाले, तुम इस ज्ञान की बात को सुनने और सच में समझने के लायक हो, कान पूरी तरह खोलकर सुनते हुए - जैसे कोई जंगली जीव वीणा की आवाज़ की तरफ अपने कान लगाता है।

2.11.66

वैराग्याभ्यासयोगेन समसौजन्यसंपदाम् । अर्जनां कुरुतां राम यत्र नाशो न विद्यते ॥ ६६ ॥

vairāgyābhyāsayogena samasaujanyasampadām | arjanāṃ kurutāṃ rāma yatra nāśo na vidyate || 66 ||

Through the practice of dispassion, may you, Rama, together with those of equally good nature, gain that wealth where nothing is ever lost.

विरक्ति के अभ्यास से, हे राम, तुम अपने जैसे अच्छे स्वभाव वालों के साथ मिलकर, वह धन पाओ जो कभी नष्ट नहीं होता।

2.11.67

शास्त्रसज्जनसंसर्गपूर्वकैः सतपोदमैः । आदौ संसारमुत्तयर्थं प्रज्ञामेवाभिवर्धयेत् ॥ ६७ ॥

śāstrasajjanasamsargapūrvakaiḥ satapodamaiḥ ādau saṃsāramu'ktyartha prajñāmevābhivardhayet || 67 ||

First, through real austerity and self-control, joined with the study of scripture and the company of good people, one should grow one's own wisdom, in order to become free from this world.

सबसे पहले, सच्चे तप और आत्म-संयम से, शास्त्रों के अध्ययन और अच्छे लोगों की संगत के साथ, इंसान को अपनी समझ बढ़ानी चाहिए, ताकि वह इस संसार से मुक्त हो सके।

2.11.68

एतदेवास्य मौर्यस्य परमं विद्धि नाशनम् । यदिदं प्रेक्ष्यते शास्त्रं किञ्चित्संस्कृतया धिया ॥ ६८ ॥

etadevāsya maurysya paramaṃ viddhi nāśanam | yadidaṃ prekṣyate śāstraṃ kiñcitsaṃskṛtayā dhiyā || 68 ||

Know that the best way to destroy this foolishness is simply this: to look at this teaching, even a little, with a mind that has been properly trained.

जान लो कि इस मूर्खता को मिटाने का सबसे अच्छा तरीका बस यही है - इस शिक्षा को, थोड़ा ही सही, एक ठीक से सिखाए गए मन से देखना।

2.11.69

संसारविषवृक्षोऽयमेकमास्पदमापदाम् । अज्ञं संमोहयेन्नित्यं मौर्ख्यं यत्नेन नाशयेत् ॥ ६९ ॥

saṃsāravīṣavṛkṣo'yamekamāspadamāpadām | ajñaṃ saṃmohayennityaṃ maurkhya yatnena nāśayet || 69 ||

This world is a poison tree, and it is the one true source of every misfortune. It keeps confusing the person who does not understand. One must work hard to destroy this foolishness.

यह संसार एक जहरीला पेड़ है, और यही हर मुसीबत की असली जड़ है। यह उस इंसान को हमेशा उलझन में डालता रहता है जो नहीं समझता। इस मूर्खता को मिटाने के लिए मेहनत करनी चाहिए।

2.11.70

दुराशासर्पगत्येन मौर्ख्येण हृदि वल्गता । चेतः संकोचमायाति चर्माग्राविव योजितम् ॥ ७० ॥

durāśāsarpatyena maurkhyeṇa hṛdi valgatā | cetaḥ saṃkocamāyāti carmāgnāviva yojitam || 70 ||

When foolishness moves through the heart like a snake made of false hope, the mind shrinks and shrivels up — the way a piece of leather curls up when it is put into fire.

जब मूर्खता झूठी उम्मीद के साँप की तरह दिल में रेंगती है, तो मन सिकुड़ जाता है और मुरझा जाता है - बिल्कुल जैसे चमड़े का टुकड़ा आग में डालने पर सिकुड़ जाता है।

2.11.71

प्राज्ञे यथार्थभूतेयं वस्तुदृष्टिः प्रसीदति । दृग्विन्दौ निरम्भोदे सकलामलमण्डले ॥ ७१ ॥

prājñe yathārthabhūteyaṃ vastudṛṣṭiḥ prasīdati | dṛgvidendau nirambhode sakalāmalamaṇḍale || 71 ||

In a wise person, this true way of seeing things becomes clear — like the sight of the moon becomes clear in a cloudless, perfectly spotless sky.

एक समझदार इंसान में, चीज़ों को सच में जैसा है वैसा देखने का यह तरीका साफ हो जाता है - जैसे बादल रहित, बिल्कुल बेदाग आसमान में चाँद का नज़ारा साफ दिखता है।

2.11.72

पूर्यापविचारार्थश्चास्त्वातुर्यशालिनी । सविकासा मतिर्यस्य स पुमानिह कथ्यते ॥ ७२ ॥

pūryāpavicārārthaścāstvāturyaśālīnī | savikāsā matirasya sa pumāniha kathyate || 72 ||

One whose mind eagerly examines the full meaning of things, looking at what came before and what comes after, and whose understanding has thus blossomed open — that is who is truly called a man here.

जिसका मन उत्सुकता से चीज़ों का पूरा मतलब जाँचता है, आगे-पीछे की बातों को देखते हुए, और जिसकी समझ इस तरह पूरी तरह खुल गई है - उसी को यहाँ सच में इंसान कहा जाता है।

2.11.73

विकसितेन सितेन तमोमुचा वरविचारणशीतलोचिषा । गुणवता हृदयेन विराजसे त्वममलेन नभः शशिना यथा ॥ ७३ ॥

vikasitena sitena tamomucā varavicāraṇaśītalociṣā | guṇavatā hṛdayena virājase tvamamalena nabhaḥ śaśīnā yathā || 73 ||

With a heart that has opened wide, that is bright and free of all darkness, cool and radiant from deep and excellent reflection, and rich in good qualities, you shine forth, spotless — just as the moon shines in the sky.

ऐसे दिल के साथ जो पूरी तरह खुल गया है, जो उजला और हर अँधेरे से मुक्त है, जो गहरे और बढ़िया सोच-विचार से ठंडा और चमकदार है, और जो अच्छे गुणों से भरा है, तुम बेदाग होकर चमकते हो - बिल्कुल जैसे आसमान में चाँद चमकता है।

Chapter 12

2.12.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । परिपूर्णमना मान्यः प्रष्टुं जानासि राघव । वेत्सि चोक्तं च तेनाहं प्रवृत्तो वक्तुमादरात् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | paripūrṇamanā mānyaḥ praṣṭuṃ jānāsi rāghava | vetsyi coktaṃ ca tenāhaṃ pravṛtto vaktumādarāt || 1 ||

Sri Vasishtha said: You are full of understanding and worthy of respect, and you know how to ask, Raghava. You also grasp at once what is said. That is why I have set out to speak to you with care.

श्री वसिष्ठ जी बोले: तुम समझदार हो, आदर के लायक हो, और तुम्हें पूछना आता है, हे राघव। जो कुछ कहा जाए, वह तुम तुरंत समझ भी लेते हो। इसी वजह से मैं तुमसे प्यार और ध्यान से बात करने चला हूँ।

2.12.2

रजस्तमोभ्यां रहिता शुद्धसत्त्वानुपातिनीम् । मतिमात्मनि संस्थाप्य ज्ञानं श्रोतुं स्थिरौ भव ॥ २ ॥

rajastamobhyāṃ rahitā śuddhasattvānupātinīm | matimātmani saṁsthāpya jñānaṃ śrotuṃ sthirau bhava || 2 ||

Free your mind from passion and dullness, let it flow only through pure clarity. Fix your mind on the Self, and stay steady to hear this knowledge.

अपने मन को राग और सुस्ती दोनों से मुक्त रखो, उसे सिर्फ शुद्ध, साफ भाव में बहने दो। अपने मन को आत्मा पर टिकाओ, और यह ज्ञान सुनने के लिए स्थिर बने रहो।

2.12.3

विद्यते त्वयि सर्वैव प्रच्छकस्य गुणावली । वक्तुर्गुणाश्चैव मयि रत्नश्रीर्जलधौ यथा ॥ ३ ॥

vidyate tvayi sarvaiva pracchakasya guṇāvalī | vakturguṇāścaiva mayi ratnaśrīrjaladhau yathā || 3 ||

In you is present the whole range of qualities a questioner should have, and in me are the qualities of a teacher, just as the glory of jewels is present in the ocean.

तुम में एक अच्छे जिज्ञासु के सारे गुण मौजूद हैं, और मुझमें एक गुरु के गुण हैं, ठीक वैसे ही जैसे समुद्र में कीमती रत्नों की शोभा भरी होती है।

2.12.4

आप्तवानसि वैराग्यं विवेकासङ्गजं सुत । चन्द्रकान्त इवार्द्रत्वं लग्नचन्द्रकरोत्करः ॥ ४ ॥

āptavānasi vairāgyaṃ vivekāsaṅgajaṃ suta | candrakānta ivārdratvaṃ lagna candrakarotkaraḥ || 4 ||

You have gained, my son, the dispassion that is born from discernment and detachment, just as the moonstone gains its moistness when touched by a flood of moonbeams.

बेटा, तुमने विवेक और वैराग्य से पैदा हुई निर्लिप्तता पा ली है, ठीक वैसे ही जैसे चंद्रकांत मणि चाँद की किरणों की बाढ़ छूते ही गीली हो जाती है।

2.12.5

चिरमाशैशवादेव तवाभ्यासोऽस्ति सद्गुणैः । शुद्धैः शुद्धस्य दीर्घैश्च पद्मस्येवातिसंततैः ॥ ५ ॥

ciramāśaiśavādeva tavābhyāso'sti sadguṇaiḥ | śuddhaiḥ śuddhasya dīrghaiśca padmasyevātisaṁtataiḥ || 5 ||

For a long time, ever since childhood, you have practiced good qualities that are pure and unbroken, continuing on and on, like the long, unbroken fibers inside a clean lotus stem.

बचपन से ही तुमने लंबे समय तक अच्छे गुणों का अभ्यास किया है, जो शुद्ध हैं और बिना टूटे लगातार चलते रहे हैं, ठीक वैसे ही जैसे एक साफ कमल की डंडी के अंदर के लंबे, बिना टूटे रेशे होते हैं।

2.12.6

अतः शृणु कथां वक्ष्ये त्वमेवास्या हि भाजनम् । न हि चन्द्रं विना शुद्धा सविकासा कुमुद्वती ॥ ६ ॥

ataḥ śṛṇu kathāṃ vakṣye tvamevāsya hi bhājanam | na hi candraṃ vinā śuddhā savikāsā kumudvatī || 6 ||

So listen to the teaching I am about to give. You alone are fit to receive it. After all, without the moon, a bed of white water-lilies cannot open into pure bloom.

इसलिए वह शिक्षा सुनो जो मैं अब तुम्हें देने जा रहा हूँ। इसे पाने के लायक सिर्फ तुम ही हो। आखिर चाँद के बिना सफेद कुमुदिनी का बगीचा पूरी तरह खिल ही नहीं सकता।

2.12.7

ये केचन समारम्भा याश्च काश्चन दृष्टयः । ते च ताश्च पदे दृष्टे निःशेषे यान्ति वै शमम् ॥ ७ ॥

ye kecana samārambhā yāśca kāścana dr̥ṣṭayaḥ | te ca tāśca pade dr̥ṣṭe niḥśeṣe yānti vai śamam || 7 ||

Whatever efforts a person makes, and whatever ways of seeing he holds, all of them, without exception, come to complete rest once that highest state is seen.

इंसान चाहे जो भी कोशिशें करे, और उसके देखने के जो भी नज़रिए हों, वे सब, बिना किसी अपवाद के, पूरी तरह शांत हो जाते हैं जब वह सबसे ऊँची अवस्था दिख जाती है।

2.12.8

यदि विज्ञानविश्रान्तिर्न भवेद्भव्यचेतसः । तदस्यां संसृतौ साधुश्चिन्तामौढ्यं सहेत कः ॥ ८ ॥

yadi vijñānaviśrāntirna bhavedbhavyacetasaḥ | tadasyāṃ saṁsṛtau sādhuścintāmauḍhyaṃ saheta kaḥ || 8 ||

If a person of good mind could not find rest in true understanding, then who among the wise could bear the foolish anxiety of this life of birth and death?

अगर एक अच्छे मन वाले इंसान को सच्चे ज्ञान में चैन न मिले, तो फिर कौन सा समझदार इंसान इस जन्म-मरण की दुनिया की बेवकूफी भरी चिंता सह पाएगा?

2.12.9

परं प्राप्य विलीयन्ते सर्वा मननवृत्तयः । कल्पान्तार्कगणासङ्गात्कुलशैलशिला इव ॥ ९ ॥

paraṃ prāpya vilīyante sarvā mananavṛttayaḥ | kalpāntārkagaṇāsaṅgātkulaśailaśilā iva || 9 ||

When a person reaches the Highest, all the movements of thought melt away, just as, at the end of an age, the rocks of the great mountains melt when the mass of blazing suns strikes them.

जब इंसान सबसे ऊँची सच्चाई तक पहुँच जाता है, तो सोच की सारी हलचलें पिघल कर खत्म हो जाती हैं, ठीक वैसे ही जैसे किसी युग के अंत में बड़े-बड़े पहाड़ों की चट्टानें तेज़ जलते सूरजों की मार से पिघल जाती हैं।

2.12.10

दुःसहा राम संसारविषावेशविषूचिकायोगगारुडमन्त्रेण पावनेन प्रशाम्यति ॥ १० ॥

duḥsahā rāma saṁsāraviṣāveśaviṣūcikāyogagāruḍamantreṇa pāvanena praśāmyati || 10 ||

Rama, this unbearable illness, the poison of worldly life striking like a violent cholera, is calmed only by the purifying Garuda-mantra of yoga, the very mantra used to cure snake poison.

राम, यह असहनीय बीमारी, यानी सांसारिक जीवन का ज़हर, जो हैज़े जैसे भयानक हमले की तरह गिरता है, सिर्फ योग के उस शुद्ध करने वाले गरुड़-मंत्र से शांत होती है, जो साँप के ज़हर को दूर करने के काम आता है।

2.12.11

स च योगः सज्जनेन सह शास्त्रविचारणात् परमार्थज्ञानमन्त्रो नूनं लभ्यत एव च ॥ ११ ॥

sa ca yogaḥ sajjanaena saha śāstravicāraṇāt paramārthajñānamantrō nūnaṃ labhyata eva ca || 11 ||

And that yoga, the mantra of true, highest knowledge, is surely gained only by studying the scriptures together with good people.

और वह योग, यानी सबसे ऊँचे सच्चे ज्ञान का मंत्र, निश्चित रूप से सिर्फ अच्छे लोगों के साथ मिलकर शास्त्रों को पढ़ने-समझने से ही मिलता है।

2.12.12

अवश्यमिह हि विचारे कृते सकलदुःखपरिक्षयो भवतीति मन्तव्यं नातो विचारदृष्टयोऽवहेलया द्रष्टव्याः ॥ १२ ॥

avaśyamiha hi vicāre kṛte sakaladuhkhaparikṣayo bhavatīti mantavyaṃ nāto vicāradṛṣṭayo'vahēlayā draṣṭavyāḥ || 12 ||

You must understand that once real inquiry is carried out, all suffering is completely destroyed. So the insights that come from such inquiry should never be treated with contempt or ignored.

यह समझ लो कि जब सच्चा विचार-मंथन किया जाता है, तो सारा दुख पूरी तरह खत्म हो जाता है। इसलिए ऐसे विचार-मंथन से मिलने वाली समझ को कभी भी तुच्छ समझकर नज़रअंदाज़ नहीं करना चाहिए।

2.12.13

विचारवता पुरुषेण सकलमिदमाधिपञ्जरं सर्पेण त्वचमिव परिपक्वां संत्यज्य विगतज्वरेण शीतलान्तःकरणेन विनोदादिन्द्रजालमिव जगदखिलमालोक्यते सम्यग्दर्शनवता असम्यग्दर्शनवतो हि परं दुःखमिदम् ॥ १३ ॥

vicāravatā puruṣeṇa sakalamidamādhipañjaraṃ sarpeṇa tvacamiva paripakvāṃ saṃtyajya vigatajvareṇa śītalāntaḥkaraṇeṇa vinodādindrajālamiva jagadakhilamālokyate samyagdarśanavatā asamyagdarśanavato hi paraṃ duḥkhamidam || 13 ||

A person who has practiced true inquiry casts off this whole cage of mental anguish, as a snake sheds its worn-out skin. Free from feverish desire, with a cool and quiet heart, and with right insight, such a person watches the whole world playfully, as if it were a magic show. But for one who lacks this right insight, this same world is nothing but the greatest suffering.

जिसने सच्चा विचार-मंथन किया है, वह मानसिक पीड़ा के इस पूरे पिंजरे को उतार फेंकता है, जैसे साँप अपनी पुरानी उतरी हुई खाल छोड़ देता है। इच्छा के बुखार से मुक्त, ठंडे और शांत दिल के साथ, और सही समझ के साथ, ऐसा इंसान पूरी दुनिया को खेल-खेल में देखता है, जैसे वह कोई जादू का तमाशा हो। लेकिन जिसके पास यह सही समझ नहीं है, उसके लिए यही दुनिया सबसे बड़ा दुख बन जाती है।

2.12.14

विषमो ह्यतितरां संसाररागो भोगीव दशति असिरिव च्छिनत्ति कुन्त इव वेधयति रज्जुरिवावेष्टयति पावक इव दहति रात्रिरिवान्धयति अशङ्कितपरिपतितपुरुषान्पाषाण इव विवशीकरोति हरति प्रज्ञां नाशयति स्थितिं पातयति मोहान्धकूपे तृष्णा जर्जरीकरोति न तदस्ति किञ्चिद्दुःखं संसारी यन्न प्राप्नोति ॥ १४ ॥

viṣamo hyatitarāṃ saṃsārarāgo bhogīva daśati asiriva cchinatti kuṃta iva vedhayati rajjuriva āveṣṭayati pāvaka iva dahati rātririva āndhayati aśaṅkitaparipatitapuruṣānpāṣāṇa iva vivashīkaroti harati prajñāṃ nāśayati sthitiṃ pātayati mohāndhakūpe tṛṣṇā jarjarīkaroti na tadasti kiṃciddduḥkhaṃ saṃsārī yanna prāpnoti || 14 ||

This passion for worldly life is extremely dangerous. It bites like a snake, cuts like a sword, pierces like a spear, coils around like a rope, burns like fire, blinds like the night. Like a rock falling on men who never suspected it, it makes them completely helpless. It steals away good sense, destroys inner steadiness, throws them into the blind well of delusion, and craving grinds them down.

There is no suffering at all that a worldly person does not end up facing.

सांसारिक जीवन का यह मोह बहुत ही खतरनाक है। यह साँप की तरह डसता है, तलवार की तरह काटता है, भाले की तरह छेदता है, रस्सी की तरह लपेट लेता है, आग की तरह जलाता है, रात की तरह अंधा कर देता है। जैसे कोई चट्टान उन आदमियों पर गिर पड़े जिन्हें ज़रा भी शक नहीं था, वैसे ही यह उन्हें बिल्कुल बेबस कर देता है। यह अच्छी समझ को चुरा लेता है, मन की स्थिरता को तोड़ देता है, उन्हें मोह के अंधे कुएँ में गिरा देता है, और तृष्णा उन्हें चूर-चूर कर देती है। ऐसा कोई दुख नहीं है जो एक सांसारिक इंसान को न झेलना पड़े।

2.12.15

दुरन्तेयं किल विषयविषूचिका यदि न चिकित्स्यते तन्नितरां नरकनगरनिकरफलानुबन्धिनी तत्तत्करोति ॥ १५ ॥

duranteyam kila viṣayaviṣūcikā yadi na cikitsyate tannitarāṃ narakanagaranikaraphalānubandhinī tattatkaroti || 15 ||

This plague of sense-desire truly has no end. If it is not treated, it only grows worse, and its fruit is a whole heap of hells. It goes on causing every kind of harm.

विषय-भोग की यह महामारी सच में कभी खत्म नहीं होती। अगर इसका इलाज न किया जाए, तो यह और बुरी होती जाती है, और इसका नतीजा नरकों का पूरा ढेर होता है। यह हर तरह का नुकसान करती रहती है।

यत्र शिलाशितासिशितः पात उपलताडनमग्निदाहो हिमावसेकोऽङ्गावकर्तनं चन्दनचर्चातरुवनानि
घुणवृत्तान्तःपरिवेषोऽङ्गपरिमार्जनमनवरतानलविचलितसमरनाराचनिपातो निदाघविनोदनं धारागृहसीकरवर्षणं शिरश्छेदः
सुखनिद्रामूकीकरणमाननमुद्राबान्धुर्यं महानुपचयः ॥ १६ ॥

yatra śilāśītāsīśātaḥ pāta upalatāḍḍanamagnidāho himāvaseko'ṅgāvakartanaṃ candanacarcātaruvanāni
ghuṇavṛttāntaḥpariveṣo'ṅgaparimārjanamanavaratānalavicalitasamaranārācanipāto nidāghavinodanaṃ
dhārāgrhasīkaravarṣaṇaṃ śiraśchedaḥ sukhanidrāmūkīkaraṇamānanamudrābāndhurya mahānupacayaḥ || 16 ||

Where there is the fall of a sword sharpened on stone, the beating with rocks, the burning by fire, the drenching in ice, the cutting away of limbs, forests where the body is smeared with sandal paste, the wood-worm's endless boring passage inside, the wiping down of the limbs, the ceaseless rain of iron arrows shaken loose by fire in battle, the relief that comes at the peak of summer heat, the fine spray of water from a cooling fountain-house, the cutting off of the head, the silencing that looks like sweet sleep, and the charm of a graceful expression on the face, all of this grows to a great abundance.

जहाँ पत्थर पर तेज़ की गई तलवार का वार पड़ता है, पत्थरों से पिटाई होती है, आग से जलाया जाता है, बर्फ से भिगोया जाता है, अंगों को काटा जाता है, ऐसे जंगल हैं जहाँ शरीर पर चंदन लेप जैसा लगाया जाता है, अंदर घुन के लगातार घूमते रहने जैसा हाल होता है, अंगों को पोंछा जाता है, लड़ाई में आग से छूटे लोहे के बाणों की लगातार बारिश होती है, गर्मी की चरम पर मिलने वाली राहत होती है, ठंडक देने वाले फव्वारे-घर से पानी की बूँदों की बौछार होती है, सिर काटा जाता है, मीठी नींद जैसी लगने वाली खामोशी होती है, और चेहरे के मोहक भाव की शोभा होती है, यह सब कुछ बहुत बढ़ जाता है।

तदेवंविधकष्टचेष्टासहस्रदारुणे संसारचलयन्त्रेऽस्मिन् राघव नावहेलना कर्तव्या अवश्यमेव विधारणीयमेवं चावबोद्धव्यं यथा
किल शास्त्रविचाराच्छ्रेयो भवतीति ॥ १७ ॥

tadevaṃvidhakaṣṭhaśceṣṭāsahasradāruṇe saṃsāracalayantre'smin rāghava nāvahelanā kartavyā avaśyameva
vidhāraṇīyamevaṃ cāvaboddhavyaṃ yathā kila śāstravicārācchreya bhavatīti || 17 ||

So, Raghava, in this ever-turning machine of worldly life, terrible with a thousand kinds of painful struggles, you must never be careless. You must hold yourself firm, and understand clearly that only through inquiry into right teaching does true good come.

इसलिए, हे राघव, सांसारिक जीवन की इस हमेशा चलती रहने वाली मशीन में, जो हज़ारों तरह के दुखदायी संघर्षों से भरी और भयानक है, तुम्हें कभी लापरवाह नहीं होना चाहिए। तुम्हें खुद को मज़बूती से थामे रखना है, और साफ-साफ समझना है कि सही शास्त्र के विचार-मंथन से ही असली भलाई मिलती है।

2.12.18

अन्यस्य रघुकुलेन्दो यदि चैते महामुनयो महर्षयश्च विप्राश्च राजानश्च ज्ञानकवचेनावगुण्ठितशरीरास्ते कथमदुःखक्षमा अपि दुःखकरीं तां तां वृत्तिपूर्विकां संसारकदर्शनामनुभवन्तः सततमेव मुदितमनसस्तिष्ठन्ति ॥ १८ ॥

anyasya raghukulendō yadi caitē mahāmunayō maharṣayaśca viprāśca rājānaśca jñānakavacēnāvaguṇṭhitazarīrāstē kathamadulḥkhakṣamā api duḥkhakarīm tāṃ tāṃ vṛttipūrvikāṃ saṃsārakadarthanāmanubhavantaḥ satatamēva muditamanasastiṣṭhanti || 18 ||

What then of ordinary people, O moon of the Raghu race? Even these great sages, great seers, brahmins, and kings, though their bodies are shielded by the armor of true knowledge, are not free from suffering. Yet even while going through this or that painful hardship that worldly life brings through their different roles, they remain always joyful in mind.

फिर आम लोगों की तो बात ही क्या, हे रघुकुल के चाँद? ये बड़े-बड़े मुनि, महर्षि, ब्राह्मण और राजा भी, जिनके शरीर सच्चे ज्ञान के कवच से ढके हैं, दुख से पूरी तरह बचे नहीं हैं। फिर भी अपनी अलग-अलग भूमिकाओं की वजह से सांसारिक जीवन जो भी दुखदायी मुश्किलें लाता है, उन्हें झेलते हुए भी वे हमेशा मन से खुश रहते हैं।

2.12.19

इह हि विकौतुका विगतविकल्पविप्लवा यथा स्थिता हरिहरपद्मजादयः नरोत्तमाः समधिगतात्मदीपकास्तथा स्थिता जगति विशुद्धबुद्धयः ॥ १९ ॥

iha hi vikautukā vigatavikalpaviplavā yathā sthitā hariharapadmajādayaḥ narōttamāḥ samadhiगतātmadīpakāstathā sthitā jagati viśuddhabuddhayaḥ || 19 ||

Just as Hari, Hara, and Brahma the lotus-born, and other best of men, stand free from restless curiosity and untouched by the storm of doubt, having found the lamp of the Self within, so too, in this world, do people of purified understanding remain.

जैसे हरि, हर और कमल से जन्मे ब्रह्मा, और दूसरे श्रेष्ठ पुरुष, बेचैन जिज्ञासा से मुक्त और शक की आँधी से अछूते रहते हैं, क्योंकि उन्होंने अपने भीतर आत्मा का दीपक पा लिया है, वैसे ही, इस दुनिया में शुद्ध समझ वाले लोग भी रहते हैं।

2.12.20

परिक्षीणे मोहे विगलति घने ज्ञानजलदे परिज्ञाते तत्त्वे समधिगत आत्मन्यतितते विचार्यार्यैः सार्धं चलितवपुषो वै सदृशतो धिया दृष्टे तत्त्वे रमणमटनं जागतमिदम् ॥ २० ॥

parikṣiṇe mōhē vīgalati ghanē jñānajaladē parijñātē tattvē samadhiगतात्मन्यतिततē vicāryāryaiḥ sārḍham calitavapuṣō vai sadṛśatō dhiyā dṛṣṭē tattvē ramaṇamaṭanaṃ jāgatamidam || 20 ||

When delusion has worn away, when the dense cloud of knowledge has done its work and dissolved, when the truth has been fully understood, when a person has reached the vast Self, having reflected together with the wise, even though the body still moves about just as before, once truth is seen by the intellect, this wandering in the world becomes mere play.

जब मोह घिस-घिस कर मिट जाता है, जब ज्ञान का घना बादल अपना काम करके छूट जाता है, जब सच्चाई को पूरी तरह समझ लिया जाता है, जब इंसान बुद्धिमानों के साथ मिलकर सोच-विचार करके उस विशाल आत्मा तक पहुँच जाता है, तो भले ही शरीर पहले जैसा ही चलता-फिरता रहे, पर जब बुद्धि से सच्चाई दिख जाती है, तो दुनिया में यह घूमना-फिरना बस एक खेल बन जाता है।

अन्यच्च राघव । प्रसन्ने चित्तत्वे हृदि शमभवे वल्गाति परे शमाभोगीभूतास्वखिलकलनादृष्टिषु पुरः । समं याति स्वान्तःकरणघटनास्वादितरसं धिया दृष्टे तत्त्वे रमणमटनं जागतमिदम् ॥ २१ ॥

anyacca rāghava | prasanne cittatve hr̥di śamabhava valgati pare śamābhogībhūtāsvakhilakalanādṛṣṭiṣu puraḥ | samam yāti svāntaḥkaraṇaghāṭanāsvāditrasaṁ dhiyā dṛṣṭe tattve ramaṇamaṭanaṁ jāgatamidam || 21 ||

And there is more, Raghava. When the mind's true nature turns clear, when peace rises in the heart, when the Supreme moves freely within, and every sight of activity in front of you turns peaceful, then the joy tasted through the workings of your own inner mind flows on evenly, undisturbed. Once truth is seen by the intellect, this wandering through the world becomes nothing but play.

और एक बात और, राघव। जब मन का असली रूप साफ हो जाता है, जब दिल में शांति उठती है, जब सर्वोच्च तत्व भीतर स्वतंत्र रूप से खेलता है, और सामने की हर गतिविधि शांति से भर जाती है, तो अपने ही भीतरी मन की क्रियाओं से चखा गया आनंद बिना रुके, समान रूप से बहता रहता है। जब बुद्धि से सच्चाई दिख जाती है, तो दुनिया में यह घूमना-फिरना बस एक खेल बन जाता है।

अन्यच्च । रथः स्थाणुर्देहस्तुरगरचना चेन्द्रियगतिः परिस्पन्दो वातो वहनकलितानन्दविषयः । परोऽणुर्वा देही जगति विहरामीत्यनघया धिया दृष्टे तत्त्वेरमणमटनं जागतमिदम् ॥ २२ ॥

anyacca | rathaḥ sthāṇurdehasturagaracanā cendriyagatiḥ parisṇando vāto vahanakalitānandaviṣayaḥ | paro'ṇurvā dehī jagati viharāmītyanaghayā dhiyā dṛṣṭe tattveramaṇamaṭanaṁ jāgatamidam || 22 ||

And another thing: the body is a cart that by itself cannot move; the movement of the senses is like the team of horses pulling it; the stir of the breath is the wind that drives it; the objects of enjoyment are what this vehicle carries along. Whether the self within is the Supreme or a mere atom-like individual soul, it is with a pure, faultless mind that one thinks, I am moving about in the world. But once truth is seen by the intellect, this wandering in the world is nothing but play.

और एक बात: शरीर एक गाड़ी है जो खुद से नहीं चल सकती; इंद्रियों की हरकत उसे खींचने वाले घोड़ों के जोड़े जैसी है; साँस की हलचल वह हवा है जो उसे चलाती है; भोग की चीज़ें वह सामान हैं जिन्हें यह गाड़ी ढोती है। चाहे भीतर का मैं सर्वोच्च तत्व हो या एक छोटी-सी परमाणु जैसी अलग आत्मा, इंसान शुद्ध और निर्दोष मन से यही सोचता है, मैं दुनिया में घूम रहा हूँ। पर जब बुद्धि से सच्चाई दिख जाती है, तो दुनिया में यह घूमना-फिरना बस एक खेल बन जाता है।

Chapter 13

2.13.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । एतां दृष्टिमवष्टभ्य दृष्टात्मानः सुबुद्धयः । विचरन्तीह संसारे महान्तोऽभ्युदिता इव ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | etāṃ dṛṣṭimavaṣṭabhya dṛṣṭātmānaḥ subuddhayaḥ | vicarantīha saṃsāre mahānto'bhyuditā iva || 1 ||

Sri Vasishtha said: Holding fast to this insight, those who have seen the true Self, being of clear understanding, move about in this world like truly great, radiant people.

श्री वसिष्ठ जी बोले: इस समझ को मज़बूती से पकड़कर, जिन्होंने अपनी असली आत्मा को देख लिया है, वे साफ समझ वाले लोग इस दुनिया में सचमुच महान और तेजस्वी लोगों की तरह घूमते हैं।

2.13.2

न शोचन्ति न वाञ्छन्ति न याचन्ते शुभाशुभम् । सर्वमेव च कुर्वन्ति न कुर्वन्तीह किञ्चन ॥ २ ॥

na śocanti na vāñchanti na yācante śubhāśubham | sarvameva ca kurvanti na kurvantiha kiñcana || 2 ||

They do not grieve, they do not crave, and they do not beg for anything good or bad. They do everything, and yet, in truth, they do nothing at all.

वे न तो शोक करते हैं, न कुछ चाहते हैं, और न ही अच्छे या बुरे के लिए भीख माँगते हैं। वे सब कुछ करते हैं, फिर भी सच में वे कुछ भी नहीं करते।

2.13.3

स्वच्छमेवावतिष्ठन्ते स्वच्छं कुर्वन्ति यान्ति हि । हेयोपादेयतापक्षरहिताः स्वात्मनि स्थिताः ॥ ३ ॥

svacchamevāvatīṣṭhante svacchaṃ kurvanti yānti hi | heyopādeyatāpakṣarahitāḥ svātmani sthitāḥ || 3 ||

They remain clear and untouched, they act with a clear mind, and they move about clearly, free from the pull of accepting this or rejecting that, resting firmly in their own true Self.

वे साफ और निर्मल बने रहते हैं, साफ मन से काम करते हैं, और साफ मन से ही चलते-फिरते हैं, किसी चीज़ को अपनाने या किसी चीज़ को ठुकराने के खिंचाव से मुक्त, अपनी असली आत्मा में मज़बूती से टिके हुए।

2.13.4

आयान्ति च न चायान्ति प्रयान्ति च न यान्ति च । कुर्वन्त्यपि न कुर्वन्ति न वदन्ति वदन्ति च ॥ ४ ॥

āyānti ca na cāyānti prayānti ca na yānti ca | kurvantyapi na kurvanti na vadanti vadanti ca || 4 ||

They come, and yet they do not come; they go, and yet they do not go. They act, and yet they do not act; they are silent, and yet they speak.

वे आते हैं, फिर भी नहीं आते; वे जाते हैं, फिर भी नहीं जाते। वे काम करते हैं, फिर भी कुछ नहीं करते; वे चुप रहते हैं, फिर भी बोलते हैं।

2.13.5

ये केचन समारम्भा याश्च काश्चन दृष्टयः । हेयोपादेयतस्तास्ताः क्षीयन्तेऽधिगते पदे ॥ ५ ॥

ye kecana samārambhā yāśca kāścana dṛṣṭayaḥ | heyopādeyatastāstāḥ kṣīyante'dhigate pade || 5 ||

Whatever undertakings a person has, whatever ways of seeing he holds, all of them, tied to liking and disliking, dissolve away once that highest state is reached.

इंसान चाहे जो भी काम शुरू करे, उसके देखने के जो भी नज़रिए हों, वे सब, जो पसंद-नापसंद से बँधे होते हैं, उस सबसे ऊँची अवस्था तक पहुँचते ही घुल कर खत्म हो जाते हैं।

2.13.6

परित्यक्तसमस्तेहं मनोमधुरवृत्तिमत् । सर्वतः सुखमभ्येति चन्द्रबिम्ब इव स्थितम् ॥ ६ ॥

parityaktasamastehaṃ manomadhuravṛttimat | sarvataḥ sukhamaḥyeti candrabimba iva sthitam || 6 ||

Having given up every worldly urge, the mind, its ways turned sweet and gentle, finds happiness from every side, staying still and calm, like the round disc of the moon.

हर सांसारिक इच्छा को छोड़कर, मन, जिसका स्वभाव अब मीठा और कोमल हो गया है, हर तरफ से सुख पाता है, चाँद के गोल घेरे की तरह शांत और स्थिर बना रहकर।

2.13.7

अपि निर्मननारम्भमव्यस्ताखिलकौतुकम् । आत्मन्येव न मात्यन्तरिन्दाविव रसायनम् ॥ ७ ॥

api nirmananārambhamavyastākṣilakautukam | ātmanyeva na mātyantarindāviva rasāyanam || 7 ||

Even though it takes up no task at all, its whole sense of wonder stays full and unbroken, a joy that cannot be held even within the Self, like the nectar held inside the moon.

भले ही वह कोई काम शुरू न करे, फिर भी उसका पूरा आश्चर्यभाव पूरा और अटूट बना रहता है, ऐसा आनंद जो आत्मा के भीतर भी नहीं समाता, जैसे चाँद के अंदर रखा अमृत उससे बाहर छलक पड़ता है।

2.13.8

न करोतीन्द्रजालानि नानुधावति वासनाम् । बालचापलमुत्सृज्य पूर्वमेव विराजते ॥ ८ ॥

na karotīndrajālāni nānudhāvati vāsanām | bālacāpalamutsṛjya pūrvameva virājate || 8 ||

It performs no illusions, it does not chase after old desires. Having given up childish restlessness, it shines exactly as it was in the beginning.

वह कोई जादू का खेल नहीं दिखाता, पुरानी इच्छाओं के पीछे नहीं भागता। बचपने की बेचैनी छोड़कर, वह ठीक वैसे ही चमकता है जैसा वह शुरू में था।

2.13.9

एवंविधा हि वृत्तय आत्मतत्त्वावलोकनाल्लभ्यन्ते नान्यथा ॥ ९ ॥

evamvidhā hi vṛttaya ātmatattvāvalokanāllabhyante nānyathā || 9 ||

Such states of mind, indeed, are reached only by directly seeing the truth of one's own Self, never in any other way.

मन की ऐसी अवस्थाएँ सच में सिर्फ अपनी आत्मा की सच्चाई को सीधे देखने से ही मिलती हैं, किसी और तरीके से नहीं।

2.13.10

तस्माद्विचारेणात्मैवान्वेष्टव्य उपासनीयो ज्ञातव्यो यावज्जीवं पुरुषेण नेतरदिति ॥ १० ॥

tasmādvicāreṇātmaivānveṣṭavya upāsanīyo jñātavyo yāvajjīvaṃ puruṣeṇa netaraditi || 10 ||

So, through inquiry, a person should seek the Self alone, attend to it, and come to know it, for as long as he lives, and nothing else.

इसलिए, विचार-मंथन के ज़रिए, इंसान को जीते जी सिर्फ आत्मा को ही खोजना चाहिए, उसी पर ध्यान देना चाहिए, और उसी को जानना चाहिए, और कुछ नहीं।

2.13.11

स्वानुभूतेश्च शास्त्रस्य गुरोश्चैवैकवाक्यता । यस्याभ्यासेन तेनात्मा सन्ततेनावलोक्यते ॥ ११ ॥

svānubhūteśca śāstrasya guroścaivaikavākyatā | yasyābhyāseṇa tenātmā santatenaavalokyate || 11 ||

When one's own experience, the teaching of scripture, and the word of the teacher all agree as one, it is by the steady practice of that agreement that the Self is seen.

जब अपना खुद का अनुभव, शास्त्र की शिक्षा, और गुरु की बात, ये तीनों एक ही बात कहते हैं, तो इसी मेल के लगातार अभ्यास से ही आत्मा दिखाई देती है।

2.13.12

अवहेलितशास्त्रार्थैरवज्ञातमहाजनैः । कष्टमप्यापदं प्राप्तो न मूढैः समतामियात् ॥ १२ ॥

avahēlitashāstrārthairavajāñātamahājanaiḥ | kaṣṭāmapyāpadaṁ prāpto na mūḍhaiḥ samatāmiyāt || 12 ||

Even when he has fallen into painful trouble, a wise person should never sink to the level of the fools who disregard the meaning of scripture and show contempt for great people.

भले ही कोई समझदार इंसान दुखदायी मुसीबत में पड़ जाए, उसे कभी भी उन मूर्खों के स्तर पर नहीं आना चाहिए जो शास्त्र के अर्थ को नज़रअंदाज़ करते हैं और बड़े लोगों का अनादर करते हैं।

2.13.13

इदं श्राव्यं सुखकरं यथा दृष्टान्तसुन्दरम् । अविर्द्धमशेषेण शास्त्रं वाक्यार्थबन्धुना ॥ १३ ॥

idaṁ śrāvyam sukhakaram yathā dṛṣṭāntasundaram | aviruddhamśeṣeṇa śāstram vākyārthabandhunā || 13 ||

This teaching is worth hearing, it brings joy, it is made beautiful with fitting examples, and it is never contradictory anywhere. Every statement in it is closely and consistently tied to its meaning. यह शिक्षा सुनने लायक है, यह खुशी देती है, सही उदाहरणों से सुंदर बनी है, और यह कहीं भी एक-दूसरे से नहीं टकराती। इसकी हर बात अपने मतलब से गहराई और लगातार जुड़ी हुई है।

2.13.14

किञ्चित्संस्कृतबुद्धीनां श्रुतं शास्त्रमिदं यथा । मौर्व्यापहं तथा शास्त्रमन्यदस्ति न किञ्चन ॥ १४ ॥

kiñcitsaṁskṛtabuddhīnāṁ śrutam śāstramidaṁ yathā | maurkhyāpahaṁ tathā śāstramanyadasti na kiñcana || 14 ||

For those whose minds have been even a little refined, once this teaching has been heard, it drives out foolishness as no other teaching can. There is nothing else quite like it.

जिनका मन थोड़ा भी सुधरा हुआ है, उनके लिए यह शिक्षा सुनते ही मूर्खता को ऐसे दूर करती है जैसे और कोई शिक्षा नहीं कर सकती। इसके जैसा कुछ और नहीं है।

2.13.15

इदंश्राव्यं सुखकरं यथादृष्टान्तसुन्दरम् । अविर्द्धमशेषेण शारं वाक्यार्थबन्धुना ॥ १५ ॥

idaṁśrāvyam sukhakaram yathādṛṣṭāntasundaram | aviruddhamśeṣeṇa śāram vākyārthabandhunā || 15 ||

This teaching is worth hearing, it brings joy, it is made beautiful with fitting examples, and it is never contradictory anywhere. Every statement in it is closely and consistently tied to its meaning.

यह शिक्षा सुनने लायक है, यह खुशी देती है, सही उदाहरणों से सुंदर बनी है, और यह कहीं भी एक-दूसरे से नहीं टकराती। इसकी हर बात अपने मतलब से गहराई और लगातार जुड़ी हुई है।

2.13.16

आपदो या दुरुत्तारा याश्च तुच्छाः कुयोनयः । तास्ता मौर्व्यात्प्रसूयन्ते खदिरादिव कण्टकाः ॥ १६ ॥

āpado yā duruttārā yāśca tucchāḥ kuyonayaḥ | tāstā maurkhyātprasūyante khadirādiva kaṇṭakāḥ || 16 ||

Whatever disasters are hard to escape, and whatever low, miserable births there are, all of them are born from foolishness, just as thorns grow from the khadira tree.

जिन मुसीबतों से निकलना मुश्किल होता है, और जो घटिया, दयनीय जन्म होते हैं, ये सब मूर्खता से ही पैदा होते हैं, ठीक वैसे ही जैसे खदिर के पेड़ से काँटे पैदा होते हैं।

2.13.17

वरं शरावहस्तस्य चाण्डालागारवीथिषु । भिक्षार्थमतनं राम न मौर्व्यहतजीवितम् ॥ १७ ॥

varaṁ śarāvahastasya cāṇḍālāgāravīthiṣu | bhikṣārthamaṭanaṁ rāma na maurkhyahatajīvitam || 17 ||

Rama, it is better to wander with a begging bowl in hand through the lanes and houses of outcastes, begging for food, than to live a life ruined by foolishness.

राम, हाथ में भीख का कटोरा लेकर चांडालों की गलियों और घरों में खाने के लिए भटकना बेहतर है, बजाय इसके कि मूर्खता से बर्बाद हुई ज़िंदगी जी जाए।

2.13.18

वरं घोराण्धकूपेषु कोटरेष्वेव भूरुहाम् । अन्धकीटत्वमेकान्ते न मौर्व्यमतिदुःखदम् ॥ १८ ॥

varaṁ ghorāṇdhakūpeṣu koṭareṣveva bhūruhām | andhakīṭatvamekānte na maurkhyamatiduhkhadam || 18 ||

It is better to be a blind worm living all alone in a dreadful dark well or in the hollow of a tree, than to be foolish, for foolishness brings far greater suffering.

किसी भयानक अँधेरे कुएँ में या पेड़ के खोखल में अकेला अंधा कीड़ा बनकर जीना बेहतर है, बजाय मूर्ख होने के, क्योंकि मूर्खता कहीं ज़्यादा दुख देती है।

2.13.19

इममालोकमासाद्य मोक्षोपायमयं जनः । अन्धतामेति न पुनः कश्चिन्मोहतमस्यपि ॥ १९ ॥

imamāloka māśādy mokṣopāyamayaṁ janaḥ | andhatāmeti na punaḥ kaścinmohatamasyapi || 19 ||

Once a person has reached this light, this very light that is itself the means to liberation, he never again falls into blindness, not even into the darkness of delusion.

जब इंसान इस रोशनी तक पहुँच जाता है, यही रोशनी जो खुद मुक्ति का साधन है, तो वह फिर कभी अंधेपन में नहीं गिरता, यहाँ तक कि मोह के अंधकार में भी नहीं।

2.13.20

तावन्नयति संकोचं तृष्णा वै मानवाम्बुजम् । यावद्विवेकसूर्यस्य नोदिता विमला प्रभा ॥ २० ॥

tāvannayati saṁkośaṁ tṛṣṇā vai mānavāmbujam | yāvadvivēkasūryasya noditā vimalā prabhā || 20 ||

Craving keeps a person shut tight, like a lotus folded closed, only until the pure light of the sun of true understanding rises.

तृष्णा इंसान को बंद कमल की तरह कसकर बंद रखती है, सिर्फ तब तक, जब तक सच्ची समझ के सूरज की शुद्ध रोशनी नहीं निकल आती।

2.13.21

संसारदुःखमोक्षार्थे मादृशैः सह बन्धुभिः । स्वरूपमात्मनो ज्ञात्वा गुरुशास्त्रप्रमाणतः ॥ २१ ॥

saṃsāraduḥkhamokṣārthe mādrśaiḥ saha bandhubhiḥ | svarūpamātmano jñātvā gurusāstrapramāṇataḥ || 21 ||

For the sake of freedom from the suffering of worldly life, together with companions like me, you must first come to know your own true nature through the authority of your teacher and the scriptures.

सांसारिक जीवन के दुख से मुक्ति पाने के लिए, मुझ जैसे साथियों के साथ मिलकर, पहले गुरु और शास्त्र के प्रमाण से अपना असली स्वरूप जान लो।

2.13.22

जीवन्मुक्ताश्चरन्तीह यथा हरिहरादयः । यथा ब्रह्मर्षयश्चान्ये तथा विहर राघव ॥ २२ ॥

jīvanmuktāśccharantīha yathā hariharādayaḥ | yathā brahmarṣayaścānye tathā vihara rāghava || 22 ||

Then live on in this world as one liberated while still alive, just as Hari, Hara, and others do, and as the brahmin-sages and other such beings do. Live in that same way, Raghava.

फिर इस दुनिया में जीते-जी मुक्त इंसान की तरह रहो, जैसे हरि, हर और दूसरे लोग रहते हैं, जैसे ब्रह्मर्षि और बाकी लोग रहते हैं। उसी तरह जियो, राघव।

2.13.23

अनन्तानीह दुःखानि सुखं तृणलवोपमम् । नातः सुखेषु बध्नीयादृष्टिं दुःखानुबन्धिषु ॥ २३ ॥

anantānīha duḥkhāni sukhaṃ tṛṇalavopamam | nātaḥ sukheṣu badhnīyādṛṣṭiṃ duḥkhanubandhiṣu || 23 ||

In this world, sorrows are endless, while happiness is as small as a single blade of grass. So one should never fix his attention on pleasures, because they always come bound together with pain.

इस दुनिया में दुख अनगिनत हैं, जबकि सुख घास के एक तिनके जितना ही छोटा है। इसलिए किसी को कभी भी सुखों पर अपना ध्यान नहीं टिकाना चाहिए, क्योंकि वे हमेशा दुख के साथ बँधे हुए आते हैं।

2.13.24

यदनन्तमनायासं तत्पदं सारसिद्धये । साधनीयं प्रयत्नेन पुरुषेण विजानता ॥ २४ ॥

yadanantamanāyāsaṃ tatpadaṃ sārasiḍḍhaye | sādhanīyaṃ prayatnena puruṣeṇa vijānatā || 24 ||

A person who truly understands this should strive with effort to reach that state which is endless and free of strain, because that alone brings the real essence of life.

जो इंसान यह सच में समझता है, उसे मेहनत से उस अवस्था तक पहुँचने की कोशिश करनी चाहिए जो अनंत है और जिसमें कोई थकान नहीं है, क्योंकि सिर्फ वही ज़िंदगी का असली सार देती है।

2.13.25

त एव पुरुषार्थस्य भाजनं पुरुषोत्तमाः । अनुत्तमपदालम्बि मनो येषां गतज्वरम् ॥ २५ ॥

ta eva puruṣārthasya bhājanaṃ puruṣottamāḥ | anuttamapadālambi mano yeṣāṃ gatajvaram || 25 ||

Only they are truly the vessels of life's real purpose, the best among men, whose minds, resting on that highest, unsurpassed state, have become free of the fever of restless desire.

सिर्फ वही लोग ज़िंदगी के असली मकसद के सच्चे हकदार हैं, इंसानों में सबसे श्रेष्ठ, जिनका मन, उस सबसे ऊँची अवस्था पर टिककर, बेचैन इच्छा के बुखार से मुक्त हो चुका है।

2.13.26

संभोगाशनमात्रेण राज्यादिषु सुखेषु ये । संतुष्टा दुष्टमनसो विद्धि तानन्धदुर्दुरान् ॥ २६ ॥

saṁbhogāśanamātreṇa rājyādiṣu sukheṣu ye | santuṣṭā duṣṭamanaso viddhi tānandhadurdurān || 26 ||

Know that those base-minded people who are satisfied with mere sensual enjoyment and eating, and with pleasures like ruling a kingdom, are no better than blind frogs.

यह जान लो कि जो ओछे मन वाले लोग सिर्फ भोग-विलास और खाने-पीने से, और राज-पाट जैसे सुखों से संतुष्ट हो जाते हैं, वे अंधे मेंढकों से बेहतर नहीं हैं।

2.13.27

ये शठेषु दुरन्तेषु दुष्कृतारम्भशालिषु । द्विषत्सु मित्ररूपेषु भक्ता वै भोगभोगिषु ॥ २७ ॥

ye śaṭheṣu duranteṣu duṣkṛtārambhaśālīṣu | dviṣatsu mitrarūpeṣu bhaktā vai bhogabhogiṣu || 27 ||

Those who are devoted to the wicked, to people hopelessly given over to evil, to men bent on sinful deeds, to enemies dressed up as friends, and to mere seekers of sensual pleasure,

जो लोग दुष्टों से, बुराई में डूबे हुए निराश लोगों से, पाप के काम करने पर तुले लोगों से, दोस्त बनकर आए दुश्मनों से, और सिर्फ भोग-विलास के पीछे भागने वालों से लगाव रखते हैं,

2.13.28

ते यान्ति दुर्गमाद्दुर्गं दुःखाद्दुःखं भयाद्भयम् । नरकान्नरकं मूढा मोहमन्थरबुद्धयः ॥ २८ ॥

te yānti durgamāddurgam duḥkhādduḥkham bhayādbhayam | narakānnarakam mūḍhā mohamantharabuddhayah || 28 ||

such fools, their minds made sluggish by delusion, go from one difficulty to a worse one, from one suffering to a worse one, from one fear to a worse one, from one hell to a worse one.

ऐसे मूर्ख लोग, जिनका मन मोह से सुस्त हो चुका है, एक मुसीबत से दूसरी बड़ी मुसीबत में, एक दुख से दूसरे बड़े दुख में, एक डर से दूसरे बड़े डर में, और एक नरक से दूसरे बड़े नरक में गिरते चले जाते हैं।

2.13.29

परस्परविनाशोक्तेः श्रेयःस्थो न कदाचन । सुखदुःखदशे राम तडित्प्रसरभङ्गुरे ॥ २९ ॥

parasparavināśokteḥ śreyastho na kadācana | sukhaduḥkhadaśe rāma taḍitprasaraḥṅgure || 29 ||

Since happiness and sorrow constantly wipe each other out, Rama, no one ever settles into true good while caught in this flickering play of pleasure and pain, as fragile and fleeting as a flash of lightning.

चूँकि सुख और दुख लगातार एक-दूसरे को मिटाते रहते हैं, राम, इसलिए कोई भी सच्ची भलाई में तब तक नहीं टिक पाता जब तक वह सुख-दुख के इस टिमटिमाते खेल में फँसा रहता है, जो बिजली की चमक जितना ही नाज़ुक और पल भर का है।

2.13.30

ये विरक्ता महात्मानः सुविविक्ता भवाद्दशाः । पुरुषान्विद्धि तान्वन्द्यान्भोगमोक्षैकभाजनान् ॥ ३० ॥

ye viraktā mahātmānaḥ suviviktā bhavādrśāḥ | puruṣānviddhi tānvandyānbhogamokṣaikaḥājānān || 30 ||

Know that great souls who are free from craving, clear in their discernment, and like yourself, are people worthy of honor, the only ones truly fit to hold both worldly enjoyment and liberation together.

यह जान लो कि जो महान आत्माएँ लालच से मुक्त हैं, अपनी समझ में साफ हैं, और तुम्हारे जैसी हैं, वे सम्मान के लायक हैं, वे ही अकेले ऐसे लोग हैं जो भोग और मुक्ति दोनों को साथ रख सकते हैं।

2.13.31

विवेकं परमाश्रित्य वैराग्याभ्यासयोगतः । संसारसरितं घोरामिमामापदमुत्तरेत् ॥ ३१ ॥

vivekaṃ paramāśritya vairāgyābhyāsayogataḥ | saṃsārasaritaṃ ghorāmimāmāpadamuttaret || 31 ||

By relying on the highest discernment and through the steady practice of dispassion, a person should cross over this dreadful river of worldly life, this river of disaster.

सबसे ऊँचे विवेक का सहारा लेकर, और वैराग्य के लगातार अभ्यास से, इंसान को सांसारिक जीवन की इस भयानक नदी को, इस मुसीबत की नदी को पार कर लेना चाहिए।

2.13.32

न स्वप्नव्यं च संसारमायास्विह विजानता । विषमूर्च्छनसंमोहदायिनीषु विवेकिना ॥ ३२ ॥

na svaptavyaṃ ca saṃsāramāyāsvih vijānatā | viṣamūrccchanasammohadāyinīṣu vivekinā || 32 ||

One who truly understands, one who has real discernment, should never fall asleep and stay unaware amid the illusions of worldly life, illusions that, like poison, bring on fainting and confusion.

जो सच में समझता है, जिसके पास असली विवेक है, उसे सांसारिक जीवन के भ्रमों के बीच कभी सोकर बेखबर नहीं रहना चाहिए, ऐसे भ्रम जो ज़हर की तरह बेहोशी और उलझन पैदा करते हैं।

2.13.33

संसारमिममासाद्य यस्तिष्ठत्यवहेलया । ज्वलितस्य गृहस्योच्चैः शेते तार्णस्य संस्तरे ॥ ३३ ॥

saṃsāramimamāsādyā yastiṣṭhatyavahelayā | jvalitasya gr̥hasyocchaiḥ śete tāṛṇasya saṃstare || 33 ||

Whoever meets this worldly life and yet stays careless is like someone sleeping soundly on a bed of straw inside a house that is already on fire.

जो कोई इस सांसारिक जीवन का सामना करके भी लापरवाह बना रहता है, वह ऐसा है जैसे कोई जलते हुए घर में घास-फूस के बिस्तर पर गहरी नींद सो रहा हो।

2.13.34

यत्प्राप्य न निवर्तन्ते यदासाद्य न शोचति । तत्पदं शेमुषीलभ्यमस्त्येवात्र न संशयः ॥ ३४ ॥

yatprāpya na nivartante yadāsādyā na śocati | tatpadaṃ śemuṣīlabhyamastyevātra na saṃśayaḥ || 34 ||

There is a state. Reaching it, a person never comes back to suffering; attaining it, he never grieves again. This state can be reached through wisdom. It truly exists; there is no doubt about it.

एक ऐसी अवस्था है, जिसे पाकर इंसान फिर कभी दुख में नहीं लौटता; जिसे पाकर वह फिर कभी शोक नहीं करता। यह अवस्था समझ और ज्ञान से पाई जा सकती है। यह सच में है; इसमें कोई शक नहीं है।

2.13.35

नास्ति चेत्तद्विचारेण दोषः को भवतां भवेत् । अस्ति चेत्तत्समुत्तीर्णा भविष्यथ भवार्णवात् ॥ ३५ ॥

nāsti cet tadvicāreṇa doṣaḥ ko bhavatāṃ bhavet | asti cet tatsamuttīrṇā bhaviṣyatha bhavārṇavāt || 35 ||

If this state does not exist, what harm would come to you from having inquired into it anyway? But if it does exist, then through that inquiry you will cross completely over the ocean of worldly life.

अगर यह अवस्था नहीं भी है, तो इसके बारे में सोच-विचार करने से तुम्हें क्या नुकसान होगा? पर अगर यह है, तो इसी सोच-विचार से तुम सांसारिक जीवन के सागर को पूरी तरह पार कर जाओगे।

2.13.36

प्रवृत्तिः पुरुषस्येह मोक्षोपायविचारणेयदा भवत्याशु तदा मोक्षभागी स उच्यते ॥ ३६ ॥

pravṛttiḥ puruṣasyeha mokṣopāyavicāraṇeyadā bhavatyāśu tadā mokṣabhāgī sa ucyate || 36 ||

When a person quickly turns his effort toward inquiring into the means of liberation, he is then said to be one who is bound to attain liberation.

जब इंसान बिना देर किए मुक्ति के साधनों के बारे में सोच-विचार करने में जुट जाता है, तो उसे ऐसा इंसान कहा जाता है जो निश्चित रूप से मुक्ति पाने वाला है।

2.13.37

अनपायि निराशङ्कं स्वास्थ्यं विगतविभ्रमम् विना केवलीभावाद्विद्यते भुवनत्रये ॥ ३७ ॥

anapāyi nirāśaṅkaṁ svāsthyaṁ vigatavibhramamna vinā kevalībhāvādvīdyate bhuvanatrāye || 37 ||

A well-being that never fails, that has no fear or doubt, and is free of all confusion, such well-being exists nowhere in the three worlds except through becoming one with the pure Self alone.

ऐसी भलाई जो कभी खत्म नहीं होती, जिसमें कोई डर या शक नहीं है, और जो हर तरह की उलझन से मुक्त है, ऐसी भलाई तीनों लोकों में कहीं नहीं मिलती, सिवाय शुद्ध आत्मा के साथ एक हो जाने के।

2.13.38

तत्प्राप्तावुत्तमप्राप्तौ न क्लेश उपजायतेन धनान्युपकुर्वन्ति न मित्राणि न बान्धवाः ॥ ३८ ॥

tatprāptāvuttamaprāptau na kleśa upajāyate na dhanānyupakurvanti na mitrāṇi na bāndhavāḥ || 38 ||

In reaching that highest attainment, no more trouble ever arises. There, no wealth can help, no friends can help, and no relatives can help.

उस सबसे ऊँची प्राप्ति को पाने में, फिर कोई तकलीफ पैदा नहीं होती। वहाँ न धन काम आता है, न दोस्त काम आते हैं, और न रिश्तेदार काम आते हैं।

2.13.39

न हस्तपादचलनं न देशान्तरसङ्गमः न कायक्लेशवैधुर्यं न तीर्थायतनाश्रयाः ॥ ३९ ॥

na hastapādacalanam na deśāntarasamgamahna kāyakleśavaidhuryam na tīrthāyatanāśrayāḥ || 39 ||

It does not need moving the hands and feet, nor traveling to distant lands, nor putting the body through hardship, nor taking refuge in holy places or temples.

इसके लिए न हाथ-पैर हिलाने की ज़रूरत है, न दूर देश जाने की, न शरीर को कष्ट देने की, और न ही तीर्थों या मंदिरों की शरण लेने की।

2.13.40

पुरुषार्थैकसाध्येन वासनैकार्थकर्मणाकेवलं तन्मनोमात्रजयेनासाद्यते पदम् ॥ ४० ॥

puruṣārthaikaśādhyaena vāsanaikārthakarmanākevalam tanmanomātrajayenāsādyate padam || 40 ||

That state is reached only by conquering the mind alone, a conquest achieved solely through one's own effort, through action aimed at the single goal of removing desire.

उस अवस्था को पाने का एक ही रास्ता है, सिर्फ मन को जीतना, और यह जीत सिर्फ अपनी मेहनत से मिलती है, ऐसे काम से जिसका एक ही मकसद हो, इच्छा को जड़ से हटाना।

2.13.41

विवेकमात्रसाध्यं तद्विचारैकान्तनिश्चयम् । त्यजता दुःखजालानि नरेणैतदवाप्यते ॥ ४१ ॥

vivekamātrasādhyaṁ tadvicāraikāntanishchayam | tyajatā duḥkha-jālāni nareṇaitadavāpyate || 41 ||

This is achieved only through clear discernment, through the firm conclusion reached solely by inquiry. It is attained by a person who lets go of the whole net of suffering.

यह सिर्फ साफ विवेक से पाया जाता है, सिर्फ सोच-विचार से मिले पक्के निष्कर्ष से। इसे वही इंसान पाता है जो दुख के पूरे जाल को छोड़ देता है।

2.13.42

सुखसेव्यासनस्थेन तद्विचारयता स्वयम् । न शोच्यते पदं प्राप्य न स भूयो हि जायते ॥ ४२ ॥

sukhassevyāsanasthēna tadvicārayatā svayam | na śocyatē padam prāpya na sa bhūyō hi jāyātē || 42 ||

One who sits at ease and inquires into this himself will, upon reaching that state, never grieve again, and he will never be born again.

जो इंसान आराम से बैठकर खुद इस पर सोच-विचार करता है, वह उस अवस्था को पाकर फिर कभी शोक नहीं करता, और वह फिर कभी जन्म भी नहीं लेता।

2.13.43

तत्समस्तसुखासारसीमान्तं साधवो विदुः । तदनुत्तमनिष्पन्दं परमाहू रसायनम् ॥ ४३ ॥

tatsamastasukhāsārasīmāntam sādhave viduḥ | tadanuttamanishpandam paramāhū rasāyanam || 43 ||

The wise know this as the outer limit, the very essence, of all happiness. They call this unmatched, unmoving state the supreme elixir of life.

समझदार लोग इसे सारे सुख की आखिरी सीमा, उसका असली सार मानते हैं। वे इस बेजोड़, अडिग अवस्था को जीवन का सबसे बड़ा अमृत कहते हैं।

2.13.44

क्षयित्वात्सर्वभावानां स्वर्गमानुष्ययोर्द्वयोः । सुखं नास्त्येव सलिलं मृगतृष्णास्विवैतयोः ॥ ४४ ॥

kshayitvātsarvabhāvānām svargamānushyayordvayoḥ | sukham nāstyeva salilam mṛgatṛṣṇāsvivaitayoḥ || 44 ||

Since everything eventually perishes, there is no real happiness in either heaven or human life. Happiness there is like water in a mirage.

चूँकि हर चीज़ आखिरकार नष्ट हो जाती है, इसलिए न स्वर्ग में और न ही मनुष्य जीवन में कोई असली सुख है। वहाँ का सुख मृगतृष्णा के पानी जैसा है।

2.13.45

अतो मनोजयश्चिन्त्यः शमसंतोषसाधनः । अनन्तसमसंयोगस्तस्मादानन्द आप्यते ॥ ४५ ॥

atō manōjayashchintyaḥ śamasamtoṣasāadhanah | anantasamasamyōgastasmādānanda āpyatē || 45 ||

So one should think carefully about conquering the mind, for that is the means to peace and contentment. It is union with the infinite, the unchanging, and from that union, true joy is gained.

इसलिए मन को जीतने के बारे में ध्यान से सोचना चाहिए, क्योंकि यही शांति और संतोष का साधन है। यह अनंत और अपरिवर्तनशील तत्व के साथ मिलन है, और इसी मिलन से सच्चा आनंद मिलता है।

2.13.46

तिष्ठता गच्छता चैव पतता भ्रमता तथा । रक्षसा दानवेनापि देवेन पुरुषेण वा ॥ ४६ ॥

tiṣṭhatā gacchatā caiva patatā bhramatā tathā | rakṣasā dānavenāpi devena puruṣeṇa vā || 46 ||

Whether standing, walking, falling, or wandering about, and whether one is a demon, a titan, a god, or a human being,

चाहे कोई खड़ा हो, चल रहा हो, गिर रहा हो, या भटक रहा हो, और चाहे वह राक्षस हो, दानव हो, देवता हो, या इंसान हो,

2.13.47

मनः प्रशमनोद्भूतं तत्प्राप्यं परमं सुखम् । विकासिशमपुष्पस्य विवेकोच्चतरोः फलम् ॥ ४७ ॥

manah prāśamanodbhūtaṁ tatprāpyaṁ paramaṁ sukham | vikāśiśamapuṣpasya vivekoccataroḥ phalam || 47 ||

that highest happiness, born from calming the mind, is there for anyone to reach. It is the fruit of the tall tree of discernment, ripening from the flower of inner peace as it blossoms.

वह सबसे ऊँचा सुख, जो मन को शांत करने से मिलता है, हर किसी के पाने के लिए वहाँ मौजूद है। यह विवेक के ऊँचे पेड़ का फल है, जो शांति के फूल के खिलने से पकता है।

2.13.48

व्यवहारपरेणापि कार्यवृन्दमविन्दता । भानुनेवाम्बरस्थेन नोज्झ्यते न च वाञ्छ्यते ॥ ४८ ॥

vyavahārapareṇāpi kāryavṛndamavindatā | bhānunevāmbaraṣṭhena na ujjhyate na ca vāñchayate || 48 ||

Even a person busy with worldly work, who gains nothing real from his heap of duties, does not throw away that calm mind, nor does he especially long for it. He simply carries it along, the way the sun stays in the sky without craving or giving up anything.

यहाँ तक कि सांसारिक कामों में डूबा हुआ इंसान भी, जिसे अपने कामों के ढेर से कुछ असली नहीं मिलता, न तो उस शांत मन को फेंकता है, न ही खासतौर पर उसकी चाह रखता है। वह बस उसे साथ लिए चलता है, जैसे सूरज बिना कुछ चाहे या छोड़े आकाश में बना रहता है।

2.13.49

मनःप्रशान्तमत्यच्छं विश्रान्तं विगतभ्रमम् । अनीहं विगताभीष्टं नाभिवाञ्छति नोज्झ्यते ॥ ४९ ॥

manahprāśāntamatyacchaṁ viśrāntaṁ vigatabhramam | anīhaṁ vigatābhīṣṭaṁ nābhivāñchati nojjhyate || 49 ||

A mind that is fully at peace, perfectly clear, resting quietly, free of all confusion, free of craving, and free even from desired things, such a mind neither longs for anything nor is thrown away.

जो मन पूरी तरह शांत है, बिल्कुल साफ है, चुपचाप टिका हुआ है, हर उलझन से मुक्त है, इच्छा से मुक्त है, और मनचाही चीज़ों से भी मुक्त है, ऐसा मन न तो किसी चीज़ की चाह रखता है और न ही उसे फेंका जाता है।

2.13.50

मोक्षद्वारे द्वारपालानिमाञ्छन् यथाक्रमम् । येषामेकतमासक्त्या मोक्षद्वारं प्रविश्यते ॥ ५० ॥

mokṣadvāre dvārapālānimañchraṇu yathākramam | yeṣāmekatamāsaktyā mokṣadvāraṁ praviśyate || 50 ||

Now listen, in their proper order, to the gatekeepers who stand at the door of liberation. By devoting yourself to even just one of them, you can pass through that door.

अब मुक्ति के दरवाज़े पर खड़े द्वारपालों के बारे में, सही क्रम में सुनो। इनमें से किसी एक के प्रति भी लगाव रखकर, तुम उस दरवाज़े से अंदर जा सकते हो।

2.13.51

सुखदोषदशादीर्घा संसारमरुमण्डली । जन्तोः शीतलतामेति शीतरश्मेः समप्रभा ॥ ५१ ॥

sukhadoṣadaśādīrghā saṃsāramarumaṇḍalī | jantoh śītalatāmeti śītarashmeh samaprabhā || 51 ||

The desert of worldly life, made vast by the flaws hidden inside its pleasures, turns cool for a person, cool like the light of the moon.

सांसारिक जीवन का यह रेगिस्तान, जो अपने सुखों में छिपी खामियों की वजह से इतना बड़ा हो गया है, इंसान के लिए ठंडा हो जाता है, चाँद की रोशनी जैसा ठंडा।

2.13.52

शमेनासाद्यते श्रेयः शमो हि परमं पदम् । शमः शिवः शमः शान्ति शमो भ्रान्तिनिवारणम् ॥ ५२ ॥

śamena āsādyate śreyaḥ śamo hi paramaṃ padam | śamaḥ śivaḥ śamaḥ śānti śamo bhrāntinivāraṇam || 52 ||

Through inner calm, true good is reached. Calm itself is the highest state. Calm is well-being, calm is peace, calm removes all confusion.

भीतरी शांति से ही सच्ची भलाई मिलती है। शांति खुद सबसे ऊँची अवस्था है। शांति ही कल्याण है, शांति ही चैन है, शांति ही हर उलझन को दूर करती है।

2.13.53

पुंसः प्रशमतृप्तस्य शीतलाच्छतरात्मनः । शमभूषितचित्तस्य शत्रुरप्येति मित्रताम् ॥ ५३ ॥

puṃsaḥ praśamatṛptasya śītalācchatarātmanah | śamabhūṣitacittasya śatrurapyeti mitratām || 53 ||

For a person who is content with inner calm, whose spirit is cool and utterly clear, whose mind is adorned with peace, even his enemy comes to be his friend.

जो इंसान भीतरी शांति से संतुष्ट है, जिसका मन ठंडा और बिल्कुल साफ है, जिसका मन शांति से सजा हुआ है, उसका दुश्मन भी उसका दोस्त बन जाता है।

2.13.54

शमचन्द्रमसा येषामाशयः समलंकृतः । क्षीरोदानामिवोदेति तेषां परमशुद्धता ॥ ५४ ॥

śamacandramasā yeṣāmāśayaḥ samalaṅkṛtaḥ | kṣīrodānāmivodeti teṣāṃ paramaśuddhatā || 54 ||

Those whose hearts are adorned by the moon of inner calm shine with the highest purity, like the very moon that rose from the Ocean of Milk.

जिनके दिल भीतरी शांति के चाँद से सजे हैं, वे सबसे ऊँची पवित्रता के साथ चमकते हैं, ठीक उस चाँद की तरह जो क्षीरसागर से निकला था।

2.13.55

हृत्कुशेशयकोशेषु येषां शमकुशेशयम् । सतां विकसितं ते हि द्विहृत्पद्माः समा हरेः ॥ ५५ ॥

hṛtkūśeśayakośeṣu yeṣāṃ śamakuśeśayam | satāṃ vikasitaṃ te hi dvihṛtpadmāḥ samā hareḥ || 55 ||

For good people, when the flower of calm opens inside the lotus that is their heart, it is as if they carried two lotus-hearts, and in this they become equal to Hari.

अच्छे लोगों के लिए, जब शांति का फूल उनके दिल रूपी कमल के अंदर खिलता है, तो ऐसा लगता है जैसे उनके पास दो कमल-दिल हों, और इसी वजह से वे हरि के बराबर हो जाते हैं।

2.13.56

शमश्रीः शोभते येषां मुखेन्दावकलङ्किते । ते कुलीनेन्दवो वन्द्याः सौन्दर्यविजितेन्द्रियाः ॥ ५६ ॥

śamaśrīḥ śobhate yeṣāṃ mukhendāvakalaṅkīte | te kulīnendavo vandyāḥ saundaryavijitendriyāḥ || 56 ||

Those whose moonlike faces shine with the beauty of inner calm, without any blemish, are like moons born of a noble line, worthy of reverence, their beauty alone able to conquer the senses of anyone who beholds them.

जिनके चाँद जैसे चेहरे भीतरी शांति की सुंदरता से चमकते हैं, बिना किसी दाग के, वे कुलीन घराने के चाँद जैसे हैं, सम्मान के लायक, जिनकी सुंदरता अकेले ही देखने वाले की इंद्रियों को जीत लेती है।

2.13.57

त्रैलोक्योदरवर्तिन्यो नानन्दाय तथा श्रियः । साम्राज्यसंपत्प्रतिमा यथा शमविभूतयः ॥ ५७ ॥

trailokyodaravartinyo nānandāya tathā śriyaḥ | sāmrajyasampratimā yathā śamavibhūtayāḥ || 57 ||

Even all the riches found anywhere within the three worlds, even wealth like that of a great empire, do not bring as much joy as the glory of inner calm does.

तीनों लोकों में कहीं भी मिलने वाला धन-दौलत, यहाँ तक कि एक बड़े साम्राज्य जैसी संपत्ति भी, उतनी खुशी नहीं देती जितनी भीतरी शांति की शोभा देती है।

2.13.58

यानि दुःखानि या तृष्णा दुःसहा ये दुराधयः । तत्सर्वं शान्तचेतःसु तमोऽर्केष्विव नश्यति ॥ ५८ ॥

yāni duḥkhāni yā tṛṣṇā duḥsahā ye durādhayaḥ | tatsarvaṃ śāntacetāḥsu tamo'rkeṣviva naśyati || 58 ||

Whatever suffering, whatever craving, whatever unbearable inner torment there is, all of it disappears in a peaceful mind, just as darkness disappears before the sun.

जो भी दुख है, जो भी लालच है, जो भी असहनीय भीतरी पीड़ा है, यह सब एक शांत मन में मिट जाता है, ठीक वैसे ही जैसे सूरज के सामने अंधेरा मिट जाता है।

2.13.59

मनो हि सर्वभूतानां प्रसादमधिगच्छति । न तथेन्दोर्यथा शान्ते जने जनितकौतुकम् ॥ ५९ ॥

mano hi sarvabhūtānāṃ prasādamadhiyacchati | na tathendoryathā śānte jane janitakautukam || 59 ||

The minds of all living beings feel a kind of quiet delight, but not as much from looking at the moon as from the wonder that a truly peaceful person awakens in them.

सभी जीवों का मन एक तरह का शांत आनंद महसूस करता है, लेकिन चाँद को देखकर उतना नहीं, जितना एक सच में शांत इंसान से जगने वाले आश्चर्य से होता है।

2.13.60

शमशालिनि सौहार्दवति सर्वेषु जन्तुषु । सुजने परमं तत्त्वं स्वयमेव प्रसीदति ॥ ६० ॥

śamaśālīni sauhārdavati sarveṣu jantuṣu | sujane paramaṃ tattvaṃ svayameva prasīdati || 60 ||

Toward a good person who is calm and feels goodwill for every living being, the highest truth becomes pleased on its own and reveals itself.

जो अच्छा इंसान शांत है और हर जीव के लिए भलाई चाहता है, उसके प्रति सबसे ऊँचा सत्य खुद ही प्रसन्न हो जाता है और खुद को उसके सामने प्रकट कर देता है।

2.13.61

मातरीव परं यान्ति विषमाणि मृदूनि च । विश्वासमिह भूतानि सर्वाणि शमशालिनि ॥ ६१ ॥

mātarīva paraṃ yānti viṣamāṇi mṛdūni ca | viśvāsamihi bhūtāni sarvāṇi śamaśālīni || 61 ||

All beings, whether fierce or gentle, come to trust a calm person completely, the way they trust a mother.

सभी जीव, चाहे वे उग्र हों या नरम, एक शांत इंसान पर पूरी तरह भरोसा करने लगते हैं, जैसे वे अपनी माँ पर भरोसा करते हैं।

2.13.62

न रसायनपानेन न लक्ष्म्यालिङ्गनेन च । तथा सुखमवाप्नोति शमेनान्तर्यथा मनः ॥ ६२ ॥

na rasāyanapānena na lakṣmyāliṅganena ca | tathā sukhamavāpnoti śamenāntaryathā manaḥ || 62 ||

The mind does not find as much happiness from drinking a magic elixir, or from embracing the goddess of fortune, as it finds within itself through calm.

मन को जादुई अमृत पीने से, या भाग्य की देवी को गले लगाने से, उतना सुख नहीं मिलता जितना उसे शांति के ज़रिए अपने भीतर ही मिल जाता है।

2.13.63

सर्वाधिव्याधिचलितं क्रान्तं तृष्णावरत्रया । मनः शमामृतासेकैः समाश्वासय राघव ॥ ६३ ॥

sarvādhivyādhicalitaṃ krāntaṃ tṛṣṇāvaratrayā | manaḥ śamāmṛtāsekaist samāśvāsaya rāghava || 63 ||

Raghava, soothe the mind, shaken by every mental torment and illness, and bound tight as if by the rope of craving, by sprinkling upon it the nectar of inner calm.

राघव, मन को, जो हर तरह की मानसिक पीड़ा और बीमारी से हिल गया है, और तृष्णा की रस्सी से जैसे बँध गया है, भीतरी शांति के अमृत की बूँदें छिड़क कर सात्वना दो।

2.13.64

यत्करोषि यदश्नासि शमशीतलया धिया । तत्रातिस्वदते स्वादु नेतरत्तात मानसे ॥ ६४ ॥

yatkaroṣi yadaśnāsi śamaśītalayā dhiyā | tatrātisvadate svādu netarattāt mānase || 64 ||

Whatever you do, whatever you eat, when your mind is cooled by inner calm, it all tastes wonderfully sweet. Nothing else gives the mind that taste, my child.

तुम जो भी करो, जो भी खाओ, जब तुम्हारा मन भीतरी शांति से ठंडा हो, तो वह सब अद्भुत मीठा लगता है। बेटा, मन को यह स्वाद और किसी चीज़ से नहीं मिलता।

2.13.65

शमामृतरसाच्छन्नं मनो यामेति निर्वृतिम् । छिन्नान्यपि तयाङ्गानि मन्ये रोहन्ति राघव ॥ ६५ ॥

śamāmṛtarasācchannaṃ mano yāmeti nirvṛtim | chinnānyapi tayāṅgāni manye rohanti rāghava || 65 ||

Raghava, the deep contentment the mind reaches when it is steeped in the nectar-taste of calm is so great that I think even limbs that have been cut off would grow back through it.

राघव, शांति के अमृत-रस में डूबे मन को जो गहरा संतोष मिलता है, वह इतना बड़ा है कि मुझे लगता है, कटे हुए अंग भी उसी की मदद से फिर से उग आएँ।

2.13.66

न पिशाचा न रक्षांसि न दैत्या न च शत्रवः । न च व्याघ्रभुजङ्गा वा द्विषन्ति शमशालिनम् ॥ ६६ ॥

na piśācā na rakṣāṃsi na daityā na ca śatravaḥ | na ca vyāghrabhujaṅgā vā dviṣanti śamaśālinam || 66 ||

Not goblins, not demons, not titans, not even enemies, not even tigers or snakes feel any hatred toward a person who is truly calm.

न पिशाच, न राक्षस, न दानव, न यहाँ तक कि दुश्मन, न बाघ और न साँप, कोई भी सच में शांत इंसान से नफरत नहीं करता।

2.13.67

सुसंनद्धसमस्ताङ्गं प्रशमामृतवर्मणा । वेधयन्ति न दुःखानि शरा वज्रशिलामिव ॥ ६७ ॥

susaṃnaddhasamastāṅgaṃ praśamāmṛtavarmaṇā | vedhayanti na duḥkhāni śarā vajraśilāmiva || 67 ||

A person whose whole body is well-armored with the nectar-armor of inner calm cannot be pierced by suffering, just as arrows cannot pierce a rock of diamond.

जिस इंसान का पूरा शरीर भीतरी शांति के अमृत-कवच से अच्छी तरह ढका है, उसे दुख छेद नहीं सकता, ठीक वैसे ही जैसे हीरे की चट्टान को बाण नहीं छेद सकते।

2.13.68

न तथा शोभते राजा अप्यन्तःपुरसंस्थितः । समया स्वच्छया बुद्ध्या यथोपशमशीलया ॥ ६८ ॥

na tathā śobhate rājā apyantaḥpurasaṃsthitaḥ | samayā svacchayā buddhyā yathopaśamaśīlayā || 68 ||

Even a king seated amid the splendor of his palace does not shine as brightly as a person whose mind is calm, clear, and steady.

यहाँ तक कि अपने महल की शान के बीच बैठा राजा भी उतना नहीं चमकता जितना वह इंसान चमकता है जिसका मन शांत, साफ और स्थिर है।

2.13.69

प्राणात्प्रियतरं दृष्ट्वा तुष्टिमेति न वै जनः । यामायाति जनः शान्तिमवलोक्य शमाशयम् ॥ ६९ ॥

prāṇātpriyataraṃ dṛṣṭvā tuṣṭimeti na vai janaḥ | yāmāyāti janaḥ śāntimavalokya śamāśayam || 69 ||

Seeing even something dearer than one's own life does not bring the satisfaction that a person feels on seeing someone whose heart is truly at peace.

अपनी जान से भी प्यारी किसी चीज़ को देखने से भी वह संतोष नहीं मिलता, जो एक इंसान को उस व्यक्ति को देखकर मिलता है जिसका दिल सच में शांत है।

2.13.70

समया शमशालिन्या वृत्त्या यः साधु वर्तते । अभिनन्दितया लोके जीवतीह स नेतरः ॥ ७० ॥

samayā śamaśālinyā vṛttyā yaḥ sādhu vartate | abhinanditayā loke jīvatiha sa netaraḥ || 70 ||

One who lives rightly, with a calm and even way of life that people everywhere praise, he alone truly lives in this world; no one else does.

जो इंसान सही तरीके से जीता है, एक शांत और संतुलित जीवनशैली के साथ जिसकी हर जगह तारीफ होती है, सच में सिर्फ वही इस दुनिया में जीता है; और कोई नहीं।

2.13.71

अनुद्धतमनाः शान्तः साधुः कर्म करोति यत् । तत्सर्वमभिनन्दन्ति तस्येमा भूतजातयः ॥ ७१ ॥

anuddhatamanāḥ śāntaḥ sādhuḥ karma karoti yat | tatsarvamabhinandanti tasyemā bhūtajātayaḥ || 71 ||

Whatever a good person does, one who is calm and free of pride, every kind of creature welcomes and approves of it.

एक अच्छा इंसान, जो शांत है और घमंड से मुक्त है, जो भी करता है, हर तरह के जीव उसका स्वागत करते हैं और उसे सराहते हैं।

2.13.72

श्रुत्वा स्पृष्ट्वा च दृष्ट्वा च भुक्त्वा घ्रात्वा शुभाशुभम् । न हृष्यति ग्लायति यः स शान्त इति कथ्यते ॥ ७२ ॥

śrutvā sprṣṭvā ca dṛṣṭvā ca bhuktvā ghrātvā śubhāśubham | na hrṣyati glāyati yaḥ sa śānta iti kathyate || 72 ||

One who, on hearing, touching, seeing, tasting, or smelling something good or bad, neither feels delight nor distress, he is called a peaceful person.

जो कोई अच्छी या बुरी चीज़ को सुनकर, छूकर, देखकर, चखकर, या सूँघकर न तो खुश होता है और न ही दुखी होता है, उसे शांत इंसान कहा जाता है।

2.13.73

यः समः सर्वभूतेषु भावि काङ्क्षति नोज्झति । जित्वेन्द्रियाणि यत्नेन स शान्त इति कथ्यते ॥ ७३ ॥

yaḥ samaḥ sarvabhūteṣu bhāvi kāṅkṣati nojjhati | jitvendriyāṇi yatnena sa śānta iti kathyate || 73 ||

One who treats all beings equally, who neither longs for nor rejects what the future brings, and who has conquered his senses through steady effort, he is called a peaceful person.

जो सभी जीवों के साथ बराबरी का व्यवहार करता है, जो आने वाले कल की न तो चाह रखता है और न ही उसे ठुकराता है, और जिसने मेहनत से अपनी इंद्रियों को जीत लिया है, उसे शांत इंसान कहा जाता है।

2.13.74

स्पृष्ट्वाऽवदातया बुद्ध्या यथैवान्तस्तथा बहिः । दृश्यन्ते यत्र कार्याणि स शान्त इति कथ्यते ॥ ७४ ॥

sprṣṭvā'vadātayā buddhyā yathaiwantastathā bahiḥ | dṛśyante yatra kāryāṇi sa śānta iti kathyate || 74 ||

One who meets everything with a clear, untainted mind, and whose actions on the outside match exactly what is within him, he is called a peaceful person.

जो हर चीज़ का सामना साफ और निर्मल मन से करता है, और जिसके बाहर के काम बिल्कुल उसके भीतर जैसे ही दिखते हैं, उसे शांत इंसान कहा जाता है।

2.13.75

तुषारकरबिम्बाभं मनो यस्य निराकुलम् । मरणोत्सवयुद्धेषु स शान्त इति कथ्यते ॥ ७५ ॥

tuṣāraakarabimbābhaṃ mano yasya nirākulam | maraṇotsavayuddheṣu sa śānta iti kathyate || 75 ||

One whose mind stays as cool and undisturbed as the disc of the moon, whether facing death, celebration, or battle, he is called a peaceful person.

जिसका मन चाँद के घेरे जितना ही ठंडा और अडिग रहता है, चाहे मौत का सामना हो, उत्सव हो, या युद्ध हो, उसे शांत इंसान कहा जाता है।

2.13.76

स्थितोऽपि न स्थित इव न हृष्यति न कुप्यति । यः सुषुप्तसमः स्वस्थः स शान्त इति कथ्यते ॥ ७६ ॥

sthito'pi na sthita iva na hr̥ṣyati na kupyati | yaḥ suṣuptasamaḥ svasthaḥ sa śānta iti kathyate || 76 ||

Though he takes part in life, he acts as if untouched by it. He neither rejoices nor grows angry. Resting quietly in himself, as calm as someone in deep sleep, such a person is called a peaceful person.

भले ही वह ज़िंदगी में शामिल रहता है, वह ऐसे काम करता है जैसे उससे अछूता हो। न वह खुश होता है और न गुस्सा करता है। खुद में चुपचाप टिका हुआ, गहरी नींद में सोए इंसान जितना शांत, ऐसे इंसान को शांत कहा जाता है।

2.13.77

अमृतस्यन्दसुभगा यस्य सर्वजनं प्रति । दृष्टिः प्रसरति प्रीता स शान्त इति कथ्यते ॥ ७७ ॥

amṛtasyandasubhagā yasya sarvajanaṁ prati | dṛṣṭiḥ prasarati prītā sa śānta iti kathyate || 77 ||

One whose loving gaze, sweet as flowing nectar, spreads out warmly toward every person he meets, he is called a peaceful person.

जिसकी प्यार भरी नज़र, बहते हुए अमृत जितनी मीठी, हर उस इंसान की तरफ गर्मजोशी से फैलती है जिससे वह मिलता है, उसे शांत इंसान कहा जाता है।

2.13.78

योऽन्तः शीतलतां यातो यो भावेषु न मज्जति । व्यवहारी न संमूढः स शान्त इति कथ्यते ॥ ७८ ॥

yo'ntaḥ śītalatāṁ yāto yo bhāveṣu na majjati | vyavahārī na saṁmūḍhaḥ sa śānta iti kathyate || 78 ||

One who has grown cool and calm within, who never sinks into passing moods, and who deals with the world without ever becoming confused by it, he is called a peaceful person.

जो भीतर से ठंडा और शांत हो गया है, जो आते-जाते मूड में कभी नहीं डूबता, और जो दुनिया से जुड़े काम करते हुए भी कभी उलझन में नहीं पड़ता, उसे शांत इंसान कहा जाता है।

2.13.79

अप्यापत्सु दुरन्तासु कल्पान्तेषु महत्स्वपि । तुच्छेऽहं न मनो यस्य स शान्त इति कथ्यते ॥ ७९ ॥

apyāpatsu durantāsu kalpānteṣu mahatsvapi | tucchē'haṁ na mano yasya sa śānta iti kathyate || 79 ||

Even amid dreadful disasters, even amid the great destruction that ends an entire age, his mind holds no sense of I, everything remains a trifle to him. Such a person is called peaceful.

भयानक मुसीबतों के बीच भी, यहाँ तक कि किसी पूरे युग को खत्म करने वाले महाविनाश के बीच भी, उसके मन में मैं का कोई भाव नहीं उठता, उसके लिए सब कुछ मामूली रह जाता है। ऐसे इंसान को शांत कहा जाता है।

2.13.80

आकाशसदृशी यस्य पुंसः संव्यवहारिणः । कलङ्कमेति न मतिः स शान्त इति कथ्यते ॥ ८० ॥

ākāśasadr̥śī yasya puṁsaḥ saṁvyavahāriṇaḥ | kalaṅkameti na matiḥ sa śānta iti kathyate || 80 ||

A person who deals fully with the world, yet whose mind, like the open sky, never gathers any stain, he is called a peaceful person.

जो इंसान दुनिया के हर काम में पूरी तरह शामिल रहता है, फिर भी जिसका मन खुले आकाश की तरह कभी कोई दाग नहीं लेता, उसे शांत इंसान कहा जाता है।

2.13.81

तपस्विषु बहुज्ञेषु याजकेषु नृपेषु च । बलवत्सु गुणाढ्येषु शमवानेव राजते ॥ ८१ ॥

tapasviṣu bahujñeṣu yājakeṣu nṛpeṣu ca | balavatsu guṇāḍhyeṣu śamavāneva rājate || 81 ||

Among ascetics, among the very learned, among priests, among kings, among the powerful, among those rich in good qualities, it is the one who has inner calm who truly stands out.

तपस्वियों में, बहुत पढ़े-लिखे लोगों में, पुजारियों में, राजाओं में, ताकतवर लोगों में, और अच्छे गुणों से भरे लोगों में, असल में वही चमकता है जिसके पास भीतरी शांति है।

2.13.82

शमसंसक्तमनसां महतां गुणशालिनाम् । उदेति निर्वृतिश्चित्ताज्ज्योत्स्नेव सितरोचिषः ॥ ८२ ॥

śamasansaktamanasāṃ mahatāṃ guṇaśālīnām | udeti nirvṛtiścittājjyotsneva sitarociṣaḥ || 82 ||

From the minds of great, virtuous people whose minds cling to inner calm, a deep peace rises up naturally, just as moonlight rises from the bright moon.

उन महान, गुणी लोगों के मन से, जिनका मन भीतरी शांति से जुड़ा रहता है, एक गहरा चैन अपने आप उठता है, ठीक वैसे ही जैसे चमकते चाँद से चाँदनी निकलती है।

2.13.83

सीमान्तो गुणपूगानां पौरुषैकान्तभूषणम् । संकटेषु भयस्थाने शमः श्रीमान्विराजते ॥ ८३ ॥

sīmānto guṇapūgānāṃ pauruṣaikāntabhūṣaṇam | saṅkaṭeṣu bhayasthāne śamaḥ śrīmānvirājate || 83 ||

Calm is the outer limit of every good quality, the one true ornament of courage. In danger, in moments of fear, this glorious calm shines out.

शांति हर अच्छे गुण की आखिरी सीमा है, हिम्मत का एक ही सच्चा गहना है। खतरे में, डर के पलों में, यह शानदार शांति चमक उठती है।

2.13.84

शमममृतमहार्यमार्यगुप्तं परमवलम्ब्य परं पदं प्रयाताः । रघुतनय यथा महानुभावाः क्रममनुपालय सिद्धये तमेव ॥ ८४ ॥

śamamamṛtamahāryamāryaguptaṃ paramavalambya paraṃ padaṃ prayātāḥ | raghutanaya yathā mahānubhāvāḥ kramaamanupālaya siddhaye tameva || 84 ||

By relying on that supreme calm, like nectar, unstealable, carefully guarded by noble people, the great souls have reached the highest state, son of Raghu. Follow that same path yourself, so that you too may succeed.

उस सबसे ऊँची शांति का सहारा लेकर, जो अमृत जैसी है, जिसे कोई चुरा नहीं सकता, जिसे भले लोगों ने संभालकर रखा है, महान आत्माएँ सबसे ऊँची अवस्था तक पहुँची हैं, हे रघुनंदन। तुम भी उसी रास्ते पर चलो, ताकि तुम्हें भी सफलता मिले।

Chapter 14

2.14.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । शास्त्रावबोधामलया धिया परमपूतया । कर्तव्यः कारणज्ञेन विचारोऽनिशमात्मनः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | śāstrāvabodhāmalayā dhiyā paramapūtayā | kartavyaḥ kāraṇajñēna vicāro'niśamātmanah || 1 ||

Sri Vasishtha said, With a mind made completely clean and pure by understanding the scriptures, the man who knows the true cause should constantly inquire into himself.

श्री वशिष्ठ ने कहा, शास्त्रों को समझकर जिसकी बुद्धि पूरी तरह साफ़ और पवित्र हो गई है, ऐसा सच्चा कारण जानने वाला व्यक्ति हमेशा अपने बारे में यानी आत्मा के बारे में सोच-विचार करता रहे।

2.14.2

विचारात्तीक्ष्णतामेत्य धीः पश्यति परं पदम् । दीर्घसंसाररोगस्य विचारो हि महौषधम् ॥ २ ॥

vicārāttīkṣṇatāmetya dhīḥ paśyati paraṁ padam | dīrghasaṁsārarogasya vicāro hi mahauṣadham || 2 ||

Through inquiry the mind becomes sharp and sees the highest state. Inquiry is the great medicine for the long disease of worldly life.

सोच-विचार करने से बुद्धि तेज़ हो जाती है और सबसे ऊँची अवस्था को देख लेती है। सोच-विचार ही संसार की इस लंबी बीमारी की बड़ी दवा है।

2.14.3

आपद्वनमनन्तेहापरिपल्लविताकृति । विचारक्रकचच्छिन्नं नैव भूयः प्ररोहति ॥ ३ ॥

āpadvanamanante hāparipallavitākṛti | vicārakṛkakacchinnam naiva bhūyaḥ prarohati || 3 ||

The forest of trouble, whose shape keeps growing thick with endless craving, once cut down by the saw of inquiry, never grows back again.

मुसीबतों का जंगल, जो अंतहीन इच्छाओं से बढ़ता और घना होता रहता है, एक बार सोच-विचार की आरी से काट दिया जाए तो फिर कभी नहीं उगता।

2.14.4

मोहेन बन्धुनाशेषु संकटेषु शमेषु च । सर्वं व्याप्तं महाप्राज्ञ विचारो हि सतां गतिः ॥ ४ ॥

mohena bandhunāśeṣu saṅkaṭeṣu śameṣu ca | sarvaṁ vyāptaṁ mahāprājña vicāro hi satāṁ gatiḥ || 4 ||

O greatly wise one, delusion spreads everywhere, in the loss of kinsmen, in dangers, and even in times of peace. Inquiry alone is the way for good people.

हे महाबुद्धिमान, मोह हर जगह फैला रहता है, अपनों को खोने में, मुसीबतों में और यहाँ तक कि शांति के समय में भी। भले लोगों का सहारा सिर्फ सोच-विचार ही है।

2.14.5

न विचारं विना कश्चिदुपायोऽस्ति विपश्चिताम् । विचारादशुभं त्यक्त्वा शुभमायाति धीः सताम् ॥ ५ ॥

na vicāraṁ vinā kaścidupāyo'sti vipaścitām | vicārādaśubham tyaktvā śubhamāyāti dhīḥ satām || 5 ||

For the wise there is no other means except inquiry. Through inquiry the mind of good people drops what is bad and comes to what is good.

बुद्धिमानों के लिए सोच-विचार के अलावा और कोई उपाय नहीं है। सोच-विचार से ही भले लोगों की बुद्धि बुरी बात को छोड़कर अच्छी बात की ओर आती है।

2.14.6

बलं बुद्धिश्च तेजश्च प्रतिपत्तिः क्रियाफलम् । फलन्त्येतानि सर्वाणि विचारेणैव धीमताम् ॥ ६ ॥

balam buddhiśca tejaśca pratipattiḥ kriyāphalam | phalantyetāni sarvāṇi vicāreṇaiva dhīmatām || 6 ||

Strength, intelligence, brightness, understanding, and the fruit of action, all of these bear fruit for wise people only through inquiry.

बल, बुद्धि, तेज, समझ और काम का फल, ये सब चीज़ें बुद्धिमान लोगों के लिए सिर्फ सोच-विचार से ही फलती हैं।

2.14.7

युक्तायुक्तमहादीपमभिवाञ्छितसाधकम् । स्फारं विचारमाश्रित्य संसारजलधिं तरेत् ॥ ७ ॥

yuktāyuktamahādīpamabhivāñchitasādhakam | sphāraṁ vicāramāśritya saṁsārajaladhiṁ taret || 7 ||

By relying on inquiry, the great lamp that shows what is right and what is wrong and gets a person what they want, wide and full, one should cross the ocean of worldly life.

सोच-विचार का सहारा लेकर, जो एक बड़ा दीपक है जो सही और गलत को दिखाता है और मनचाही चीज़ पाने में मदद करता है, और जो बहुत विशाल है, मनुष्य को संसार के सागर को पार कर लेना चाहिए।

2.14.8

आलूनहृदयाम्भोजान्महामोहमतङ्गजान् । विदारयति शुद्धात्मा विचारो नाम केसरी ॥ ८ ॥

ālūnahṛdayāmbhojānmaḥāmohamataṅgajān | vidārayati śuddhātmā vicāro nāma kesarī || 8 ||

Inquiry, pure in its nature, is a lion that tears open the lotus-hearts of the elephants that are great delusion.

सोच-विचार, जो अपने स्वभाव से एकदम शुद्ध है, वह एक शेर है जो बड़े मोह रूपी हाथियों के कमल जैसे दिल को फाड़ देता है।

2.14.9

मूढाः कालवशेनेह यद्गताः परमं पदम् । तद्विचारप्रदीपस्य विजृम्भितमनुत्तमम् ॥ ९ ॥

mūḍhāḥ kālavaśeneha yadgatāḥ paramaṁ padam | tadvicārapradīpasya vijṛmbhitamanuttamam || 9 ||

That deluded people, in the course of time, do reach the highest state here, this itself is the supreme unfolding of the lamp of inquiry.

भ्रमाए हुए लोग भी समय के साथ यहाँ सबसे ऊँची अवस्था तक पहुँच जाते हैं, यही सोच-विचार रूपी दीपक की सबसे बड़ी रोशनी है।

2.14.10

राज्यानि संपदः स्फारा भोगो मोक्षश्च शाश्वतः । विचारकल्पवृक्षस्य फलान्येतानि राघव ॥ १० ॥

rājyāni saṁpadaḥ sphārā bhogo mokṣaśca śāśvataḥ | vicārakalpavṛkṣasya phalānyetāni rāghava || 10 ||

O Raghava, kingdoms, vast riches, enjoyment, and everlasting liberation, these are the fruits of the wish-granting tree that is inquiry.

हे राघव, राज्य, बहुत सारा धन, भोग और सदा रहने वाली मुक्ति, ये सब सोच-विचार रूपी कल्पवृक्ष के फल हैं।

2.14.11

या विवेकविकासिन्यो मतयो महतामिह न ता विपदि मज्जन्ति तुम्बकानीव वारिणि ॥ ११ ॥

yā vivekavikāsinyo matayo mahatāmihana tā vipadi majjanti tumbakānīva vāriṇi || 11 ||

The minds of great people that have blossomed through discernment do not sink in trouble here, just as gourds do not sink in water.

बड़े लोगों की जो बुद्धि विवेक से खिली हुई होती है, वह मुसीबत में भी नहीं डूबती, जैसे लौकी पानी में नहीं डूबती।

2.14.12

विचारोदयकारिण्या धिया व्यवहरन्ति येफलानामत्युदाराणां भाजनं हि भवन्ति ते ॥ १२ ॥

vicārodayakāriṇyā dhiyā vyavaharanti yephalānāmatyudārāṇāṃ bhājanam hi bhavanti te || 12 ||

Those who act with a mind that keeps inquiry alive become the vessels of the most generous fruits.
जो लोग ऐसी बुद्धि से काम करते हैं जिसमें सोच-विचार जागता रहता है, वे सबसे बड़े और उदार फलों के हकदार बनते हैं।

2.14.13

मूर्खहृत्काननस्थानामाशाप्रथमरोधिनामविचारकरञ्जानां मञ्जर्यो दुःखरीतयः ॥ १३ ॥

mūrkhaḥrṭkānanasthānāmāśāprathamarodhinānavicārakarañjānāṃ mañjaryo duḥkharītayāḥ || 13 ||

In the forest that is the fool's heart stand the karanja trees called Non-inquiry, the very first to block hope, and their flower-clusters are nothing but the many forms of suffering.

मूर्ख के दिल रूपी जंगल में करंज के पेड़ खड़े हैं जिनका नाम है सोच-विचार का अभाव, जो सबसे पहले उम्मीद को रोकते हैं, और उनके फूलों के गुच्छे दुःख के कई रूप ही हैं।

2.14.14

कज्जलक्षोदमलिना मदिरामदधर्मिणीअविचारमयी निद्रा यातु ते राघव क्षयम् ॥ १४ ॥

kajjalakṣodamalinā madirāmadadharminīnavicāramayī nidrā yātu te rāghava kṣayam || 14 ||

O Raghava, may that sleep of not thinking things through, dark like powdered soot and drunk like wine's intoxication, come to its end for you.

हे राघव, सोच-विचार न करने की वह नींद, जो काजल के चूरे जैसी काली है और शराब के नशे जैसी है, तुम्हारे लिए खत्म हो जाए।

2.14.15

महापदतिदीर्घेषु सद्विचारपरो नरःन निमज्जति मोहेषु तेजोराशिस्तमःस्विव ॥ १५ ॥

mahāpadatidīrghēṣu sadvicāraparo naraḥna nimajjati moheṣu tejorāśistamaḥsviva || 15 ||

In the longest and greatest calamities, a man devoted to true inquiry does not sink into delusion, just as a mass of light does not sink into darkness.

सबसे बड़ी और सबसे लंबी मुसीबतों में भी, जो आदमी सच्चे सोच-विचार में लगा रहता है, वह मोह में नहीं डूबता, जैसे रोशनी का ढेर अंधेरे में नहीं डूबता।

2.14.16

मानसे सरसि स्वच्छे विचारकमलोत्करः । नूनं विकसितो यस्य हिमवानिव भाति सः ॥ १६ ॥

mānase sarasi svacche vicārakamalotkaraḥ | nūnam vikaṣito yasya himavāniva bhāti saḥ || 16 ||

In the clear lake of his mind, where the many lotuses of inquiry have surely bloomed, such a person shines like the Himalaya.

उसके मन रूपी साफ़ झील में जहाँ सोच-विचार के कई कमल खिल चुके हैं, वह व्यक्ति हिमालय की तरह चमकता है।

2.14.17

विचारविकला यस्य मतिर्मान्द्यमुपेयुषः । तस्योदेत्यशनिश्चन्द्रान्मुधा यक्षः शिशोरिव ॥ १७ ॥

vicāravikalā yasya matirmāndyamupēyusaḥ | tasyodetyaśaniścandrānmudhā yakṣaḥ śiśoriva || 17 ||

For the man whose mind, empty of inquiry, has grown dull, a thunderbolt seems to rise where the moon should rise, for no reason at all, like a child seeing a spirit.

जिस आदमी की बुद्धि सोच-विचार के बिना सुस्त हो गई है, उसके लिए चाँद की जगह अचानक बिजली गिरती हुई दिखती है, बिना किसी वजह के, जैसे कोई बच्चा प्रेत देख ले।

2.14.18

दुःखखण्डकमस्थूलं विपन्नवलतामधुः । राम दूरे परित्याज्यो निर्विवेको नराधमः ॥ १८ ॥

duḥkhakhaṇḍakamasthūlaṃ vipanna valatāmadhuḥ | rāma dūre parityājyo nirvivēko narādhamah || 18 ||

He is a small piece of suffering, not something great, sweetness that has turned to ruin. O Rama, keep him far away and give him up, this man without discernment, the lowest of men.

वह दुख का एक टुकड़ा है, कोई बड़ी चीज़ नहीं, ऐसी मिठास जो बर्बादी में बदल चुकी है। हे राम, इस बिना विवेक वाले नीच आदमी को दूर रखो और छोड़ दो।

2.14.19

ये केचन दुरारम्भा दुराचारा दुराधयः । अविचारेण ते भान्ति वेतालास्तमसा यथा ॥ १९ ॥

ye kecana durārambhā durācārā durādhayaḥ | avicāreṇa te bhānti vetālastamasā yathā || 19 ||

Whoever starts out badly, behaves badly, and thinks badly, all such people seem impressive only where there is no inquiry, just as ghosts seem real only in the dark.

जो लोग बुरी शुरुआत करते हैं, बुरा आचरण करते हैं और बुरी सोच रखते हैं, वे सोच-विचार न करने पर ही असरदार लगते हैं, जैसे भूत अंधेरे में ही असली लगते हैं।

2.14.20

अविचारिणमेकान्तवनद्रुमसधर्मकम् । अक्षमं साधुकार्येषु दूरे कुरु रघूद्वह ॥ २० ॥

avicāriṇamēkāntavanadrumasadharmakam | akṣamaṃ sādhu kāryeṣu dūre kuru raghūdvaḥ || 20 ||

O upholder of the Raghus, keep far away the man without inquiry. He is like a tree standing in a lonely forest, useless for any good work.

हे रघुओं को ऊपर उठाने वाले, सोच-विचार न करने वाले आदमी को दूर रखो। वह किसी सुनसान जंगल में खड़े पेड़ जैसा है, जो किसी भी अच्छे काम के लायक नहीं।

2.14.21

विविक्तं हि मनो जन्तोराशावैवश्यवर्जितम् । परां निर्वृतिमभ्येति पूर्णचन्द्र इवात्मनि ॥ २१ ॥

vivekaṃ hi mano jantorāśāvaivaśyavarjitam | parāṃ nirvṛtimabhyeti pūrṇacandra ivātmani || 21 ||

When a creature's mind becomes clear and pure, free from being helplessly ruled by desire, it reaches the highest peace within itself, like a full moon complete in itself.

जब किसी प्राणी का मन साफ़ और शुद्ध हो जाता है, इच्छा का बेबस गुलाम होने से मुक्त हो जाता है, तो वह अपने भीतर ही सबसे बड़ी शांति पा लेता है, जैसे पूर्णिमा का चाँद अपने आप में पूरा होता है।

2.14.22

विवेकितोदिता देहे सर्वं शीतलयत्यलम् । अलंकरोति चात्यन्तं ज्योत्स्नेव भुवनं यथा ॥ २२ ॥

vivekitoditā dehe sarvaṃ śītalayatyalam | alaṅkaroti cātyantaṃ jyotsneva bhuvanaṃ yathā || 22 ||

Once discernment rises in the body, it cools everything completely and beautifies it fully, just as moonlight cools and beautifies the world.

जब शरीर में विवेक जाग उठता है, तो वह सब कुछ पूरी तरह ठंडा कर देता है और पूरी तरह सुंदर बना देता है, जैसे चाँदनी पूरी दुनिया को ठंडा और सुंदर बना देती है।

2.14.23

परमार्थपताकाया धियो धवलचामरम् । विचारो राजते जन्तो रजन्यामिव चन्द्रमाः ॥ २३ ॥

paramārthapatākāyā dhiyo dhavalacāmaram | vicāro rājate janto rajanyāmiva candramāḥ || 23 ||

O living being, inquiry shines like the white fan beside the banner of the intellect that stands for the highest truth, the way the moon shines at night.

हे प्राणी, सोच-विचार उस बुद्धि रूपी झंडे के पास लगे सफेद पंखे की तरह चमकता है जो सबसे बड़े सत्य को दर्शाता है, ठीक वैसे ही जैसे रात में चाँद चमकता है।

2.14.24

विचारचारवो जीवा भासयन्तो दिशो दश । भान्ति भास्करवन्नूनं भूयो भवभयापहाः ॥ २४ ॥

vicāracāravo jīvā bhāsayanto diśo daśa | bhānti bhāskaravannūnaṁ bhūyo bhavabhayāpahāḥ || 24 ||

Living beings made beautiful by inquiry light up all ten directions. They shine truly like the sun, driving away the fear of worldly life even more.

सोच-विचार से सुंदर बने हुए प्राणी सारी दस दिशाओं को रोशन कर देते हैं। वे सच में सूरज की तरह चमकते हैं और संसार के डर को और भी दूर भगा देते हैं।

2.14.25

बालस्य स्वमनोमोहकल्पितः प्राणहारकः । रात्रौ नभसि वेतालो विचारेण विलीयते ॥ २५ ॥

bālasya svamanomohakalpitaḥ prāṇahāraḥ | rātrau nabhasi vetālo vicāreṇa vilīyate || 25 ||

The life-stealing ghost that a child's own confused mind imagines in the night sky disappears through inquiry.

जो जान लेने वाला भूत एक बच्चा अपने ही उलझे हुए मन से रात के आसमान में कल्पना करके देख लेता है, वह सोच-विचार करने से गायब हो जाता है।

2.14.26

सर्व एव जगद्भावा अविचारेण चारवः । अविद्यमानसद्भावा विचारविशरारवः ॥ २६ ॥

sarvaṁ eva jagadbhāvā avicāreṇa cāravaḥ | avidyamānasadbhāvā vicāraviśarāravaḥ || 26 ||

All the things of this world look attractive only when there is no inquiry. They have no real existence, so they fall apart the moment one inquires.

इस संसार की सारी चीज़ें तभी तक आकर्षक लगती हैं जब तक सोच-विचार न किया जाए। उनका कोई सच्चा अस्तित्व नहीं है, इसलिए सोच-विचार करते ही वे बिखर जाती हैं।

2.14.27

पुंसो निजमनोमोहकल्पितोऽनल्पदुःखदः । संसारचिरवेतालो विचारेण विलीयते ॥ २७ ॥

pumso nijamanomohakalpito'nalpaduḥkhadaḥ | saṁsārachirvetālo vicāreṇa vilīyate || 27 ||

The long-standing ghost of worldly life, imagined by a man's own confused mind and giving no small suffering, disappears through inquiry.

संसार का वह पुराना भूत, जो आदमी अपने ही उलझे हुए मन से गढ़ लेता है और जो कम दुख नहीं देता, वह सोच-विचार करने से गायब हो जाता है।

2.14.28

समं सुखं निराबाधमनन्तमनपाश्रयम् । विद्धीमं केवलीभावं विचारोच्चतरोः फलम् ॥ २८ ॥

samaṃ sukhaṃ nirābādhamanantamanapāśrayam | viddhīmaṃ kevalībhāvaṃ vicāroccataroḥ phalam || 28 ||

Know this state of being alone and complete, which is even, happy, free from any hurt, endless, and needing no support, as the fruit of the tall tree of inquiry.

यह जो अकेली और पूरी अवस्था है, जो एक-सी है, सुखी है, किसी चोट से मुक्त है, अंतहीन है और जिसे किसी सहारे की ज़रूरत नहीं, इसे सोच-विचार रूपी ऊँचे पेड़ का फल समझो।

2.14.29

अचलस्थितितोदारा प्रकटाभोगतेजसा । तेन निष्कामतोदेति शीततेवेन्दुनोदिता ॥ २९ ॥

acalasthititodārā prakatābhogatejasā | tena niṣkāmatodeti śītatēvēndunoditā || 29 ||

Desirelessness grows vast through its own unshaken steadiness, shining with a full and open splendor. It rises through that same inquiry, the way coolness rises with the risen moon.

निष्काम भाव अपनी अटल स्थिरता से बहुत विशाल हो जाता है और पूरी तरह खुली हुई शोभा से चमकता है। वह उसी सोच-विचार से उठता है, जैसे चाँद निकलने पर ठंडक उठती है।

2.14.30

स्वविचारमहौषध्या साधुश्चित्तनिषण्णया । तयोत्तमत्वप्रदया नाभिवाञ्छति नोज्झति ॥ ३० ॥

svavicāramahauṣadhyā sādhuścittaniṣaṇṇayā | tayottamatvapradayā nābhivāñchati nojjhati || 30 ||

With the great medicine that is one's own inquiry, well settled in the mind and granting the highest state, a person neither craves anything nor rejects anything.

अपने ही सोच-विचार रूपी बड़ी दवा से, जो मन में अच्छी तरह बैठ चुकी है और सबसे ऊँची अवस्था देती है, आदमी न तो किसी चीज़ की इच्छा करता है और न ही किसी चीज़ को ठुकराता है।

2.14.31

तत्पदालम्बनं चेतः स्फारमाभासमागतम् । नास्तमेति न चोदेति स्वमिवातिततान्तरम् ॥ ३१ ॥

tatpadālambanaṃ cetaḥ sphāramābhāsamāgatam | nāstameti na codeti khamivātītātāntaram || 31 ||

The mind that rests on that highest state, having grown vast yet remaining only an appearance, neither sets nor rises, like the sky, which is vast without any real inside or outside.

वह मन जो उस सबसे ऊँची अवस्था पर टिका है, बहुत विशाल होकर भी बस एक झलक बनकर रह जाता है, न डूबता है न उगता है, जैसे आकाश, जो बहुत विशाल है पर जिसका कोई सच्चा भीतर या बाहर नहीं है।

2.14.32

न ददाति न चादत्ते न चोन्नमति शाम्यति । केवलं साक्षिवत्पश्यञ्जगदाभोगि तिष्ठति ॥ ३२ ॥

na dadāti na cādatte na cunnamati śāmyati | kevalaṃ sākṣivatpasyañjagadābhogi tiṣṭhati || 32 ||

It does not give, it does not take, it does not swell up with pride, it stays calm. It simply remains, watching like a witness, embracing the whole world.

वह न कुछ देता है, न कुछ लेता है, न घमंड से फूलता है, वह शांत रहता है। वह बस एक गवाह की तरह देखता हुआ रहता है, पूरी दुनिया को अपने भीतर समेटे हुए।

2.14.33

न च शाम्यति नाप्यन्तर्नापि बाह्येऽवतिष्ठति । न च नैष्कर्म्यमादत्ते न च कर्मणि मज्जति ॥ ३३ ॥

na ca śāmyati nāpyantarnāpi bāhye'vatiṣṭhati | na ca naiṣkarmyamādatte na ca karmaṇi majjati || 33 ||

And it does not merely become calm, nor does it stay only inside or only outside. It does not take up inaction, and it does not sink into action either.

और वह सिर्फ शांत हो जाना भी नहीं है, न वह सिर्फ भीतर रहता है न सिर्फ बाहर। वह न तो कुछ न करने को पकड़ता है, न ही काम में डूब जाता है।

2.14.34

उपेक्षते गतं वस्तु संप्राप्तमनुवर्तते । न क्षुब्धो न च वाऽक्षुब्धो भाति पूर्ण इवार्णवः ॥ ३४ ॥

upekṣate gataṁ vastu saṁprāptamanuvartate | na kṣubdho na ca vā'kṣubdho bhāti pūrṇa ivārṇavaḥ || 34 ||

It has no concern for what has already gone, and it goes along with whatever comes. Neither disturbed nor undisturbed, it shines like a full, brimming ocean.

जो बीत गया उसकी उसे कोई परवाह नहीं, और जो आता है उसके साथ वह चल पड़ता है। न वह विचलित होता है, न अविचलित, वह भरे हुए समुद्र की तरह चमकता है।

2.14.35

एवं पूर्णेन मनसा महात्मानो महाशयाः । जीवन्मुक्ता जगत्स्मिन्विहरन्तीह योगिनः ॥ ३५ ॥

evaṁ pūrṇena manasā mahātmāno mahāśayāḥ | jīvanmuktā jagatysminviharantīha yoginaḥ || 35 ||

In this way, with a mind that has become whole, great souls of noble mind live as liberated persons even while alive. Such yogis wander here in this world.

इस तरह पूरे हो चुके मन के साथ, महान और उदार आत्माएँ जीते जी मुक्त होकर रहती हैं। ऐसे योगी इसी संसार में यहाँ-वहाँ घूमते हैं।

2.14.36

उषित्वा सुचिरं कालं धीरास्ते यावदीप्सितम् । ते तमन्ते परित्यज्य यान्ति केवलतां तताम् ॥ ३६ ॥

uṣitvā suciram kālam dhīrāste yāvādīpsitam | te tamante parityajya yānti kevalatām tatām || 36 ||

Having lived for as long as they wished, these steady, wise people, at the end, give up that body and go to the vast state of oneness.

जब तक जितना चाहा उतना लंबा समय जीकर, ये धीर और बुद्धिमान लोग, आखिर में उस शरीर को छोड़कर, अकेलेपन की उस विशाल अवस्था में चले जाते हैं।

2.14.37

कोऽहं कस्य च संसार इत्यापद्यपि धीमता । चिन्तनीयं प्रयत्नेन सप्रतीकारमात्मना ॥ ३७ ॥

ko'ham kasya ca saṁsāra ityāpadyapi dhīmatā | cintanīyam prayatnena sapratīkāramātmanā || 37 ||

Even in trouble, a wise man must, with effort, think for himself about the question, who am I, and whose is this worldly life, in a way that finds the remedy.

मुसीबत में भी बुद्धिमान आदमी को मेहनत से अपने आप यह सोचना चाहिए कि मैं कौन हूँ और यह संसार किसका है, और ऐसे सोचना चाहिए कि उसका इलाज भी मिल जाए।

2.14.38

कार्यसंकटसंदेहं राजा जानाति राघव । निष्फलं सफलं वापि विचारेणैव नान्यथा ॥ ३८ ॥

kāryasaṃkaṭasaṃdehaṃ rājā jānāti rāghava | niṣphalam sapphalam vāpi vicāreṇaiva nānyathā || 38 ||

O Raghava, a king can tell whether a difficult task will fail or succeed only through careful thinking, not in any other way.

हे राघव, राजा यह जान पाता है कि कोई मुश्किल काम असफल होगा या सफल, सिर्फ सोच-विचार से, किसी और तरीके से नहीं।

2.14.39

वेदवेदान्तसिद्धान्तस्थितयः स्थितिकारणम् । निर्णयन्ते विचारेण दीपेन च भुवो निशि ॥ ३९ ॥

vedavedāntasiddhāntasthitayaḥ sthitikāraṇam | nirṇīyante vicāreṇa dīpena ca bhuvo niśi || 39 ||

The settled conclusions of the Veda and the Vedanta, and the reason behind their authority, are decided only through inquiry, just as things on the ground at night are made out only by a lamp. वेद और वेदांत के तय किए गए सिद्धांत, और उनके सही होने का कारण, सिर्फ सोच-विचार से ही तय होते हैं, जैसे रात में ज़मीन पर पड़ी चीज़ें सिर्फ दीये से ही दिखाई देती हैं।

2.14.40

अनष्टमन्धकारेषु बहुतेजःस्वजिह्वितम् । पश्यत्यपि व्यवहितं विचारश्चारुलोचनम् ॥ ४० ॥

anaṣṭamandhakāreṣu bahutejaḥsvajihvitam | paśyatyapi vyavahitam vicāraścāru locanam || 40 ||

Even in the deepest darkness, inquiry, that beautiful eye, is never lost. It can still see a hidden thing even when that thing has turned its own great light away.

सबसे घने अंधेरे में भी सोच-विचार नाम की वह सुंदर आँख कभी खोती नहीं। वह छिपी हुई चीज़ को भी देख लेती है, चाहे उस चीज़ ने अपनी बड़ी रोशनी को भी क्यों न मोड़ लिया हो।

2.14.41

विवेकान्धो हि जात्यन्धः शोच्यः सर्वस्य दुर्मतिः । दिव्यचक्षुर्विवेकात्मा जयत्यखिलवस्तुषु ॥ ४१ ॥

vivekāndho hi jātyandhaḥ śocyah sarvasya durmatih | divyacakṣurvivekātmā jayatyakhilavastuṣu || 41 ||

One who is blind in discernment is truly blind from birth, pitiable, and wrong-minded in everyone's eyes. But one whose very self is discernment, having a divine eye, wins over all things. जो विवेक में अंधा है वह सच में जन्म से अंधा है, दयनीय है, और सबकी नज़र में गलत सोच वाला है। पर जिसकी आत्मा ही विवेक है, उसके पास दिव्य आँख होती है और वह हर चीज़ में जीत जाता है।

2.14.42

परमात्ममयी मान्या महानन्दैकसाधिनी । क्षणमेकं परित्याज्या न विचारचमत्कृतिः ॥ ४२ ॥

paramātmamayī mānyā mahānandaikasaādhinī | kṣaṇamekaṃ parityājyā na vicāracamatkṛtiḥ || 42 ||

This wonder that is inquiry, made of the highest self, worthy of respect, and the one sure way to reach the greatest bliss, should not be given up even for a single moment.

सोच-विचार का यह चमत्कार, जो सबसे ऊँची आत्मा से बना है, आदर के लायक है, और सबसे बड़े आनंद तक पहुँचने का इकलौता पक्का रास्ता है, इसे एक पल के लिए भी नहीं छोड़ना चाहिए।

2.14.43

विचारचारुपुरुषो महतामपि रोचते । परिपक्वचमत्कारं सहकारफलं यथा ॥ ४३ ॥

vicāracārupuruṣo mahatāmapī rocate | paripakvacamatkāraṁ sahakāraphalaṁ yathā || 43 ||

A man made attractive by inquiry pleases even great people, just as a fully ripened mango, wonderful to the taste, pleases everyone.

सोच-विचार से सुंदर बना हुआ आदमी बड़े-बड़े लोगों को भी अच्छा लगता है, जैसे पूरी तरह पका हुआ आम, जो स्वाद में गज़ब का होता है, सबको अच्छा लगता है।

2.14.44

विचारकान्तमतयो नानेकेषु पुनःपुनः । लुठन्ति दुःखश्वभ्रेषु ज्ञाताध्वगतयो नराः ॥ ४४ ॥

vicārakāntamatayo nānekeṣu punaḥpunaḥ | luṭhanti duḥkhaśvabhreṣu jñātādhvagatayo narāḥ || 44 ||

People whose minds have wandered away from inquiry roll again and again into the many pits of suffering, even though they already know the way out.

जिन लोगों का मन सोच-विचार से भटक गया है, वे बार-बार दुख के कई गड्ढों में गिरते रहते हैं, भले ही वे रास्ता जानते हों।

2.14.45

नच रौति तथा रोगी नानर्थशतजर्जरः । अविचारविनष्टात्मा यथाऽज्ञः परिरोदिति ॥ ४५ ॥

naca rauti tathā rogī nānārthaśatajarjarah | avicāravinaṣṭātmā yathā'jñāḥ pariroditi || 45 ||

A sick man, even one broken by a hundred misfortunes, does not cry out as much as an ignorant man wails, one whose self has been ruined by not thinking things through.

एक बीमार आदमी, चाहे वह सौ मुसीबतों से टूट चुका हो, उतना नहीं चिल्लाता जितना एक नासमझ आदमी रोता है, जिसकी आत्मा सोच-विचार न करने से बर्बाद हो चुकी है।

2.14.46

वरं कर्दममेकत्वं मलकीटकता वरम् । वरमन्धगुहाहित्वं न नरस्याविचारिता ॥ ४६ ॥

varaṁ kardamamekatvaṁ malakīṭakatā varaṁ | varamandhaguhaahitvaṁ na narasyāvicāritā || 46 ||

Better to become one with mud, better to become a worm in filth, better to live as a snake in a dark cave, than for a man to have no inquiry.

मिट्टी में मिल जाना बेहतर है, गंदगी में कीड़ा बन जाना बेहतर है, अंधेरी गुफा में साँप बनकर रहना बेहतर है, पर आदमी का सोच-विचार से खाली रहना ठीक नहीं है।

2.14.47

सर्वानर्थनिजावासं सर्वसाधुतिरस्कृतम् । सर्वदौस्थ्यसीमान्तमविचारं परित्यजेत् ॥ ४७ ॥

sarvānarthanijāvāsaṁ sarvasādhutiraskṛtam | sarvadausthityasīmāntamavicāraṁ parityajet || 47 ||

One should give up not thinking things through. It is the very home of every misfortune, scorned by every good person, and the outer edge of every kind of misery.

सोच-विचार न करने की आदत को छोड़ देना चाहिए। यह हर मुसीबत का घर है, हर भले आदमी की नज़र में तुच्छ है, और हर तरह की बदहाली की आखिरी सीमा है।

2.14.48

नित्यं विचारयुक्तेन भवितव्यं महात्मना । तथान्धकूपे पततां विचारो ह्यवलम्बनम् ॥ ४८ ॥

nityaṃ vicārayuktena bhavitavyaṃ mahātmanā | tathāndhakūpe patatāṃ vicāro hyavalambanam || 48 ||

A great soul should always be full of inquiry, for to those who are falling into a dark, hidden well, inquiry alone is the thing to hold on to.

महान आत्मा को हमेशा सोच-विचार से भरा रहना चाहिए, क्योंकि जो लोग किसी अंधेरे, छिपे हुए कुएँ में गिर रहे हों, उनके लिए सोच-विचार ही पकड़ने का इकलौता सहारा है।

2.14.49

स्वयमेवात्मनात्मानमवष्टभ्य विचारतः । संसारमोहजलधेस्तारयेत्स्वमनोमृगम् ॥ ४९ ॥

svayamevātmanātmānamavaṣṭabhya vicārataḥ | saṃsāramohajaladhestārayetsvamanomṛgam || 49 ||

By himself, holding himself steady through his own self by means of inquiry, a man should carry his own mind, which is like a deer, safely across the ocean of the delusion of worldly life.

आदमी को खुद ही, सोच-विचार के ज़रिए अपने आप को अपने आप से थामकर, अपने मन को, जो एक हिरन की तरह है, संसार के मोह रूपी सागर के पार ले जाना चाहिए।

2.14.50

कोऽहं कथमयं दोषः संसाराख्य उपागतः । न्यायेनेति परामर्शो विचार इति कथ्यते ॥ ५० ॥

ko'haṃ kathamayaṃ doṣaḥ saṃsārākhyā upāgataḥ | nyāyeneiti parāmarśo vicāra iti kathyate || 50 ||

Who am I, and how has this flaw called worldly life come upon me, thinking this over properly and carefully is called inquiry.

मैं कौन हूँ, और यह जो संसार नाम का दोष मुझ पर आ पड़ा है वह कैसे आया, इस बात को ठीक ढंग से सोचना ही सोच-विचार कहलाता है।

2.14.51

अन्धान्धमोहसुधनं चिरं दुःखाय केवलम् । कृतं शिलाया हृदयं दुर्मतेश्चाविचारिणः ॥ ५१ ॥

andhāndhamohasudhanam chiraṃ duḥkhāya kevalam | kṛtaṃ śilāyā hṛdayaṃ durmateścāvicāriṇaḥ || 51 ||

The heart of a foolish man who never inquires becomes a heart of stone, a storehouse of the blindest delusion, kept only for long, lasting suffering.

जो मूर्ख आदमी कभी सोच-विचार नहीं करता, उसका दिल पत्थर का दिल बन जाता है, वह सबसे गहरे मोह का भंडार बन जाता है, जो सिर्फ लंबे समय तक दुख देने के लिए है।

2.14.52

भावाभावग्रहोत्सर्गदृशामिह हि राघव । न विचारादृते तत्त्वं ज्ञायते साधु किञ्चन ॥ ५२ ॥

bhāvābhāvagrahotsargadr̥śāmiha hi rāghava | na vicārādṛte tattvaṃ jñāyate sādhu kiṃcana || 52 ||

O Raghava, here in this world, for those who see things only by grabbing on to some as real and throwing off others as unreal, no truth at all is properly known without inquiry.

हे राघव, इस दुनिया में जो लोग कुछ चीज़ों को सच मानकर पकड़ लेते हैं और कुछ को झूठ मानकर छोड़ देते हैं, उनके लिए सोच-विचार के बिना कोई भी सच्चाई ठीक से नहीं जानी जा सकती।

2.14.53

विचाराज्ज्ञायते तत्त्वं तत्त्वाद्विश्रान्तिरात्मनि । अतो मनसि शान्तत्वं सर्वदुःखपरिक्षयः ॥ ५३ ॥

vicārājñāyate tattvaṃ tattvādvīśrāntirātmāni | ato manasi śāntatvaṃ sarvaduḥkḥaparikṣayaḥ || 53 ||

Through inquiry the truth is known, from the truth comes rest within the self, and from that comes peace in the mind and the complete end of all suffering.

सोच-विचार से सच्चाई जानी जाती है, सच्चाई से आत्मा में आराम मिलता है, और उससे मन में शांति और सारे दुखों का पूरी तरह अंत हो जाता है।

2.14.54

सफलता फलते भुवि कर्मणां प्रकटतां किल गच्छति उत्तमाम् । स्फुटविचारदृशैव विचारिता शमवते भवते च विरोचताम् ॥ ५४ ॥

saphalatā phalate bhuvi karmaṇāṃ prakāṣatāṃ kila gacchati uttamām | sphuṭavicāradṛśaiḥ vicāritā śamavate bhavate ca virocataṃ || 54 ||

May the fruitfulness of actions, judged only by the clear eye of inquiry, come out fully and reach its highest form on this earth, and may it shine for the person who is at peace and for the person still caught up in worldly life.

कामों का फल, जो सिर्फ सोच-विचार की साफ नज़र से जांचा गया हो, इस धरती पर पूरी तरह सामने आए और अपने सबसे ऊँचे रूप तक पहुँचे, और वह उस व्यक्ति के लिए भी चमके जो शांत है और उसके लिए भी जो अभी संसार में उलझा हुआ है।

Chapter 15

2.15.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । संतोषो हि परं श्रेयः संतोषः सुखमुच्यते संतुष्टः परमभ्येति विश्राममरिसूदन ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | santoṣo hi paraṃ śreyaḥ santoṣaḥ sukhamucyate santuṣṭaḥ paramabhyeti viśrāmamarisūdana || 1 ||

Sri Vasishtha said, Contentment is indeed the highest good. Contentment is called happiness. O slayer of enemies, the contented person reaches the greatest rest.

श्री वशिष्ठ ने कहा, संतोष ही सबसे बड़ी भलाई है। संतोष को ही सुख कहा जाता है। हे शत्रुओं को मारने वाले, जो संतुष्ट है वह सबसे बड़े आराम को पा लेता है।

2.15.2

संतोषैश्वर्यसुखिनां चिरविश्रान्तचेतसाम् । साम्राज्यमपि शान्तानां जरत्तृणलवायते ॥ २ ॥

santoṣaiśvaryasukhināṃ ciraviśrāntacetasām | sāmrajyamapi śāntānāṃ jaratṛṇalavāyate || 2 ||

For those made happy by the wealth of contentment, whose minds have long been at rest, who are at peace, even an empire feels like a bit of dry grass.

जो लोग संतोष रूपी धन से सुखी हैं, जिनका मन लंबे समय से शांत रहा है, जो चैन में हैं, उनके लिए एक पूरा राज्य भी सूखे घास के तिनके जैसा लगता है।

2.15.3

संतोषशालिनी बुद्धी राम संसारवृत्तिषु । विषमास्वप्यनुद्विग्ना न कदाचन हीयते ॥ ३ ॥

santoṣaśālīnī buddhī rāma saṃsāravṛttiṣu | viṣamāsvapyanudvignā na kadācana hīyate || 3 ||

O Rama, the mind that has contentment in it never fails in the affairs of worldly life, remaining undisturbed even in the hard ones.

हे राम, जिस बुद्धि में संतोष होता है वह संसार के कामकाज में कभी कमज़ोर नहीं पड़ती, वह मुश्किल हालात में भी बेचैन नहीं होती।

2.15.4

संतोषामृतपानेन ये शान्तास्तृप्तिमागताः । भोगश्रीरतुला तेषामेषा प्रतिविषायते ॥ ४ ॥

santoṣāmṛtapānena ye śāntāstrīptimāgatāḥ | bhogaśrīratulā teṣāmeṣā prativīṣāyate || 4 ||

Those who, by drinking the nectar of contentment, have grown peaceful and satisfied, find that even the finest, unmatched pleasures of the world turn into poison next to it.

जो लोग संतोष रूपी अमृत पीकर शांत हो चुके हैं और तृप्त हो चुके हैं, उनके लिए भोग-विलास की वह बेजोड़ शोभा भी, इसके सामने ज़हर जैसी लगने लगती है।

2.15.5

न तथा सुखयन्त्येताः पीयूषरसवीचयः । यथातिमधुरास्वादः संतोषो दोषनाशनः ॥ ५ ॥

na tathā sukhayantyetāḥ pīyūṣarasavīcayaḥ | yathātimadhurāsvādaḥ santoṣo doṣanāśanaḥ || 5 ||

Even the waves of heavenly nectar do not give as much happiness as contentment does, whose taste is the sweetest, and which destroys every flaw.

स्वर्ग के अमृत की लहरें भी उतना सुख नहीं देती जितना संतोष देता है, जिसका स्वाद सबसे मीठा है और जो हर बुराई को मिटा देता है।

2.15.6

अप्राप्तवाञ्छामुत्सृज्य संप्राप्ते समतां गतः अदृष्टक्वेदाक्वेदो यः स संतुष्ट इहोच्यते ॥ ६ ॥

aprāptavāñchāmutṣṛjya saṁprāpte samatāṁ gataḥadrṣṭakhedākhedo yaḥ sa saṁtuṣṭa ihocyate || 6 ||

One who gives up longing for what has not come, who meets what has come with an even mind, and who stays untroubled even by trouble not yet seen, such a person is here called content.

जो न मिली हुई चीज़ की चाह छोड़ देता है, जो मिली हुई चीज़ को शांत मन से स्वीकार करता है, और जो अभी न दिखी हुई मुसीबत से भी परेशान नहीं होता, ऐसे व्यक्ति को यहाँ संतुष्ट कहा जाता है।

2.15.7

आत्मनात्मनि संतोषं यावद्याति न मानसमुद्भवन्त्यापदस्तावल्लता इव मनोबिलात् ॥ ७ ॥

ātmanātmani saṁtoṣaṁ yāvadyāti na mānasamudbhavantyāpadastāvallatā iva manobilāt || 7 ||

As long as the mind does not reach contentment within itself, by itself, calamities keep sprouting up like creepers from the hole of the mind.

जब तक मन खुद अपने भीतर संतोष तक नहीं पहुँचता, तब तक मुसीबतें मन के बिल से बेलों की तरह उगती रहती हैं।

2.15.8

संतोषशीतलं चेतः शुद्धविज्ञानदृष्टिभिः भृशं विकासमायाति सूर्याशुभिरिवाम्बुजम् ॥ ८ ॥

saṁtoṣaśītalam cetah śuddhavijñānadṛṣṭibhiḥbhr̥ṣam vikāsamāyāti sūryāśubhirivāmbujam || 8 ||

The mind made cool by contentment blossoms fully through the light of pure knowledge, just as a lotus blossoms through the sun's rays.

संतोष से ठंडा हुआ मन शुद्ध ज्ञान की रोशनी से पूरी तरह खिल उठता है, जैसे कमल सूरज की किरणों से खिल उठता है।

2.15.9

आशावैवश्यविवशे चित्ते संतोषवर्जिते म्लाने वक्रमिवादरशे न ज्ञानं प्रतिबिम्बति ॥ ९ ॥

āśāvaivaśyavivaśe citte saṁtoṣavarjitemlāne vakramivādarśe na jñānam pratibimbati || 9 ||

In a mind ruled helplessly by desire, empty of contentment and dull, knowledge does not show itself clearly, just as a face does not show clearly in a warped mirror.

जो मन इच्छा का बेबस गुलाम है, जिसमें संतोष नहीं है, जो धुंधला पड़ चुका है, उसमें ज्ञान साफ नहीं दिखता, जैसे टेढ़े शीशे में चेहरा साफ नहीं दिखता।

2.15.10

अज्ञानघनयामिन्या संकोचं न नराम्बुजम्यात्यसावुदितो यस्य नित्यं संतोषभास्करः ॥ १० ॥

ajñānaghanayāminyā saṁkocaṁ na narāmbujamyātyasāvudito yasya nityam saṁtoṣabhāskaraḥ || 10 ||

For one in whom the sun of contentment has always risen, the lotus that is the man does not close up in the thick night of ignorance.

जिसके भीतर संतोष रूपी सूरज हमेशा उगा रहता है, उस आदमी रूपी कमल को अज्ञान की घनी रात में भी बंद नहीं होना पड़ता।

2.15.11

अकिंचनोऽप्यसौ जन्तुः साम्राज्यसुखमश्नुते । आधिव्याधिविनिर्मुक्तं संतुष्टं यस्य मानसम् ॥ ११ ॥

akiñcano'pyasau jantuḥ sāmrajyasukham aśnute | ādhivyādhivinirmuktaṁ saṁtuṣṭaṁ yasya mānasam || 11 ||

Even a man who has nothing at all enjoys the happiness of an empire, if his mind is content and free from both mental worry and bodily illness.

चाहे किसी आदमी के पास कुछ भी न हो, फिर भी वह राज-पाट जैसे सुख का अनुभव करता है, अगर उसका मन संतुष्ट है और मानसिक चिंता और शारीरिक बीमारी दोनों से मुक्त है।

2.15.12

नाभिवाञ्छत्यसंप्राप्तं प्राप्तं भुङ्क्ते यथाक्रमम् । यः सुसौम्यसमाचारः संतुष्ट इति कथ्यते ॥ १२ ॥

nābhivāñchatyasamprāptaṁ prāptaṁ bhuñkte yathākramam | yaḥ susaumyasamācāraḥ saṁtuṣṭa iti kathyate || 12 ||

One who does not long for what is not yet had, who enjoys what has come in its proper turn, and whose conduct is calm and gentle, is called content.

जो न मिली हुई चीज़ की इच्छा नहीं करता, जो मिली हुई चीज़ को सही समय पर भोगता है, और जिसका बर्ताव शांत और नरम है, उसे संतुष्ट कहा जाता है।

2.15.13

संतुष्टिपरतृप्तस्य महतः पूर्णचेतसः । क्षीराब्धेरिव शुद्धस्य मुखे लक्ष्मीर्विराजते ॥ १३ ॥

saṁtuṣṭiparatṛptasya mahataḥ pūrṇacetasaḥ | kṣīrābderiva śuddhasya mukhe lakṣmīrvirājate || 13 ||

On the face of a great, whole-minded person who is fully satisfied through contentment, pure like the ocean of milk, beauty shines.

जो महान व्यक्ति संतोष से पूरी तरह तृप्त है और जिसका मन दूध के सागर जैसा शुद्ध और पूरा है, उसके चेहरे पर एक अलग ही सुंदरता चमकती है।

2.15.14

पूर्णतामलमाश्रित्य स्वात्मन्येवात्मना स्वयम् । पौरुषेण प्रयत्नेन तृष्णां सर्वत्र वर्जयेत् ॥ १४ ॥

pūrṇatāmalamāśritya svātmanyevātmanā svayam | pauruṣeṇa prayatnena tṛṣṇāṁ sarvatra varjayet || 14 ||

Taking refuge, all by himself, in the pure fullness that lies within his own self, a man should give up craving everywhere, through his own effort.

अपने ही भीतर मौजूद उस पूरी और शुद्ध अवस्था का सहारा लेकर, आदमी को अपने ही पुरुषार्थ और मेहनत से हर जगह की चाह को छोड़ देना चाहिए।

2.15.15

संतोषाऽमृतपूर्णस्य शान्तशीतलया धिया । स्वयं स्थैर्यं मनो याति शीतांशोरिव शाश्वतम् ॥ १५ ॥

saṁtoṣā'mṛtapūrṇasya śāntaśīitalyā dhiyā | svayaṁ sthairyam mano yāti śītāṁśoriva śāśvatam || 15 ||

For one who is full of the nectar of contentment, with a peaceful, cool mind, the mind itself becomes steady forever, like the steadiness of the cool moon.

जो संतोष रूपी अमृत से भरा हुआ है, जिसकी बुद्धि शांत और ठंडी है, उसका मन खुद ही हमेशा के लिए स्थिर हो जाता है, जैसे ठंडा चाँद हमेशा स्थिर रहता है।

2.15.16

संतोषपुष्टमनसं भृत्या इव महर्द्धयः । राजानमुपतिष्ठन्ति किंकरत्वमुपागताः ॥ १६ ॥

santoṣapuṣṭamanasaṁ bhr̥tyā iva maharddhayaḥ | rājānamupatiṣṭhanti kiṁkaratvamupāgatāḥ || 16 ||

Great riches come and stand before the man whose mind is fed by contentment, like servants attending a king, taking on the role of his servants.

बड़ी-बड़ी संपत्तियाँ उस आदमी के पास खुद चलकर आती हैं जिसका मन संतोष से पला हुआ है, नौकरों की तरह, जैसे नौकर राजा की सेवा में हाज़िर होते हैं।

2.15.17

आत्मनैवात्मनि स्वस्थे संतुष्टे पुरुषे स्थिते । प्रशाम्यन्त्याधयः सर्वे प्रावृषीवाशु पांशवः ॥ १७ ॥

ātmanaivātmani svasthe saṁtuṣṭe puruṣe sthithe | praśāmyantyādhayaḥ sarve prāvṛṣīvāśu pāṁśavaḥ || 17 ||

When a person stands settled and content within himself, by himself, all his mental troubles quickly settle down, like dust settling in the rainy season.

जब कोई आदमी खुद अपने भीतर, अपने आप से स्थिर और संतुष्ट होकर टिक जाता है, तो उसकी सारी मानसिक परेशानियाँ जल्दी शांत हो जाती हैं, जैसे बरसात में धूल बैठ जाती है।

2.15.18

नित्यं शीतलया राम कुलङ्कपरिभिन्नया । पुरुषः शुद्धया वृत्त्या भाति पूर्णतयेन्दुवत् ॥ १८ ॥

nityaṁ śītalayā rāma kulāṅkaparibhinnayā | puruṣaḥ śuddhayā vṛttyā bhāti pūrṇatayenduvat || 18 ||

O Rama, through conduct that is always cool, pure, and free of any dark spot, a person shines in full completeness, like the moon.

हे राम, ऐसे बर्ताव से जो हमेशा ठंडा, शुद्ध और किसी भी दाग से मुक्त हो, आदमी पूरी तरह चमक उठता है, जैसे चाँद अपनी पूर्णता में चमकता है।

2.15.19

समतासुन्दरं वक्रं पुरुषस्यावलोकयन् । तोषमेति यथा लोको न तथा धनसंचयैः ॥ १९ ॥

samatāsundaraṁ vakraṁ puruṣasyāvalokayan | toṣameti yathā loko na tathā dhanasaṁcayaiḥ || 19 ||

Looking at a person's face, made beautiful by an even and calm mind, people find satisfaction the way they naturally do, they do not find that same satisfaction by piling up wealth.

किसी आदमी का चेहरा देखकर, जो उसके शांत और संतुलित मन से सुंदर बन गया है, लोगों को वैसे ही संतोष मिल जाता है जैसे मिलना चाहिए, इतना संतोष धन इकट्ठा करने से नहीं मिलता।

2.15.20

समतया मतया गुणशालिनां पुरुषराडिह यः समलंकृतः । तममलं प्रणमन्ति नभश्चरा अपि महामुनयो रघुनन्दन ॥ २० ॥

samatayā matayā guṇaśālīnāṁ puruṣarāḍiha yaḥ samalaṁkṛtaḥ | tamamalaṁ praṇamanti nabhaścarā api mahāmunayo raghunandana || 20 ||

O joy of the Raghus, before the best of men here, fully adorned with the evenness of mind that virtuous people value, that spotless man, even the beings who move through the sky and the great sages bow down.

हे रघुनंदन, इस दुनिया में जो सबसे बड़ा पुरुष गुणी लोगों द्वारा सराही गई मन की समता से पूरी तरह सुसज्जित है, उस निर्मल आदमी के आगे आकाश में विचरने वाले देवता भी और बड़े-बड़े ऋषि भी झुकते हैं।

Chapter 16

2.16.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । विशेषेण महाबुद्धे संसारोत्तरणे नृणाम् । सर्वत्रोपकरोतीह साधुः साधुसमागमः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | viśeṣeṇa mahābuddhe saṁsārottarāṇe nṛṇām | sarvatropakarotīha sādhuḥ sādhusamāgamaḥ || 1 ||

Vasishtha said: O great-minded one, meeting good people helps a person in every way in this life, and it helps most of all in crossing over this world.

वशिष्ठ जी ने कहा: हे बड़ी बुद्धि वाले, अच्छे लोगों से मिलना हर तरह से फायदा देता है, और सबसे ज्यादा फायदा यह इस संसार से पार जाने में देता है।

2.16.2

साधुसङ्गतरोर्जातं विवेककुसुमं सितम् । रक्षन्ति ये महात्मानो भाजनं ते फलश्रियः ॥ २ ॥

sādhusaṅgatarorjātaṁ vivekakusumaṁ sitam | rakṣanti ye mahātmāno bhājanaṁ te phalaśriyaḥ || 2 ||

The white flower of clear understanding grows on the tree of good company. The great souls who protect this flower are the ones who get to enjoy its rich fruit.

अच्छे लोगों की संगत रूपी पेड़ पर साफ समझ का सफेद फूल खिलता है। जो महान लोग इस फूल की रक्षा करते हैं, वही इसके भरपूर फल का सुख पाते हैं।

2.16.3

शून्यमाकीर्णतामेति मृतिरप्युत्सवायते । आपत्संपदिवाभाति विद्वज्जनसमागमे ॥ ३ ॥

śūnyamākīrṇatāmeti mṛtirapyutsavāyate | āpatsaṁpadivābhāti vidvajanasaṁāgame || 3 ||

In the company of wise people, an empty place feels full, even death feels like a festival, and misfortune looks like good fortune.

बुद्धिमान लोगों के साथ रहने पर सूनी जगह भी भरी हुई लगती है, मौत भी त्योहार जैसी लगती है, और मुसीबत भी अच्छे भाग्य जैसी दिखती है।

2.16.4

हिममापत्सरोजिन्या मोहनीहारमारुतः । जयत्येको जगत्स्मिन्साधुः साधुसमागमः ॥ ४ ॥

himamāpatsarojinyā mohanīhāramārutaḥ | jayatyeko jagatysmin sādhuḥ sādhusamāgamaḥ || 4 ||

In this world, the company of good people wins over everything, alone - it is like frost falling on a pond full of lotuses of misfortune, and it is the wind that blows away the fog of delusion.

इस दुनिया में अच्छे लोगों की संगत अकेले ही सबसे ऊपर है - यह मुसीबत रूपी कमल-तालाब पर पड़ी पाला है, और भ्रम रूपी कोहरे को उड़ाने वाली हवा है।

2.16.5

परं विवर्धनं बुद्धेरज्ञानतरुशातनम् । समुत्सारणमाधीनां विद्धि साधुसमागमम् ॥ ५ ॥

paraṁ vivardhanaṁ buddherajñānataruśātanam | samutsāraṇamādhīnāṁ viddhi sādhusamāgamam || 5 ||

Know this: meeting good people is the best way to grow your understanding, to cut down the tree of ignorance, and to drive away all mental pain.

यह जान लो: अच्छे लोगों से मिलना ही समझ को सबसे ज्यादा बढ़ाने का तरीका है, अज्ञान के पेड़ को काटने का तरीका है, और मन की सारी पीड़ा को दूर भगाने का तरीका है।

2.16.6

विवेकः परमो दीपो जायते साधुसंगमात् । मनोहरोज्ज्वलो नूनमासेकादिव गुच्छकः ॥ ६ ॥

vivekaḥ paramo dīpo jāyate sādhusaṅgamāt | manoharojjvalo nūnamāsekādiva gucchakaḥ || 6 ||

From the company of good people, the finest lamp - clear understanding - is lit, beautiful and bright, the way a bunch of flowers blooms bright when it is watered.

अच्छे लोगों की संगत से सबसे बढ़िया दीया जलता है - साफ समझ का दीया - जो सुंदर और चमकीला होता है, ठीक वैसे ही जैसे पानी देने से फूलों का गुच्छा खिलकर चमक उठता है।

2.16.7

निरपायां निराबाधां निर्वृतिं नित्यपीवरीम् । अनुत्तमां प्रयच्छन्ति साधुसङ्गविभूतयः ॥ ७ ॥

nirapāyāṃ nirābādhāṃ nirvṛtiṃ nityapīvarīm | anuttamāṃ prayacchanti sādhusaṅgavibhūtayaḥ || 7 ||

The riches that come from the company of good people give a peace that cannot be harmed, that meets no trouble, that stays full forever, and that has no equal.

अच्छे लोगों की संगत से मिलने वाला धन ऐसी शांति देता है जिसे कोई नुकसान नहीं पहुंचा सकता, जिसमें कोई रुकावट नहीं आती, जो हमेशा भरपूर रहती है, और जिसके बराबर कुछ और नहीं है।

2.16.8

अपि कष्टतरां प्राप्तेर्दशां विवशतां गतैः । मनागपि न संत्याज्या मानवैः साधुसंगतिः ॥ ८ ॥

api kaṣṭatarāṃ prāptairdaśāṃ vivashatāṃ gataiḥ | manāgapi na saṁtyājyā mānavaiḥ sādhusaṅgatiḥ || 8 ||

Even a person who has fallen into the most painful state and become completely helpless should not give up the company of good people, not even a little.

चाहे कोई इंसान सबसे ज्यादा दुखद हालत में क्यों न पहुंच जाए और पूरी तरह लाचार क्यों न हो जाए, फिर भी उसे अच्छे लोगों की संगत जरा भी नहीं छोड़नी चाहिए।

2.16.9

साधुसंगतयो लोके सन्मार्गस्य च दीपिकाः । हार्दान्धकारहारिण्यो भासो ज्ञानविवस्वतः ॥ ९ ॥

sādhusaṅgatayo loke sanmārgasya ca dīpikāḥ | hārdāndhakārahāriṇyo bhāso jñānavivasvataḥ || 9 ||

In this world, meetings with good people are lamps that light up the right path. They clear away the darkness inside the heart - they are rays of the sun of true knowledge.

इस दुनिया में अच्छे लोगों से मिलना सही रास्ते को रोशन करने वाला दीया है। यह दिल के अंदर के अंधेरे को दूर करता है - यह सच्चे ज्ञान के सूरज की किरणें हैं।

2.16.10

यः स्नातः शीतसितया साधुसंगतिगङ्गाया । किं तस्य दानैः किं तीर्थैः किं तपोभिः किमध्वरैः ॥ १० ॥

yaḥ snātaḥ śītasitayā sādhusaṅgatigaṅgayā | kiṃ tasya dānaiḥ kiṃ tīrthaiḥ kiṃ tapobhiḥ kimadhvaraiḥ || 10 ||

A person who has bathed in the cool, pure Ganga of good company - what more does he need from giving gifts, visiting holy places, doing penance, or performing sacrifices?

जो इंसान अच्छे लोगों की संगत रूपी ठंडी और साफ गंगा में नहा चुका है, उसे दान देने से क्या मिलेगा, तीर्थ जाने से क्या मिलेगा, तप करने से क्या मिलेगा, या यज्ञ करने से क्या मिलेगा?

2.16.11

नीरागाश्छिन्नसंदेहा गलितग्रन्थयोऽनघ । साधवो यदि विद्यन्ते किं तपस्तीर्थसंग्रहैः ॥ ११ ॥

nīrāgāśchinnasandehā galitagranthayo'nagha | sādhave yadi vidyante kiṃ tapastīrthasaṅgrahaiḥ || 11 ||

O sinless one, if you can find good people - free from craving, all their doubts cut away, the knots of their heart untied - then what use is doing penance or gathering merit at holy places?

हे निष्पाप, अगर तुम्हें ऐसे अच्छे लोग मिल जाएं जो लालच से मुक्त हों, जिनके सारे शक मिट चुके हों, और जिनके दिल की गांठें खुल चुकी हों, तो फिर तप करने या तीर्थों में पुण्य जमा करने का क्या फायदा?

2.16.12

विश्रान्तमनसो धन्याः प्रयत्नेन परेण हि । दरिद्रेणेव मणयः प्रेक्षणीया हि साधवः ॥ १२ ॥

viśrāntamanaso dhanyāḥ prayatnena pareṇa hi | daridreṇeva maṇayaḥ prekṣaṇīyā hi sādhave || 12 ||

Good people, whose minds are at rest, are truly fortunate - and they should be sought out with the greatest effort, the way a poor man would search hard just to get a look at jewels.

जिन अच्छे लोगों का मन शांत है, वे सच में भाग्यशाली हैं - और उन्हें पूरी मेहनत से ढूंढना चाहिए, ठीक वैसे ही जैसे एक गरीब आदमी हीरे-जवाहरात को बस देखने के लिए भी बड़ी मेहनत करता है।

2.16.13

सत्समागमसौन्दर्यशालिनी धीमतां मतिः । कमलेवाप्सरोवृन्दे सर्वदैव विराजते ॥ १३ ॥

satsamāgamasauṇḍaryaśālīnī dhīmatāṃ matiḥ | kamalevāpsarovṛnde sarvadaiva virājate || 13 ||

The mind of a wise person, made beautiful by meeting good people, always shines - the way the goddess Lakshmi shines even among a crowd of heavenly nymphs.

अच्छे लोगों से मिलने के कारण बुद्धिमान इंसान का मन सुंदर बनकर हमेशा चमकता है - ठीक वैसे ही जैसे देवी लक्ष्मी अप्सराओं की भीड़ में भी चमकती रहती हैं।

2.16.14

तेनामलविचारस्य पदस्याग्रावचूलिता । प्रथिता येन धन्येन न त्यक्ता साधुसंगतिः ॥ १४ ॥

tenāmalavicārasya padasyāgrāvacūlitā | prathitā yena dhanyena na tyaktā sādhusaṅgatiḥ || 14 ||

The fortunate person who never gives up the company of good people reaches the very top of clear understanding, and that becomes known to everyone.

जो भाग्यशाली इंसान अच्छे लोगों की संगत कभी नहीं छोड़ता, वह साफ समझ की सबसे ऊंची चोटी तक पहुंच जाता है, और यह बात सबको पता चल जाती है।

2.16.15

विच्छिन्नग्रन्थयस्तज्ज्ञाः साधवः सर्वसंमताः । सर्वोपायेन संसेव्यास्ते ह्युपाया भवाम्बुधौ ॥ १५ ॥

vicchinagrānṭhayastajñāḥ sādhave sarvasaṃmatāḥ | sarvopāyena saṃsevyāste hyupāyā bhavāmbudhau || 15 ||

Good people - whose inner knots are cut, who know the truth, and whom everyone respects - should be served in every way possible, because they are the means to cross the ocean of this world.

अच्छे लोग - जिनकी अंदर की गांठें कट चुकी हैं, जो सच्चाई को जानते हैं, और जिन्हें सब मानते हैं - उनकी हर तरह से सेवा करनी चाहिए, क्योंकि वे ही इस संसार रूपी समुद्र को पार करने का साधन हैं।

2.16.16

ते एते नरकाग्नीनां संशुष्केन्धनतां गताः । यैर्दृष्टा हेलया सन्तो नरकानलवारिदाः ॥ १६ ॥

te ete narakāgnīnāṃ saṃśuṣṭhendhanatāṃ gatāḥ | yairdṛṣṭā helayā santo narakānalavāridāḥ || 16 ||

For those who have even just glanced at good people, the fires of hell turn into dry, dead fuel - because good people are like rain clouds that put out the fire of hell.

जिन लोगों ने अच्छे लोगों को एक नजर भी देख लिया है, उनके लिए नरक की आग सूखी-मरी हुई लकड़ी जैसी हो जाती है - क्योंकि अच्छे लोग बारिश के बादलों जैसे हैं जो नरक की आग बुझा देते हैं।

2.16.17

दारिद्र्यं मरणं दुःखमित्यादिविषयो भ्रमः । संप्रशाम्यत्यशेषेण साधुसंगमभेषजैः ॥ १७ ॥

dāridryaṃ maraṇaṃ duḥkhamityādiviṣayo bhramaḥ | saṃpraśāmyatyśeṣeṇa sādhusaṃgamabheṣajaiḥ || 17 ||

The confusion about poverty, death, sorrow, and everything of that kind is completely cured by the medicine of meeting good people.

गरीबी, मौत, दुख, और ऐसी सब चीजों को लेकर जो भ्रम रहता है, वह अच्छे लोगों से मिलने की दवा से पूरी तरह ठीक हो जाता है।

2.16.18

संतोषः साधुसङ्गश्च विचारोऽथ शमस्तथा । एत एव भवाम्भोधावुपायास्तरणे नृणाम् ॥ १८ ॥

saṃtoṣaḥ sādhusaṅgaśca vicāro'ṭha śamastathā | eta eva bhavāmbhodhāvupāyāstarṇe nṛṇām || 18 ||

Contentment, the company of good people, inquiry into the truth, and a quiet mind - these four alone are the means for a man to cross the ocean of this world.

संतोष, अच्छे लोगों की संगत, सच की खोज, और शांत मन - बस यही चार चीजें इंसान के लिए इस संसार रूपी समुद्र को पार करने का साधन हैं।

2.16.19

संतोषः परमो लाभः सत्सङ्गः परमा गतिः । विचारः परमं ज्ञानं शमो हि परमं सुखम् ॥ १९ ॥

saṃtoṣaḥ paramo lābhaḥ satsaṅgaḥ paramā gatiḥ | vicāraḥ paramaṃ jñānaṃ śamo hi paramaṃ sukham || 19 ||

Contentment is the greatest gain. Company of good people is the highest path. Inquiry into the truth is the highest knowledge. A quiet mind is indeed the greatest happiness.

संतोष सबसे बड़ा फायदा है। अच्छे लोगों की संगत सबसे ऊंचा रास्ता है। सच की खोज सबसे ऊंचा ज्ञान है। शांत मन ही सबसे बड़ा सुख है।

2.16.20

चत्वार एते विमला उपाया भवभेदने । यैरभ्यस्तास्त उत्तीर्णा मोहवारिभवार्णवात् ॥ २० ॥

catvāra ete vimalā upāyā bhavabhedane | yairabhyastās ta uttīrṇā mohavāribhavārṇavāt || 20 ||

These four are the pure ways to break through this world. Whoever practices them has crossed over the ocean of existence, whose water is delusion.

ये चार चीजें ही इस संसार को तोड़ने के साफ-सुथरे रास्ते हैं। जो इन्हें अपनाता है, वह भ्रम रूपी पानी वाले इस संसार-समुद्र को पार कर जाता है।

2.16.21

एकस्मिन्नेव वै तेषामभ्यस्ते विमलोदये । चत्वारोऽपि किलाभ्यस्ता भवन्ति सुधियां वर ॥ २१ ॥

ekasminneva vai teṣāmbhyaste vimalodaye | catvāro'pi kilābhyastā bhavanti sudhiyāṃ vara || 21 ||

O best of the wise, when even just one of these four is practiced purely and grows, it is said that all four come to be practiced.

हे बुद्धिमानों में सबसे श्रेष्ठ, जब इन चारों में से एक को भी साफ मन से अपनाया जाता है और वह बढ़ता है, तो कहा जाता है कि चारों ही अपना ली गई हैं।

2.16.22

एकोऽप्येकोऽपि सर्वेषामेषां प्रसवभूरिह । सर्वसंसिद्धये तस्मात्पत्नैनैकं समाश्रयेत् ॥ २२ ॥

eko'pyeko'pye sarveṣāmeṣāṃ prasavabhūriha | sarvasaṃsiddhaye tasmātyatnenaikaṃ samāśrayet || 22 ||

Each single one of these four is, by itself, the source of all the others. So, for complete success, one should hold on to just one of them with real effort.

इन चारों में से हर एक अकेला ही बाकी सबका मूल है। इसलिए पूरी सफलता के लिए मेहनत से इनमें से किसी एक को थाम लेना चाहिए।

2.16.23

सत्समागमसंतोषविचाराः सुविचारितम् । प्रवर्तन्ते शमस्वच्छे वाहनानीव सागरे ॥ २३ ॥

satsamāgamasantoṣavicārāḥ suvicāritam | pravartante śamasvacche vāhanānīva sāgare || 23 ||

Good company, contentment, and careful inquiry, when well practiced, move forward smoothly in the clear sea of a calm mind, like ships sailing on a calm ocean.

अच्छी संगत, संतोष, और सोच-समझकर की गई खोज, जब अच्छी तरह अपनाई जाती हैं, तो शांत मन के साफ समुद्र में आसानी से आगे बढ़ती हैं, ठीक वैसे ही जैसे शांत समुद्र में जहाज चलते हैं।

2.16.24

विचारसंतोषशमसत्समागमशालिनि । प्रवर्तन्ते श्रियो जन्तौ कल्पवृक्षाश्रिते यथा ॥ २४ ॥

vicārasantoṣaśamasatsamāgamaśālīni | pravartante śriyo jantau kalpavṛkṣāśrite yathā || 24 ||

In a person who has inquiry, contentment, calmness, and the company of good people, good fortune keeps coming - just as it comes to someone who takes shelter under a wish-granting tree. जिस इंसान में खोज, संतोष, शांति, और अच्छे लोगों की संगत होती है, उसमें अच्छा भाग्य लगातार आता रहता है - ठीक वैसे ही जैसे कल्पवृक्ष के नीचे शरण लेने वाले को मिलता है।

2.16.25

विचारशमसत्सङ्गसंतोषवति मानवे । प्रवर्तन्ते प्रपूर्णन्दौ सौन्दर्याद्या गुणा इव ॥ २५ ॥

vicāraśamasatsaṅgasantoṣavati māvave | pravartante prapūrṇendau saundaryādyā guṇā iva || 25 ||

In a person who has inquiry, calmness, good company, and contentment, good qualities keep appearing - the way beauty and other such qualities appear on a full moon.

जिस इंसान में खोज, शांति, अच्छी संगत, और संतोष होते हैं, उसमें अच्छे गुण लगातार आते रहते हैं - ठीक वैसे ही जैसे पूरे चांद में सुंदरता और दूसरे गुण दिखते हैं।

2.16.26

सत्सङ्गसंतोषशमविचारवति सन्मतौ । प्रवर्तन्ते मन्त्रिवरे राजनीव जयश्रियः ॥ २६ ॥

satsaṅgasantoṣaśamavicāravati sanmatau | pravartante mantrivare rājanīva jayaśriyaḥ || 26 ||

In a good mind that has good company, contentment, calmness, and inquiry, glory keeps coming - the way victory keeps coming to a king who has an excellent minister.

जिस अच्छे मन में अच्छी संगत, संतोष, शांति, और खोज होती है, उसमें शान लगातार आती रहती है - ठीक वैसे ही जैसे एक बढ़िया मंत्री वाले राजा को जीत लगातार मिलती है।

2.16.27

तस्मादेकतमं नित्यमेतेषां रघुनन्दन । पौरुषेण मनो जित्वा यत्नेनाभ्याहरेद्गुणम् ॥ २७ ॥

tasmādekatamaṃ nityameteṣāṃ raghunandana | pauruṣeṇa mano jitvā yatnenābhyāharedguṇam || 27 ||

So, O Raghu's joy, conquer your mind through your own effort, and constantly, with real effort, bring in just one of these four qualities.

इसलिए, हे रघुनन्दन, अपनी ही मेहनत से अपने मन को जीतो, और हमेशा, पूरी कोशिश से, इन चारों में से किसी एक गुण को अपने अंदर ले आओ।

2.16.28

परं पौरुषमाश्रित्य जित्वा चित्तमतङ्गजम् । यावदेको गुणो नान्तस्तावन्नास्त्युत्तमा गतिः ॥ २८ ॥

paraṃ pauruṣamāśritya jitvā cittamataṅgaṃ | yāvadeko guṇo nāntastāvannāstyuttamā gatiḥ || 28 ||

Rely on your greatest effort and conquer the mind, which is like a wild elephant. Until even one of these good qualities enters you, there is no way to reach the highest goal.

अपनी पूरी ताकत लगाकर मन को जीतो, जो एक जंगली हाथी जैसा है। जब तक इनमें से एक भी अच्छा गुण तुम्हारे अंदर नहीं आता, तब तक सबसे ऊँचे लक्ष्य तक पहुंचने का कोई रास्ता नहीं है।

2.16.29

पौरुषेण प्रयत्नेन दन्तैर्दन्तान्विचूर्णयेत् । यावन्नाभिनिविष्टं ते मनो राम गुणार्जने ॥ २९ ॥

pauruṣeṇa prayatnena dantairdantānvicūrṇayet | yāvannābhiniṣṭaṃ te mano rāma guṇārjane || 29 ||

Rama, grit your teeth and put in real, manly effort, until your mind is firmly fixed on gaining these good qualities.

हे राम, दांत भींचकर पूरी मर्दानगी से मेहनत करो, जब तक तुम्हारा मन इन अच्छे गुणों को पाने पर पूरी तरह जम न जाए।

2.16.30

देवो भवाथ यक्षो वा पुरुषः पादपोऽथ वा । तावत्तव महाबाहो नोपायोऽस्तीह कश्चन ॥ ३० ॥

devo bhavātha yakṣo vā puruṣaḥ pādapo'tha vā | tāvattava mahābāho nopāyo'stīha kaścana || 30 ||

Whether you become a god, a spirit, a man, or even a tree - until then, O mighty-armed one, there is no way out for you at all.

चाहे तुम देवता बन जाओ, यक्ष बन जाओ, इंसान बनो, या पेड़ ही बनो - तब तक, हे बलवान भुजाओं वाले, तुम्हारे लिए कोई भी रास्ता नहीं है।

2.16.31

एकस्मिन्नेव फलदे गुणे बलमुपागते । क्षीयन्ते सर्व एवाशु दोषा विवशचेतसः ॥ ३१ ॥

ekasmineva phalade guṇe balamupāgate | kṣīyante sarva evāśu doṣā vivśacetasaḥ || 31 ||

When even just one good quality grows strong and starts to bear fruit, all the faults that had a helpless grip on the mind quickly wither away.

जब एक भी अच्छा गुण मजबूत होकर फल देने लगता है, तो मन को लाचार बनाए रखने वाले सारे दोष जल्दी ही खत्म हो जाते हैं।

2.16.32

गुणे विवृद्धे वर्धन्ते गुणा दोषजयप्रदाः । दोषे विवृद्धे वर्धन्ते दोषा गुणविनाशनाः ॥ ३२ ॥

guṇe vivṛddhe vardhante guṇā doṣajayapradāḥ | doṣe vivṛddhe vardhante doṣā guṇavināśanāḥ || 32 ||

When one good quality grows, more good qualities grow with it, and together they defeat the faults. When one fault grows, more faults grow with it, and together they destroy the good qualities.

जब एक अच्छा गुण बढ़ता है, तो उसके साथ और अच्छे गुण भी बढ़ते हैं, और मिलकर वे दोषों को हरा देते हैं। जब एक दोष बढ़ता है, तो उसके साथ और दोष भी बढ़ते हैं, और मिलकर वे अच्छे गुणों को नष्ट कर देते हैं।

2.16.33

मनोमोहवने ह्यस्मिन्वेगिनी वासनासरित् । शुभाशुभबृहत्कूला नित्यं वहति जन्तुषु ॥ ३३ ॥

manomohavane hyasminveginī vāsanāsarit | śubhāśubhabṛhatkūlā nityaṃ vahati jantuṣu || 33 ||

In this forest of the mind's confusion, a fast river of old habits and desires always flows in every creature, with two great banks - one good, one bad.

मन के इस भ्रम रूपी जंगल में, पुरानी आदतों और इच्छाओं की एक तेज नदी हर जीव में हमेशा बहती रहती है, जिसके दो बड़े किनारे हैं - एक अच्छा, एक बुरा।

2.16.34

सा हि स्वेन प्रयत्नेन यस्मिन्नेव निपात्यते । कूले तेनैव वहति यथेच्छसि तथा कुरु ॥ ३४ ॥

sā hi svena prayatnena yasminneva nipātyate | kūle tenaiva vahati yatheccchasi tathā kuru || 34 ||

By your own effort, you can direct that river toward whichever bank you choose, and it will flow that way. So do as you wish.

अपनी ही मेहनत से तुम उस नदी को जिस किनारे की ओर मोड़ना चाहो, मोड़ सकते हो, और वह उसी तरफ बहने लगेगी। इसलिए जैसा चाहो वैसा करो।

2.16.35

पुरुषयत्नजवेन मनोवने शुभतटानुगतां क्रमशः कुरु । वरमते निजभावमहानदीमह तेन मनागपि नोह्यसे ॥ ३५ ॥

puruṣayatnajavēna manovane śubhatatānugatāṃ kramśaḥ kuru | varamate nijabhāvamahānādīmahā tena manāgapi nohyase || 35 ||

So, step by step, use the force of your own effort to guide the river in the forest of your mind toward its good bank. O best of the wise, then that great river of your own nature will not be able to sweep you away, not even a little.

इसलिए, धीरे-धीरे, अपनी मेहनत के जोर से मन के जंगल की नदी को उसके अच्छे किनारे की ओर मोड़ो। हे बुद्धिमानों में श्रेष्ठ, फिर तुम्हारे अपने स्वभाव की वह बड़ी नदी तुम्हें जरा भी नहीं बहा पाएगी।

Chapter 17

2.17.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । एवमन्तर्विवेको यः स महानिह राघव । योग्यो ज्ञानगिरः श्रोतुं राजेव नयभारतीम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | evamantarviveko yaḥ sa mahāniha rāghava | yogyo jñānagiraḥ śrotuṃ rājeva nayabhāratīm || 1 ||

Vasishtha said: O Raghu's descendant, a person who has this kind of inner clarity is truly great, and is fit to hear words of true knowledge - just as a king is fit to hear words of good policy.

वशिष्ठ जी ने कहा: हे रघुवंशी, जिस इंसान के अंदर ऐसी साफ समझ होती है, वह सच में महान है, और वह ज्ञान की बातें सुनने के लायक है - ठीक वैसे ही जैसे एक राजा अच्छी नीति की बातें सुनने के लायक होता है।

2.17.2

अवदातोऽवदातस्य विचारस्य महाशयः । जडसङ्गोज्झितो योग्यः शरदिन्दोर्यथा नभः ॥ २ ॥

avadāto'vadātasya vicārasya mahāśayaḥ | jaḍasaṅgojjhito yogyaḥ śaradindoryathā nabhaḥ || 2 ||

A noble-minded person who is pure and free from any tie to dull, lifeless things is fit for pure inquiry - the way a clear sky is fit for the autumn moon to shine in.

जो बड़े मन वाला इंसान साफ है और बेजान चीजों के मोह से मुक्त है, वह साफ खोज करने के लायक है - ठीक वैसे ही जैसे साफ आसमान शरद की चांदनी के लिए सही जगह होता है।

2.17.3

त्वमेतया खण्डितया गुणलक्ष्म्या समाश्रितः । मनोमोहहरं वाक्यं वक्ष्यमाणमिदं शृणु ॥ ३ ॥

tvametayā khaṇḍitayā guṇalakṣmyā samāśritaḥ | manomohaharaṃ vākyaṃ vakṣyamāṇamidam śṛṇu || 3 ||

You now have this wealth of good qualities I have just described. Now listen to these words I am about to speak, which will remove the confusion in your mind.

अभी जो अच्छे गुणों का धन मैंने बताया, वह अब तुम्हारे पास है। अब मैं जो बात कहने जा रहा हूँ, उसे सुनो - यह तुम्हारे मन की उलझन को दूर कर देगी।

2.17.4

पुण्यकल्पद्रुमो यस्य फलभारानतः स्थितः । मुक्तये जायते जन्तोस्तस्येदं श्रोतुमुद्यमः ॥ ४ ॥

punyaḥkalpadrumo yasya phalabhārānataḥ sthitaḥ | muktaye jāyate jantostasyedam śrotumudyamaḥ || 4 ||

Only someone whose tree of good deeds is so full of fruit that it bends under its own weight will make the effort to listen to this teaching, and for him it will lead to freedom.

जिस इंसान का पुण्य-कर्मों का पेड़ फलों के भार से झुका हुआ है, वही इस बात को सुनने की मेहनत करता है, और उसी के लिए यह मुक्ति लाती है।

2.17.5

पावनानामुदाराणां परबोधैकदायिनाम् । वचसां भाजनं भूत्यै भव्यो भवति नाधमः ॥ ५ ॥

pāvanānāmudārāṇāṃ parabodhaikadāyinām | vacasāṃ bhājanaṃ bhūtyai bhavyo bhavati nādhamah || 5 ||

Only a worthy person - not a lowly one - can become the right vessel for these pure, generous words that give nothing but the highest wisdom, and gain true good from them.

सिर्फ एक अच्छा इंसान - कोई नीच इंसान नहीं - इन पवित्र और उदार शब्दों का सही पात्र बन सकता है, जो सिर्फ सबसे ऊंचा ज्ञान देते हैं, और इनसे सच्चा फायदा पा सकता है।

2.17.6

मोक्षोपायाभिधानेयं संहिता सारसंमिता । त्रिंशद्द्वे च सहस्राणि ज्ञाता निर्वाणदायिनी ॥ ६ ॥

mokṣopāyābhidhāneyaṃ saṃhitā sārasaṃmitā | triṃśaddve ca sahasrāṇi jñātā nirvāṇadāyinī || 6 ||

This text, called The Means to Liberation, is thirty-two thousand verses long, full of pure essence, and when it is truly known, it gives liberation.

यह ग्रंथ, जिसे मुक्ति का उपाय कहा जाता है, बत्तीस हजार श्लोकों का है, सार से भरा हुआ है, और जब इसे सच में समझ लिया जाए तो यह मुक्ति देता है।

2.17.7

दीपे यथा विनिद्रस्य ज्वलिते संप्रवर्तते । आलोकोऽनिच्छतोऽप्येवं निर्वाणमनया भवेत् ॥ ७ ॥

dīpe yathā vinidrasya jvalite saṃpravartate | āloko'nicchato'pyevaṃ nirvāṇamanayā bhavet || 7 ||

When a lamp is lit, its light reaches a person who is awake even if he does not ask for it. In the same way, this text brings liberation, even to someone who is not seeking it.

जब दीया जलाया जाता है, तो उसकी रोशनी जागे हुए इंसान तक पहुंच जाती है, भले ही वह उसे न चाहे। उसी तरह, यह ग्रंथ मुक्ति देता है, भले ही कोई उसे न ढूंढ रहा हो।

2.17.8

स्वयं ज्ञाता श्रुता वापि भ्रान्तिशान्त्यैकसौख्यदा । आप्रेक्ष्य वर्णिता सद्यो यथा स्वर्गतरङ्गिणी ॥ ८ ॥

svayaṃ jñātā śrutā vāpi bhrāntiśāntyaikasaukhyāda | āprekṣya varṇitā sadyo yathā svargatarangiṇī || 8 ||

Whether you come to know this text yourself or just hear it, it gives one kind of happiness - the end of confusion. Even just to look at it and describe it brings instant good, the way even a glimpse of the heavenly Ganga does.

चाहे तुम इस ग्रंथ को खुद जानो या बस सुनो, यह एक ही तरह की खुशी देता है - भ्रम का खत्म होना। इसे बस देखकर बता देना भी तुरंत भला करता है, ठीक वैसे ही जैसे स्वर्ग की गंगा की एक झलक भी भला करती है।

2.17.9

यथा रज्ज्वामहिभ्रान्तिर्विनश्यत्यवलोकनात् । तथैतत्प्रेक्षणाच्छान्तिमेति संसारदुःखिता ॥ ९ ॥

yathā rajjvāmahibhrāntirvinasyatyavalokanāt | tathaitatprekṣaṇācchāntimetisamsāraduḥkhitā || 9 ||

Just as the mistaken sight of a snake in a rope disappears when you look closely, so too, by looking closely into this text, a person suffering from this world's pain finds peace.

जैसे रस्सी में सांप दिखने का भ्रम ध्यान से देखने पर मिट जाता है, वैसे ही इस ग्रंथ को ध्यान से देखने पर संसार के दुख से पीड़ित इंसान को शांति मिल जाती है।

2.17.10

युक्तियुक्तार्थवाक्यानि कल्पितानि पृथक्पृथक् । दृष्टान्तसारसूक्तानि चास्यां प्रकरणानि षट् ॥ १० ॥

yuktiyuktārthavākyaṇi kalpitāni prthakprthak | dṛṣṭāntasārasūktāni cāsyāṃ prakaraṇāni ṣaṭ || 10 ||

In this text there are six sections, each made of separate statements whose meaning fits sound reasoning, and each full of the best examples and sayings.

इस ग्रंथ में छह हिस्से हैं, हर एक अलग-अलग ऐसी बातों से बना है जिनका मतलब सही तर्क से मेल खाता है, और हर एक बढ़िया उदाहरणों और कहावतों से भरा है।

2.17.11

वैराग्याख्यं प्रकरणं प्रथमं परिकीर्तितम् । विरागो वर्धते येन सेकेनेव मरौ तरुः ॥ ११ ॥

vairāgyākhyam prakaraṇam prathamam parikīrtitam | virāgo vardhate yena sekeneva marau taruḥ || 11 ||

The first section is called Dispassion. Reading it makes dispassion grow, the way watering makes a tree grow even in a desert.

पहला हिस्सा वैराग्य कहलाता है। इसे पढ़ने से वैराग्य बढ़ता है, ठीक वैसे ही जैसे पानी देने से रेगिस्तान में भी पेड़ बढ़ जाता है।

2.17.12

अनुबन्धेन सहितं दिष्टतत्त्वनिरूपणम् । सार्धं सहस्रं ग्रन्थस्य यस्मिन्हृदि विचारिते । प्रकाशाच्छुद्धतोदेति मणाविव सुमार्जिते ॥ १२ ॥

anubandhena sahitam diṣṭatattvanirūpaṇam | sārḍhaṁ sahasraṁ granthasya yasminhṛdi vicārite |

prakāśācchuddhatodeti maṇāviva sumārjite || 12 ||

This section, which sets out the truth being taught along with how it connects to the rest, is one thousand five hundred verses long. When you turn it over in your heart, its light brings out a clear purity in you, the way light brings out the shine in a well-polished gem.

यह हिस्सा, जो सिखाई जाने वाली सच्चाई को उसके संबंध के साथ बताता है, डेढ़ हजार श्लोकों का है। जब इसे दिल में उतारकर सोचा जाता है, तो इसकी रोशनी अंदर एक साफ चमक ले आती है, ठीक वैसे ही जैसे अच्छी तरह पॉलिश किए हीरे में रोशनी से चमक निकलती है।

2.17.13

मुमुक्षुव्यवहाराख्यं ततः प्रकरणं कृतम् । सहस्रमात्रं ग्रन्थस्य युक्तिग्रन्थेन सुन्दरम् ॥ १३ ॥

mumukṣuvyavahārākhyam tataḥ prakaraṇam kṛtam | sahasramātraṁ granthasya yuktigranthana sundaram || 13 ||

After that comes the section called The Seeker of Liberation. It is exactly a thousand verses, made beautiful by its careful reasoning.

उसके बाद मुमुक्षु का व्यवहार नाम का हिस्सा आता है। यह ठीक एक हजार श्लोकों का है, और अपने बढ़िया तर्क से सुंदर बना हुआ है।

2.17.14

स्वभावो हि मुमुक्षूणां नराणां यत्र वर्ण्यते । अथोत्पत्तिप्रकरणं दृष्टान्ताख्यायिकामयम् ॥ १४ ॥

svabhāvo hi mumukṣūṇāṁ narāṇāṁ yatra varṇyate | athotpattiprakaraṇam dṛṣṭāntākhyāyikāmayam || 14 ||

In this section, the true nature of people who seek liberation is described. After that comes the section called Creation, made up entirely of illustrative stories.

इस हिस्से में मुक्ति चाहने वाले लोगों का असली स्वभाव बताया गया है। उसके बाद उत्पत्ति नाम का हिस्सा आता है, जो पूरी तरह उदाहरण देने वाली कहानियों से बना है।

2.17.15

सप्तग्रन्थसहस्राणि विज्ञानप्रतिपादकम् । जागती द्रष्टृदृश्यश्रीरहंत्वमितिरूपिणी ॥ १५ ॥

saptagranthasahasrāṇi vijñānapratipādakam | jāgatī draṣṭṛdṛśyāśrīrahantvāmitirūpiṇī || 15 ||

This section is seven thousand verses long and teaches true knowledge. It describes the waking world, rich with seer and seen, taking the shape of this sense of I.

यह हिस्सा सात हजार श्लोकों का है और सच्चा ज्ञान सिखाता है। यह जागते हुए संसार को बताता है, जो देखने वाले और दिखने वाली चीज से भरा है, और मैं के भाव का रूप ले लेता है।

2.17.16

अनुत्पन्नैवोत्थितेव यत्रेति परिवर्ण्यते । यस्मिन्श्रुते जगदिदं श्रोतान्तर्बुध्यतेऽखिलम् ॥ १६ ॥

anutpannaivaottitheva yatreti parivarnyate | yasminśrute jagadidaṁ śrotāntarbudhyate'khilam || 16 ||

This section fully explains how the world, though it was never really created, appears as if it had arisen. When a person hears this, he comes to understand this entire world within his own mind. यह हिस्सा पूरी तरह बताता है कि संसार, जो असल में कभी बना ही नहीं, फिर भी बना हुआ जैसा दिखता है। जब कोई इसे सुनता है, तो वह इस पूरे संसार को अपने ही मन के अंदर समझ लेता है।

2.17.17

सास्मद्युष्मत्सविस्तारं सलोकाकाशपर्वतम् । पिण्डग्रहविनिर्मुक्तं निर्भित्तिकमपर्वतम् ॥ १७ ॥

sāsmadyuṣmatsavistāraṁ salokākāśaparvatam | piṇḍagrahavinirmuktaṁ nirbhittikamaparvatam || 17 ||

That world includes the whole spread of I and you, worlds, sky, and mountains - yet it cannot be grasped as a solid thing. It has no real walls, and no real mountains, even though it seems to. उस संसार में मैं और तुम का पूरा फैलाव है, दुनियाएं हैं, आसमान है, पहाड़ हैं - फिर भी इसे किसी ठोस चीज की तरह पकड़ा नहीं जा सकता। इसमें असली दीवारें नहीं हैं, और असली पहाड़ भी नहीं हैं, भले ही ऐसा लगता हो।

2.17.18

पृथ्व्यादिभूतरहितं संकल्प इव पत्तनम् । स्वप्नोपलम्भभावाभं मनोराज्यवदाततम् ॥ १८ ॥

prthvyādibhūtarahitaṁ saṁkalpa iva pattanam | svapnopalambhabhāvābhaṁ manorājyavadātataṁ || 18 ||

It has none of the real elements - earth and the rest. It is like a city built only in the imagination. It looks the way things look in a dream, and it stretches out like a kingdom built only in the mind. इसमें धरती वगैरह जैसे असली तत्व नहीं हैं। यह सिर्फ कल्पना में बने एक शहर जैसा है। यह वैसा ही दिखता है जैसा सपने में चीजें दिखती हैं, और यह मन में बने एक राज्य की तरह फैला हुआ है।

2.17.19

गन्धर्वनगरप्रख्यमर्थशून्योपलम्भनात् । द्विचन्द्रविभ्रमाभासं मृगतृष्णाम्बुवर्तनम् ॥ १९ ॥

gandharvanagaraprakhyamarthaśūnyopalambhanāt | dvicandravibhramābhāsaṁ mṛgatṛṣṇāmbuvartanam || 19 ||

It is like a city in the sky - because when you look for anything real in it, you find nothing there. It appears the way a double moon appears to confused eyes, and it behaves like the water in a mirage. यह आसमान में बने शहर जैसा है - क्योंकि इसमें कुछ असली ढूंढने पर कुछ नहीं मिलता। यह वैसा ही दिखता है जैसे भ्रमाई हुई आंखों को दो चांद दिखते हैं, और यह मृगतृष्णा के पानी जैसा बर्ताव करता है।

2.17.20

नौयानलोलशैलाभं सत्यलाभविवर्जितम् । चित्तभ्रमपिशाचाभं निर्बीजमपि भासुरम् ॥ २० ॥

nauyānalolāśailābhaṁ satyalābhavivarjitam | cittabhramapīśācābhaṁ nirbījamapi bhāsuram || 20 ||

It looks the way a mountain seems to move when seen from a moving boat, but there is nothing real to gain from it. It appears like a ghost that comes from a confused mind - it shines out even though it has no real root.

यह वैसा ही दिखता है जैसे चलती नाव से देखने पर पहाड़ हिलता हुआ लगता है, लेकिन इससे पाने के लिए कुछ असली नहीं है। यह भ्रमाए हुए मन से बने भूत जैसा दिखता है - इसकी कोई असली जड़ नहीं है, फिर भी यह चमकता है।

2.17.21

कथार्थप्रतिभासाभं व्योममुक्तावलीनिभम् । कटकत्वं यथा हेम्नि तरङ्गत्वं यथाम्भसि ॥ २१ ॥

kathārthapratibhāsābhaṃ vyomamuktāvalīnibham | kaṭakatvaṃ yathā hemni taraṅgatvaṃ yathāmbhasi || 21 ||

It appears the way a scene feels real while a story is being told, or the way a string of pearls seems to hang in an empty sky. It is world only the way a bangle is bangle in gold, or a wave is wave in water.

यह वैसे ही दिखता है जैसे कहानी सुनाते समय उसकी बात सच जैसी लगती है, या जैसे खाली आसमान में मोतियों की माला लटकी हुई लगती है। यह संसार बस वैसे ही है जैसे सोने में चूड़ी होती है, या पानी में लहर होती है।

2.17.22

यथा नभसि नीलत्वमसदेवोत्थितं सदा । अभित्तिरङ्गरहितमुपलब्धिमनोहरम् ॥ २२ ॥

yathā nabhasi nīlatvamasadevotthitaṃ sadā | abhittiraṅgarahitamupalabdhimanoharam || 22 ||

The world is like the blueness of the sky - something unreal that always seems to appear. It is like a beautiful painting with no wall to hold it, yet it is still lovely to look at.

संसार आसमान की नीलाई जैसा है - एक ऐसी झूठी चीज जो हमेशा दिखती रहती है। यह बिना दीवार वाली एक सुंदर तस्वीर जैसा है, फिर भी देखने में अच्छा लगता है।

2.17.23

स्वप्ने वा व्योम्नि वा चित्रमकर्तृ चिरभासुरम् । अवह्निरेव वह्नित्वं धत्ते चित्रानलो यथा ॥ २३ ॥

svapne vā vyomni vā citramakarṭṛ cirabhāsuram | avahnireva vahnitvaṃ dhatte citrānalo yathā || 23 ||

It is like a picture in a dream or a picture in the sky - a picture with no real painter, yet it keeps on shining. Or it is like a painted fire, which is not fire at all, yet still looks like fire.

यह सपने में बनी तस्वीर या आसमान में बनी तस्वीर जैसा है - एक ऐसी तस्वीर जिसका कोई असली चित्रकार नहीं है, फिर भी वह चमकती रहती है। या यह एक बनी हुई आग जैसा है, जो आग है ही नहीं, फिर भी आग जैसी दिखती है।

2.17.24

दधात्येवं जगच्छब्दरूपार्थमसदात्मकम् । तरङ्गोत्पलमालाभं दृष्टनृत्यमिवोत्थितम् ॥ २४ ॥

dadhātyevaṃ jagacchabdarūpārthamasadātmakam | taraṅgotpalamālābhaṃ dṛṣṭanṛtyamivotthitam || 24 ||

In this same way, the thing called the world, with all its shapes, is unreal at its core. It looks like a garland of lotuses made of waves, or like a dance that rises up before your eyes and is seen.

इसी तरह, संसार नाम की यह चीज, अपने सारे रूपों के साथ, अंदर से झूठी है। यह लहरों से बनी कमल की माला जैसा दिखता है, या आंखों के सामने उठकर दिखने वाले नाच जैसा।

2.17.25

चक्रचीत्कारपूर्णस्य जलराशिमिवोद्यतम् । शीर्णपत्रं भ्रष्टनष्टं ग्रीष्मे वनमिवारसम् ॥ २५ ॥

cakracītkārapūrṇasya jalarāśimivodyatam | śīrṇapatraṃ bhraṣṭanaṣṭaṃ grīṣme vanamivārasam || 25 ||

It is like the water thrown up by a creaking water-wheel, or like a forest in summer, dried out, its leaves withered, fallen, and gone.

यह चरचराती हुई रहट से उछलते पानी जैसा है, या गर्मी के मौसम के सूखे जंगल जैसा, जिसके पत्ते मुरझा कर गिर चुके हैं और खत्म हो चुके हैं।

2.17.26

मरणव्यग्रचित्ताभं शिलागृहगुहास्पदम् । अन्धकारगुहैकैकनृत्तमुन्मत्तचेष्टितम् ॥ २६ ॥

maraṇavyagrācittābhaṃ śilāgr̥haguhaspadam | andhakāraguhaikainṛttamunmattaceṣṭitam || 26 ||

It looks like a mind thrown into panic by the fear of death. It settles itself in rock, house, and cave, and dances alone, again and again, in a dark cave, like a madman's twitching.

यह मौत के डर से घबराए हुए मन जैसा दिखता है। यह पत्थर, घर, और गुफा में अपनी जगह बना लेता है, और अंधेरी गुफा में अकेले-अकेले बार-बार नाचता है, ठीक पागल की हरकतों जैसा।

2.17.27

प्रशान्ताज्ञाननीहारं विज्ञानशरदम्बरम् । समुत्कीर्णमिव स्तम्भे चित्रं भित्ताविवोदितम् ॥ २७ ॥

praśāntājñānānīhāraṃ vijñānaśaradambaram | samutkīrṇamiva stambhe citraṃ bhittāvivoditam || 27 ||

But once the fog of ignorance about it settles down, it turns clear, like an autumn sky lit up with true knowledge. Until then, it stands out like a figure carved on a pillar, or a picture that has appeared on a wall.

लेकिन जब इसके बारे में अज्ञान का कोहरा शांत हो जाता है, तो यह साफ हो जाता है, ठीक सच्चे ज्ञान से रोशन शरद के आसमान जैसा। तब तक, यह खंभे पर उकेरी गई मूर्ति जैसा, या दीवार पर बनी तस्वीर जैसा दिखता रहता है।

2.17.28

पङ्कादिवाभिरचितं सचेतनमचेतनम् । ततः स्थितिप्रकरणं चतुर्थं परिकल्पितम् ॥ २८ ॥

pañkādivābhiracitaṃ sacetanamacetanam | tataḥ sthiti prakaraṇaṃ caturthaṃ parikalpitam || 28 ||

Both living, conscious beings and lifeless things in this world seem molded out of mud, as it were. After this description, the fourth section, called Continued Existence, is presented.

इस संसार में जीते-जागते सचेत लोग और बेजान चीजें, दोनों मानो मिट्टी से गढ़े हुए लगते हैं। इसके बाद स्थिति नाम का चौथा हिस्सा दिया जाता है।

2.17.29

त्रीणि ग्रन्थसहस्राणि व्याख्यानाव्यायिकामयम् । इत्थं जगदहंभावरूपस्थितिमुपागतम् ॥ २९ ॥

trīṇi granthasahasrāṇi vyākhyānākyāyikāmayam | itthaṃ jagadahambhāvarūpastithimupāgatam || 29 ||

This section is three thousand verses long, made up of explanations and stories. It shows how the world, built from the sense of I, comes to settle into its continued existence.

यह हिस्सा तीन हजार श्लोकों का है, समझाइशों और कहानियों से बना है। यह बताता है कि मैं के भाव से बना संसार अपने बने रहने की अवस्था में कैसे टिक जाता है।

2.17.30

द्रष्टृदृश्यक्रमं प्रौढमित्यत्र परिकीर्तितम् । दशदिङ्मण्डलाभोगभासुरोऽयं जगद्भ्रमः ॥ ३० ॥

draṣṭṛdṛśyakramam prauḍhamityatra parikīrtitam | daśadiṇmaṇḍalābhogabhāsuro'yaṃ jagadbhramah || 30 ||

Here it is fully explained how the seer and the seen come into being step by step. This illusion called the world shines out and spreads across all directions.

यहां पूरी तरह बताया गया है कि देखने वाला और दिखने वाली चीज कदम-दर-कदम कैसे पैदा होते हैं। संसार नाम का यह भ्रम चमकता है और सब दिशाओं में फैला हुआ है।

2.17.31

इत्थमभ्यागतो वृद्धिमिति तत्रोच्यते चिरम् । उपशान्तिप्रकरणं ततः पञ्चसहस्रकम् ॥ ३१ ॥

itthamabhyāgato vṛddhimiti tatrocyaate ciram | upaśāntiprakaraṇaṃ tataḥ pañcasahasrakam || 31 ||

It is explained there at length how this illusion of the world grows in this way. After that comes the fifth section, called Peace, made up of five thousand verses.

वहां विस्तार से बताया गया है कि संसार का यह भ्रम इस तरह कैसे बढ़ता है। उसके बाद उपशांति नाम का पांचवां हिस्सा आता है, जो पांच हजार श्लोकों का है।

2.17.32

पञ्चमं पावनं प्रोक्तं युक्तिसंततिसुन्दरम् । इदं जगदहं त्वं च स इति भ्रान्तिरुत्थिता ॥ ३२ ॥

pañcamam pāvanam proktaṃ yuktisaṃtatisundaram | idaṃ jagadahaṃ tvaṃ ca sa iti bhrāntirutthitā || 32 ||

This fifth section is called purifying, made beautiful by an unbroken chain of reasoning. It shows how the confusion arose that says: this is the world, this is me, this is you, this is him.

यह पांचवां हिस्सा पवित्र करने वाला कहलाता है, और तर्क की लगातार कड़ी से सुंदर बना है। यह बताता है कि यह भ्रम कैसे पैदा हुआ जो कहता है: यह संसार है, यह मैं हूँ, यह तुम हो, यह वह है।

2.17.33

इत्थं संशाम्यतीत्यस्मिन्कथ्यते श्लोकसंग्रहैः । उपशान्तिप्रकरणे श्रुते शाम्यति संसृतिः ॥ ३३ ॥

itthaṃ saṃśāmyatītyasminkathyate ślokaṣaṃgrahaiḥ | upaśāntiprakaraṇe śrute śāmyati saṃsṛtiḥ || 33 ||

How this confusion is calmed is told here through a whole collection of verses. When a person hears this section on Peace, the whole cycle of worldly life grows calm.

यह भ्रम कैसे शांत होता है, यह यहां श्लोकों के पूरे संग्रह से बताया गया है। जब कोई इंसान उपशांति वाला यह हिस्सा सुनता है, तो संसार का पूरा चक्र शांत हो जाता है।

2.17.34

प्रभ्रष्टचित्रसेनेव किञ्चिल्लभ्योपलम्बना । शतांशशिष्टा भवति संशान्तभ्रान्तरूपिणी ॥ ३४ ॥

prabhraṣṭacitraseneva kiṃcillabhyopalambhanā | śatāṃśaśiṣṭā bhavati saṃśāntabhrāntarūpiṇī || 34 ||

It becomes like a painted army that has scattered and fallen apart - only a faint trace of it can still be seen, a mere hundredth part remains, and even that is a confusion now put to rest.

यह एक ऐसी चित्रित सेना जैसा हो जाता है जो बिखर कर टूट चुकी है - अब बस उसकी हल्की झलक दिखती है, सौवां हिस्सा ही बचता है, और वह भी अब शांत हो चुका भ्रम है।

2.17.35

अन्यसंकल्पचित्तस्था नगरश्रीरिवासती । अलभ्यवस्तुपार्श्वस्थस्वप्नयुद्धचिरारवा ॥ ३५ ॥

anyasaṃkalpacittasthā nagaraśrīrivāsati | alabhyavastupārśvasvasthanayuddhacirāravā || 35 ||

It exists only the way an imagined city's grandeur exists in a mind busy with some other thought - not really there at all. It is like the long, drawn-out battle cries of a fight that only happens in a dream, next to something that was never really there to win.

यह सिर्फ वैसे ही रहता है जैसे किसी और सोच में लगे मन में एक कल्पित शहर की शान रहती है - असल में वहां कुछ है ही नहीं। यह सपने में हुई लड़ाई की देर तक चलने वाली ललकार जैसा है, ऐसी चीज के पास जो कभी थी ही नहीं जिसे जीता जा सके।

2.17.36

शान्तसंकल्पमत्ताभ्रभीषणाशनिशब्दवत् । विस्मृतस्वप्नसंकल्पनिर्माणनगरोपमा ॥ ३६ ॥

śāntasaṃkalpamattābhrabhīṣaṇaśanīśabdavat | vismṛtasvapṇasaṃkalpanirmāṇanagaropamā || 36 ||

Once the thought behind it quiets down, it is like the frightening roar of thunder from a wild storm cloud that has now gone silent. It is like a city that was built by the imagination inside a dream - a dream that has now been forgotten.

जब इसके पीछे की सोच शांत हो जाती है, तो यह उस डरावनी गरज जैसा हो जाता है जो तूफानी बादल से आती थी और अब चुप हो चुकी है। यह सपने में कल्पना से बने शहर जैसा है - ऐसा सपना जो अब भुला दिया गया है।

2.17.37

भविष्यन्नगरोद्यानप्रसूवन्ध्यामलाङ्गिका । तस्या जिह्वोच्यमानोग्रकथार्थानुभवोपमा ॥ ३७ ॥

bhaviṣyannagarodyānaprasūvandhyāmalāṅgikā | tasyā jihvocyamānograkathārthānubhavopamā || 37 ||

It is like the flower of a garden in a city that will exist only in the future - like a woman who cannot bear a child, yet has a flawless body. To hear it told aloud is like living through the events of a frightening story.

यह भविष्य में बनने वाले किसी शहर के बगीचे के फूल जैसा है - जैसे एक ऐसी औरत जो बांझ है, फिर भी जिसका शरीर बेदाग है। इसे जुबान से सुनना ऐसा है जैसे कोई डरावनी कहानी को सच में जीना।

2.17.38

अनुलिखितचित्रस्य चित्रव्याप्तेव भित्तिभूः । परिविस्मर्यमाणार्थकल्पनानगरीनिभा ॥ ३८ ॥

anullikhita citrasya citravayāpteva bhittibhūḥ | parivismaryamāṇārthakalpanānagarinibhā || 38 ||

It is like a wall that seems covered with a picture, even though no picture has been drawn on it. It is like an imagined city whose very meaning is slowly being forgotten.

यह एक ऐसी दीवार जैसा है जिस पर तस्वीर बनी हुई लगती है, हालांकि उस पर कोई तस्वीर बनाई ही नहीं गई है। यह एक कल्पित शहर जैसा है जिसका मतलब धीरे-धीरे भुलाया जा रहा है।

2.17.39

सर्वर्तुमदनुत्पन्नवनस्पन्दास्फुटाकृतिः । भाविपुष्पवनाकारवसन्तरसरञ्जना ॥ ३९ ॥

sarvartumadanutpannavanaspaṇdāsphuṭākṛtiḥ | bhāvipuṣṭpavanākāravasantarasarañjanā || 39 ||

It is like a place that has all the seasons in it, yet the forest has not yet begun to stir - its shape still unclear. It is tinted with the flavor of a spring that has not yet come, shaped like a forest of flowers that have not yet bloomed.

यह एक ऐसी जगह जैसा है जिसमें सारे मौसम हैं, फिर भी जंगल में अभी हलचल शुरू नहीं हुई है - इसका रूप अभी साफ नहीं है। यह उस बसंत के रस से रंगा है जो अभी आया ही नहीं, और उन फूलों के जंगल जैसा है जो अभी खिले ही नहीं।

2.17.40

अन्तर्लीनतरङ्गौघसौम्यवारिसरित्समा । निर्वाणारव्यं प्रकरणं ततः षष्ठमुदाहृतम् ॥ ४० ॥

antarlīnatarāṅgaughasaūmyavarīsaritsamā | nirvāṇākhyam prakaraṇam tataḥ ṣaṣṭhamudāhṛtam || 40 ||

It becomes like a calm, gentle river whose waves have all settled and dissolved within it. After this, the sixth section, called Liberation, is given.

यह एक शांत, कोमल नदी जैसा हो जाता है जिसकी सारी लहरें अंदर ही शांत होकर घुल गई हैं। इसके बाद निर्वाण नाम का छठा हिस्सा दिया जाता है।

2.17.41

शिष्टो ग्रन्थः परीमाणं तस्य ज्ञानमहार्थदः । बुद्धे तस्मिन्भवेच्छ्रेयो निर्वाणं शान्तकल्पनम् ॥ ४१ ॥

śiṣṭo granthaḥ parīmāṇaṁ tasya jñānamahārthadaḥ | buddhe tasminbhavecchreyo nirvāṇaṁ śāntakalpanam || 41 ||

The size of this Liberation section is whatever text is left over, and it gives the great wealth of knowledge. When that wisdom is grasped, the highest good comes about: liberation, the total quieting of the mind's imaginings.

इस निर्वाण हिस्से का आकार बाकी बचे हुए ग्रंथ जितना है, और यह ज्ञान का बड़ा खजाना देता है। जब वह ज्ञान समझ में आ जाता है, तो सबसे बड़ी भलाई होती है: निर्वाण, यानी मन की सारी कल्पनाओं का पूरी तरह शांत हो जाना।

2.17.42

अचेत्यचित्प्रकाशात्मा विज्ञानात्मा निरामयः । परमाकाशकोशाच्छः शान्तसर्वभवभ्रमः ॥ ४२ ॥

acetyacitprakāśātmā vijñānātmā nirāmayah | paramākāśakośācchaḥ śāntasarvabhavabhramah || 42 ||

He cannot be grasped by thought; his very self is the shining light of pure awareness. He is pure knowing, free of all affliction, as clear as the vast open sky, and in him every illusion about this world of becoming has gone quiet.

उसे सोच से नहीं पकड़ा जा सकता; उसका असली रूप शुद्ध चेतना की चमकती रोशनी है। वह शुद्ध जानकारी है, हर तकलीफ से मुक्त है, खुले आसमान जितना साफ है, और उसमें इस बनते-बिगड़ते संसार का हर भ्रम शांत हो चुका है।

2.17.43

निर्वापितजगद्यात्रः कृतकर्तव्यसुस्थितः । समस्तजनतारम्भवज्रस्तम्भो नभोनिभः ॥ ४३ ॥

nirvāpitajagadyātraḥ kṛtakartavyasusthitaḥ | samastajanatārambhavajrastambho nabhonibhaḥ || 43 ||

His journey through the world's business has come to rest; he is calm and settled, with nothing left to do. He stands like a pillar of diamond, unmoved amid all the busy activity of people, and he is like the open sky.

संसार के कामकाज में उसकी यात्रा रुक चुकी है; वह शांत और स्थिर है, उसके लिए करने को कुछ बचा नहीं है। वह हीरे के खंभे जैसा खड़ा है, लोगों की सारी हलचल के बीच बिना हिले, और वह खुले आसमान जैसा है।

2.17.44

विनिगीर्णयथासंख्यजगज्जालातितृप्तिमान् । आकाशीभूतनिःशेषरूपालोकमनस्कृतिः ॥ ४४ ॥

vinigīrṇayathāsankhyajagajjālātitr̥ptimān | ākāśībhūtanniḥśeṣarūpālokanaskṛtiḥ || 44 ||

He has swallowed up the whole net of the world completely, and is fully satisfied. His mind, which once saw many forms, has itself become like empty open space.

उसने संसार का पूरा जाल पूरी तरह निगल लिया है, और वह पूरी तरह तृप्त है। उसका मन, जो कभी बहुत सारे रूप देखता था, अब खुद खाली आसमान जैसा हो गया है।

2.17.45

कार्यकारणकर्तृत्वहेयादेयदृशोज्झितः । सदेह इव निर्देहः ससंसारोऽप्यसंसृतिः ॥ ४५ ॥

kāryakāraṇakartṛtvaheyādeyadr̥śojjhitah | sadeha iva nirdehah saśamsāro'pyasamsṛtiḥ || 45 ||

He has given up all sense of cause, effect, and doing something, and all sense of what to take and what to reject. Though he has a body, he is as if he had none. Though he lives in this world, he is not caught in it.

उसने कारण, कार्य, और कुछ करने के भाव को, और यह लेने योग्य है यह छोड़ने योग्य है, इस सोच को भी पूरी तरह छोड़ दिया है। उसका शरीर है, फिर भी वह ऐसा है जैसे उसका कोई शरीर ही न हो। वह इस संसार में रहता है, फिर भी वह इसमें फंसा नहीं है।

2.17.46

चिन्मयो घनपाषाणजठरापीवरोपमः । चिदादित्यस्तपँल्लोकानन्धकारोपरोपमम् ॥ ४६ ॥

cinmayo ghanapāṣāṇajatharāpīvaropamaḥ | cidādityastapam̐llokānandhakāroparopamam || 46 ||

He is made entirely of pure consciousness, solid and firm like the dense core of a rock. He is like a sun of pure awareness, warming all the worlds and burning away every mass of darkness.

वह पूरी तरह शुद्ध चेतना से बना है, ठोस पत्थर के भीतरी हिस्से जितना मजबूत और अटल। वह शुद्ध चेतना के सूरज जैसा है, जो सारी दुनियाओं को गर्मी देता है और अंधेरे के हर ढेर को जला देता है।

2.17.47

परप्रकाशरूपोऽपि परमान्धमिवागतः । रुद्धसंसृतिदुर्लीलः प्रक्षीणाशाविषूचिकः ॥ ४७ ॥

paraprakāśārūpo'pi paramāndhyamivāgataḥ | ruddhasamsṛtidurlīlāḥ prakṣīṇāśāviṣūcikaḥ || 47 ||

Even though his very form is the highest light, he has become as if completely blind to the world. The painful game of this world's cycle has stopped for him, and the disease of craving, which spreads like cholera, has been completely wiped out in him.

भले ही उसका असली रूप सबसे ऊंची रोशनी है, फिर भी वह इस संसार के लिए मानो पूरी तरह अंधा हो गया है। इस संसार-चक्र का दुखदायी खेल उसके लिए रुक चुका है, और लालच की वह बीमारी, जो हैजे की तरह फैलती है, उसके अंदर से पूरी तरह मिट चुकी है।

2.17.48

नष्टाहंकारवेतालो देहवानकलेवरः । कस्मिंश्चिद्रोमकोट्यग्रे तस्येयमवतिष्ठते । जगल्लक्ष्मीर्महामेरोः पुष्पे क्वचिदिवालिनी ॥ ४८ ॥

naṣṭāhaṁkāravetālo dehavānakalevaraḥ | kasmim̐ścidromakoṭyagre tasyeyamavatiṣṭhate | jagallakṣmīrmahāmeror̥ puṣpe kvacidivālinī || 48 ||

The demon of ego is dead in him. He has a body, yet is as if bodiless. For him, the whole glory of this world rests on the tip of just one of the countless hairs on his body - the way a single bee might rest on one flower somewhere on the great Mount Meru.

उसके अंदर अहंकार का भूत मर चुका है। उसका शरीर है, फिर भी वह मानो बिना शरीर के है। उसके लिए इस संसार की पूरी शान उसके शरीर के करोड़ों बालों में से एक की नोक पर टिकी है - ठीक वैसे ही जैसे एक मधुमक्खी विशाल मेरु पर्वत के किसी एक फूल पर बैठी हो।

2.17.49

परमाणौ परमाणौ चिदाकाशः स्वकोटरे । जगल्लक्ष्मीसहस्राणि धत्ते कृत्वाथ पश्यति ॥ ४९ ॥

paramāṇau paramāṇau cidākāśaḥ svakoṭare | jagallakṣmīsahasrāṇi dhatte kṛtvātha paśyati || 49 ||

In every single atom, the space of pure consciousness, within its own tiny hollow, creates thousands of whole worlds and then watches them.

हर एक कण में, शुद्ध चेतना का आकाश, अपनी छोटी सी जगह के अंदर, हजारों पूरी दुनियाएं बना देता है और फिर उन्हें देखता है।

विततता हृदयस्य महामतेर्हरिहराञ्जलक्षशतैरपि । तुलनमेति न मुक्तिमतो यतः प्रविततास्ति निरुत्तमवस्तुनः ॥ ५० ॥

vitatatā hr̥dayasya mahāmaterhariharāñjalakṣaśatairapi | tulanameti na muktimoto yataḥ pravitatāsti niruttamavastunaḥ || 50 ||

The vastness of the heart of this great, liberated soul cannot be compared even to hundreds of thousands of gods like Vishnu, Shiva, and Brahma put together - because it has spread out to become the one reality beyond which nothing greater exists.

इस महान, मुक्त आत्मा के दिल की विशालता की तुलना विष्णु, शिव, और ब्रह्मा जैसे देवताओं की सैकड़ों लाख गिनती से भी नहीं की जा सकती - क्योंकि यह फैलकर उस एक सच्चाई के बराबर हो गई है जिससे बड़ा कुछ भी नहीं है।

Chapter 18

2.18.1

श्रीवसिष्ठ उवाच अस्यां वा चित्तमात्रायां प्रबोधः संप्रवर्तते बीजादिव सतो व्युत्पादवश्यंभावि सत्फलम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca asyāṃ vā cittamātrāyāṃ prabodhaḥ saṃpravartate bijādiva satovyuptādavaśyaṃbhāvi satphalam || 1 ||

Sri Vasishtha said: In this same mind, understanding is bound to rise up on its own, the way a good seed, once sown, is bound to give a good fruit.

श्री वसिष्ठ ने कहा: इसी मन में समझ अपने आप उठ आती है, जैसे अच्छा बीज बोने पर अच्छा फल मिलना तय है।

2.18.2

अपि पौरुषमादेयं शास्त्रं चेद्युक्तिबोधकम् अन्यत्त्वार्थमपि त्याज्यं भाव्यं न्यायैकसेविना ॥ २ ॥

api pauruṣamādeyaṃ śāstraṃ cedyuktibodhakam anyattvārṣamapi tyājyaṃ bhāvyaṃ nyāyāikekasevinā || 2 ||

Even a book written by an ordinary man should be accepted if it teaches through good reasoning. But another book, even one said to come from a great sage, should be rejected if it does not. This is how a person who follows only what is right and just should act.

आम आदमी की लिखी किताब भी माननी चाहिए अगर वह अच्छे तर्क से सिखाती है। पर दूसरी किताब, चाहे वह किसी बड़े ऋषि की क्यों न हो, अगर ऐसी नहीं है तो छोड़ देनी चाहिए। जो व्यक्ति सिर्फ सही और उचित बात मानता है, उसे ऐसा ही करना चाहिए।

2.18.3

युक्तियुक्तमुपादेयं वचनं बालकादपि अन्यत्तृणमिव त्याज्यमप्युक्तं पद्मजन्मना ॥ ३ ॥

yuktiyuktamupādeyaṃ vacanaṃ bālakādapi anyattṛṇamiva tyājyamapyuktaṃ padmajanmanā || 3 ||

A statement backed by good reasoning should be accepted even if it comes from a child. But a statement without such reasoning should be thrown away like straw, even if it was spoken by Brahma, the lotus-born.

अच्छे तर्क वाली बात एक बच्चे की भी माननी चाहिए। पर बिना तर्क वाली बात तिनके की तरह फेंक देनी चाहिए, चाहे वह ब्रह्मा ने ही क्यों न कही हो।

2.18.4

योऽस्मत्तातस्य कूपोऽयमिति कौपं पिबत्यपः त्यक्त्वा गाङ्गं पुरस्थं तं को नाशास्त्यतिरागिणम् ॥ ४ ॥

yo'smattātasya kūpo'yamiti kaupam pibatyapaḥ tyaktvā gāṅgaṃ purasthaṃ taṃ ko nāśāstyatirāgiṇam || 4 ||

Someone who drinks water from a well only because it is his father's well, while turning away from the Ganges water flowing right there in front of him in the town — who would not call such a man foolishly attached?

जो आदमी सिर्फ इसलिए कुएं का पानी पीता है कि यह कुआं उसके पिता का है, और शहर में सामने बहती गंगा का पानी छोड़ देता है, उसे मूर्खता से जकड़ा हुआ कौन नहीं कहेगा?

2.18.5

यथोषसि प्रवृत्तायामालोकोऽवश्यमेष्यति अस्यां वा चित्तमात्रायां सुविवेकस्तथैष्यति ॥ ५ ॥

yathoṣasi pravṛttāyāmāloko'vaśyameṣyati asyāṃ vā cittamātrāyāṃ suvivekastathaiṣyati || 5 ||

Just as when dawn has begun, light is bound to come, so too in this same mind, clear understanding is bound to come.

जैसे सुबह शुरू होते ही उजाला आना तय है, वैसे ही इसी मन में सही समझ का आना भी तय है।

2.18.6

श्रुतायां प्राज्ञवदनाद्बुद्धान्तं स्वयमेव च । शनैःशनैर्विचारेण बुद्धौ संस्कार आगते ॥ ६ ॥

śrutāyāṃ prājñavadanādbuddhivāntaṃ svayameva ca | śanaiḥśanairvicāreṇa buddhau saṃskāra āgate || 6 ||

When someone has heard the teaching from a wise man's mouth, has understood its meaning for himself, and when, little by little, through steady thought, that understanding settles firmly into his mind,

जब कोई किसी समझदार आदमी के मुँह से यह शिक्षा सुनता है, खुद उसका अर्थ समझ लेता है, और जब धीरे-धीरे, लगातार सोच-विचार से, वह समझ उसके मन में पक्की बैठ जाती है,

2.18.7

पूर्वं तावदुदेत्यन्तर्भृशं संस्कृतवाक्यता । शुद्धयुक्ता लतेवोच्चैर्या सभास्थानभूषणम् ॥ ७ ॥

pūrvam tāvadudetyantarbhṛśaṃ saṃskṛtavākyaṭā śuddhayuktā latevoccāiryā sabhāsthānabhūṣaṇam || 7 ||

first of all, well-formed and pure speech rises up strongly within him, like a fine creeper growing tall, an ornament fit for any gathering.

तो सबसे पहले उसके भीतर सुंदर और शुद्ध बोली ज़ोर से उठती है, जैसे कोई सुंदर बेल ऊँची उठकर किसी भी सभा की शोभा बन जाए।

2.18.8

परा नागरतोदेति महत्त्वगुणशालिनी । सा यया स्नेहमायान्ति राजानो अमरा अपि ॥ ८ ॥

parā nāgaratodeti mahattvagūṇaśālīnī | sā yayā snehamaāyānti rājāno amarā api || 8 ||

Then comes an even higher grace, a noble and cultured manner, and because of it even kings, even the gods themselves, come to feel affection for him.

फिर एक और ऊँची शालीनता आती है, एक भला और सुसंस्कृत तौर-तरीका, और इसी के कारण राजा और यहाँ तक कि देवता भी उससे प्रेम करने लगते हैं।

2.18.9

पूर्वापरज्ञः सर्वत्र नरो भवति बुद्धिमान् । पदार्थानां यथा दीपहस्तो निशि सुलोचनः ॥ ९ ॥

pūrvāparajñāḥ sarvatra naro bhavati buddhimān | padārthānāṃ yathā dīpahasto niśi sulocanaḥ || 9 ||

Knowing what has gone before and what will follow, that man becomes wise in everything, like a man with sharp eyes holding a lamp at night, who sees every object clearly.

आगे-पीछे की बात समझते हुए वह आदमी हर चीज़ में समझदार हो जाता है, जैसे रात में हाथ में दीया लिए तेज़ आँखों वाला आदमी हर चीज़ साफ़ देख लेता है।

2.18.10

लोभमोहादयो दोषास्तानव यान्त्यलं शनैः । धियो दिशः समासन्नशरदो मिहिका यथा ॥ १० ॥

lobhamohādayo doṣāstānavam yāntyalam śanaiḥ | dhiyo diśaḥ samāśannaśarado mihikā yathā || 10 ||

Faults such as greed and delusion grow thin and fade away completely, little by little, from every direction of the mind, like morning mist thinning away as autumn draws near.

लालच और मोह जैसे दोष धीरे-धीरे मन की हर दिशा से पूरी तरह पतले होकर मिट जाते हैं, जैसे शरद ऋतु आते ही सुबह का कोहरा पतला होकर छूट जाता है।

2.18.11

केवलं समवेक्ष्यन्ते विवेकाध्यासनं धियः । न किञ्चन फलं धत्ते स्वाभ्यासेन विना क्रिया ॥ ११ ॥

kevalam samavekṣyante vivekādhyaśanam dhiyaḥ | na kiñcana phalam dhatte svābhyāseṇa vinā kriyā || 11 ||

These faults are simply watched, once right understanding has settled into the mind. But no action bears any fruit without one's own practice.

मन में सही समझ बैठ जाने पर इन दोषों को बस देखा भर जाता है। पर बिना अपने अभ्यास के कोई भी काम फल नहीं देता।

2.18.12

मनः प्रसादमायाति शरदीव महत्सरः । परं साम्यमुपादत्ते निर्मन्दर इवार्णवः ॥ १२ ॥

manaḥ prasādamāyāti śaradīva mahatsaraḥ | paraṁ sāmyamupādatte nirmandara ivārṇavaḥ || 12 ||

The mind becomes clear and calm, like a great lake in autumn. It settles into perfect stillness, like the ocean when Mount Mandara is no longer churning it.

मन साफ़ और शांत हो जाता है, जैसे शरद ऋतु में कोई बड़ी झील। वह पूरी तरह स्थिर हो जाता है, जैसे समुद्र जब मंदराचल पर्वत उसे मथ नहीं रहा होता।

2.18.13

निरस्तकालिमारत्नशिखेवास्ततमःपटा । प्रति ज्वलत्यलं प्रज्ञा पदार्थप्रविभागिनी ॥ १३ ॥

nirastakālimāratnaśikhevāstamatamaḥpaṭā | prati jvalatyalam prajñā padārthaprabhāginī || 13 ||

Wisdom, which tells one thing clearly apart from another, blazes up in full, like the flame of a gem with all its blackness cast off and the veil of darkness gone.

हर चीज़ को अलग-अलग साफ़ पहचानने वाली बुद्धि पूरी तरह जगमगा उठती है, जैसे किसी रत्न की लौ जिसकी सारी कालिख छूट गई हो और अँधेरे का पर्दा हट गया हो।

2.18.14

दैन्यदारिद्र्यदोषाढ्या दृष्टयो दर्शितान्तराः । न निकृन्तन्ति मर्माणि ससंनहमिवेषवः ॥ १४ ॥

dainyadāridryadoṣāḍhyā dṛṣṭayo darśitāntarāḥ | na nikṛṇtanti marmāṇi sasannāhamiveṣavaḥ || 14 ||

Looks weighed down with misery and poverty, even when their harm is plain to see, no longer wound him in his vital points, like arrows striking a man in armor.

दुख और गरीबी से भरी नज़रें, चाहे उनका बुरा इरादा साफ़ दिखे, अब उसके मर्म को नहीं छेदतीं, जैसे कवच पहने आदमी पर तीर लगकर भी असर नहीं करते।

2.18.15

कथं स्यादादिता जन्मकर्मणां दैवपुंस्त्वयोः । इत्यादिसंशयगणः शाम्यत्यह्नि यथा तमः ॥ १५ ॥

katham syādāditā janmakarmaṇāṃ daivapuṁstvayoḥ | ityādisaṁśayagaṇaḥ śāmyatyahni yathā tamaḥ || 16 ||

Doubts such as 'how could birth and action, fate and human effort, ever have had a beginning' — this whole heap of doubts settles down, just as darkness fades away when day comes.

'जन्म और कर्म का, भाग्य और पुरुषार्थ का आरंभ कैसे हुआ होगा' - जैसे शक जगते हैं, ये सारे शक दिन चढ़ने पर अँधेरे की तरह मिट जाते हैं।

2.18.17

सर्वदा सर्वभावेषु संशान्तिरुपजायते । यामिन्यामिव शान्तायां प्रजालोक उपागते ॥ १७ ॥

sarvadā sarvabhāveṣu saṁśāntirupajāyate | yāminyāmiva śāntāyāṁ prajāloka upāgate || 17 ||

A deep peace arises at all times, in every state of mind, like the calm that settles when the night ends and light comes over the world.

हर हाल में, हमेशा, गहरी शांति उमड़ आती है, जैसे रात खत्म होने पर और दुनिया पर उजाला आने पर शांति छा जाती है।

2.18.18

समुद्रस्येव गाम्भीर्यं धैर्यं मेरोरिव स्थितम् । अन्तः शीतलता चेन्दोरिवोदेति विचारिणः ॥ १८ ॥

samudrasyaiva gāmbhīryaṁ dhairyaṁ meroriva sthitam | antaḥ śītalatā cendoriva udeti vicāriṇaḥ || 18 ||

In the man who inquires deeply, a depth like the ocean's arises, a steadiness like Mount Meru's, and an inner coolness like the moon's.

जो आदमी गहराई से सोच-विचार करता है, उसमें समुद्र जैसी गहराई, मेरु पर्वत जैसी स्थिरता, और चाँद जैसी भीतरी ठंडक आ जाती है।

2.18.19

सा जीवन्मुक्ता तस्य शनैः परिणतिं गता । शान्ताशेषविशेषस्य भवत्यविषयो गिराम् ॥ १९ ॥

sā jīvanmuktatā tasya śanaiḥ pariṇatiṁ gatā | śāntāśeṣaviśeṣasya bhavatyaviṣayo girām || 19 ||

That freedom while still alive, once it has slowly ripened fully in him and every last disturbance in him has calmed down, goes beyond what words can reach.

जब यह जीते-जी मिलने वाली मुक्ति उसमें धीरे-धीरे पूरी तरह पक जाती है, और उसकी हर हलचल शांत हो जाती है, तो वह ऐसी हो जाती है जिसे शब्दों में बताया ही नहीं जा सकता।

2.18.20

सर्वार्थशीतला शुद्धा परमालोकदास्यधीः । परं प्रकाशमायाति ज्योत्स्नेव शरदैन्दवी ॥ २० ॥

sarvārthaśītalā śuddhā paramālokadāsyadhīḥ | paraṁ prakāśamāyāti jyotsneva śaradaidavī || 20 ||

His mind, unmoved by every object and pure, devoted only to the highest light, comes to shine with a supreme brightness, like the moonlight of autumn.

उसका मन हर चीज़ के आगे बेअसर और शुद्ध हो जाता है, और सिर्फ परम प्रकाश की सेवा में लगा रहता है, और खुद भी परम रोशनी से चमक उठता है, जैसे शरद ऋतु की चाँदनी।

2.18.21

हृद्याकाशे विवेकार्के शमालोकिनि निर्मले । अनर्थसार्थकर्तारो नोद्यन्ति किल केतवः ॥ २१ ॥

hr̥dyākāśe vivekārke śamālokini nirmale | anarthasārthakartāro nodyanti kil ketavaḥ || 21 ||

Once the clear sun of understanding has risen in the sky of the heart, giving the light of peace, the comets that bring whole troops of misfortune no longer rise there.

जब मन के आकाश में शांति की रोशनी देने वाला सही समझ का साफ़ सूरज उग आता है, तो मुसीबतों के झुंड लाने वाले धूमकेतु फिर वहाँ नहीं उगते।

2.18.22

शाम्यन्ति शुद्धिमायान्ति सौम्यास्तिष्ठन्ति सूत्रते । अचञ्चले जलेऽतृष्णाः शरदीवाभ्रमालिकाः ॥ २२ ॥

śāmyanti śuddhimāyānti saumyāstiṣṭhanti sūnnate | acañcale jale'tṛṣṇāḥ śaradīvābhra-mālikāḥ || 22 ||

His faculties grow calm, become pure and gentle, and remain high and steady, no longer craving restless waters, like rows of clouds in autumn.

उसकी इंद्रियाँ शांत हो जाती हैं, शुद्ध और कोमल हो जाती हैं, ऊँची और स्थिर बनी रहती हैं, और अब बेचैन पानी की चाह नहीं रखतीं, जैसे शरद ऋतु में बादलों की कतारें।

2.18.23

यत्किञ्चनकरी क्रूरा ग्राम्यता विनिवर्तते । दीनानना पिशाचानां लीलेव दिवसागमे ॥ २३ ॥

yatkiñcanakarī krūrā grāmyatā vinivartate | dīnānanā piśācānāṃ līleva divasāgame || 23 ||

Coarse, cruel vulgarity, which causes all kinds of trouble, turns away and departs, like the games of ghosts, their faces gone pale and wretched, when day arrives.

हर तरह की गड़बड़ी करने वाली क्रूर और ओछी आदत पीछे हट जाती है, जैसे दिन निकलते ही भूत-प्रेतों का खेल उनके उतरे हुए मुँह के साथ खत्म हो जाता है।

2.18.24

धर्मभित्तौ भृशं लग्नां धियं धैर्यधुरं गताम् । आधयो न विधुन्वन्ति वाताश्वित्रलतामिव ॥ २४ ॥

dharmabhittau bhr̥śaṃ lagnāṃ dhiyaṃ dhairya-dhuraṃ gatām | ādhayo na vidhunvanti vātāśvitrilatāmiva || 24 ||

The mind that clings firmly to the wall of right conduct, and carries the weight of steadiness, is not shaken by mental troubles, just as wind cannot shake a creeper painted on a wall.

जो मन धर्म की दीवार से मज़बूती से चिपका होता है और स्थिरता का बोझ उठाए रहता है, उसे मानसिक परेशानियाँ हिला नहीं पातीं, जैसे दीवार पर बनी बेल की तस्वीर को हवा हिला नहीं सकती।

2.18.25

न पतत्यवते ज्ञस्तु विषयासङ्गरूपिणि । कः किल ज्ञातसरणिः श्वभ्रं समनुधावति ॥ २५ ॥

na patatyavate jñastu viṣayāsaṅgarūpiṇi | kaḥ kil jñātasaraṇiḥ śvabhraṃ samanudhāvati || 25 ||

The man who understands does not fall into the pit that is attachment to the things of the senses. Who, after all, having once known the right path, would go running toward a ditch?

समझदार आदमी विषयों की आसक्ति रूपी गड्ढे में नहीं गिरता। सही रास्ता जान लेने के बाद भला कौन गड्ढे की तरफ़ दौड़ेगा?

2.18.26

सच्छास्त्रसाधुवृत्तानामविरोधिनि कर्मणि । रमते धीर्यथाप्राप्ते साध्वीवान्तःपुराजिरे ॥ २६ ॥

sacchāstrasādhuvṛttānāmavirodhinikarmaṇi | ramate dhīryathāprāpte sādhvīvāntaḥpurājire || 26 ||

In whatever action comes his way, so long as it does not go against good scripture and the conduct of good people, his mind takes its pleasure, like a virtuous woman who is content within the courtyard of her own home.

जो भी काम सामने आ जाए, अगर वह अच्छे शास्त्रों और भले लोगों के आचरण के खिलाफ नहीं है, तो उसका मन उसी में आनंद पाता है, जैसे कोई सुशील स्त्री अपने ही घर के आँगन में संतुष्ट रहती है।

2.18.27

जगतां कोटिलक्षेषु यावन्तः परमाणवः । तेषामेकैकशोऽन्तःस्थान्सर्गान्पश्यत्यसङ्गधीः ॥ २७ ॥

jagatāṃ koṭīlakṣeṣu yāvantaḥ paramāṇavaḥ | teṣāmekaikakośo'ntaḥsthānsargānpasyatyasaṅgadhīḥ || 27 ||

Among the countless millions of worlds, however many atoms there are, the man whose mind is free of attachment sees, one by one, the whole creation contained within each single atom.

करोड़ों-लाखों जगतों में जितने भी अणु हैं, उनमें से हर एक अणु के भीतर छिपी हुई पूरी सृष्टि को वह आदमी देख लेता है जिसका मन किसी चीज़ से बँधा नहीं है।

2.18.28

मोक्षोपायावबोधेन शुद्धान्तःकरणं जनम् । न खेदयति भोगौघो न चानन्दयति क्वचित् ॥ २८ ॥

mokṣopāyāvabodhena śuddhāntaḥkaraṇaṃ janam | na khedayati bhogaugho na cānandayati kvacit || 28 ||

Because he understands the way to freedom, a person's inner heart becomes pure. Then a flood of pleasures neither troubles him nor ever delights him.

मुक्ति के उपाय को समझ लेने से आदमी का मन शुद्ध हो जाता है। फिर सुख-भोगों की बाढ़ भी न तो उसे दुखी करती है, न कभी खुश करती है।

2.18.29

परमाणौ परमाणौ सर्ववर्गा निरर्गलाः । ये पतन्त्युत्पतन्त्यम्बुवीचिवत्तान्स पश्यति ॥ २९ ॥

paramāṇau paramāṇau sarvavargā nirargalāḥ | ye patantyyutpatantyyambuvīcivattānsa paśyati || 29 ||

In every single atom he sees all the multitudes of worlds rising and falling without any barrier, freely, the way waves rise and fall on water.

हर एक अणु में वह देखता है कि जगतों के झुंड बिना किसी रोक-टोक के उठते और गिरते रहते हैं, ठीक वैसे ही जैसे पानी पर लहरें उठती-गिरती हैं।

2.18.30

न द्वेष्टि संप्रवृत्तानि न निवृत्तानि काङ्क्षति । कार्याण्येष प्रबुद्धोऽपि निष्प्रबुद्ध इव द्रुमः ॥ ३० ॥

na dveṣṭi saṃpravṛttāni na nivṛttāni kāṅkṣati | kāryāṇyēṣa prabuddho'pi niṣprabuddha iva drumah || 30 ||

He does not hate the tasks that come to him, nor does he long for the ones that have stopped or never came. Though he is fully awake, this man stands like a tree that is not even aware of anything.

जो काम सामने आ जाएं, उनसे वह नफरत नहीं करता, और जो काम रुक गए या नहीं आए, उनकी चाह भी नहीं करता। पूरी तरह जागा हुआ होते हुए भी, यह आदमी उस पेड़ जैसा रहता है जिसे कुछ पता ही नहीं होता।

2.18.31

दृश्यते लोकसामान्यो यथाप्राप्तानुवृत्तिमान् । इष्टानिष्टफलप्राप्तौ हृदयेनापराजितः ॥ ३१ ॥

drśyate lokasāmānyo yathāprāptānuvṛttimān | iṣṭāniṣṭaphalaprāptau hṛdayenāparājitaḥ || 31 ||

He appears to others just like any ordinary person, going along with whatever happens to come his way. But when a wanted or an unwanted result comes to him, his heart is never defeated.

वह दूसरों को एक आम आदमी जैसा ही दिखता है, जो भी सामने आए उसी के साथ चलता है। पर जब मनचाहा या अनचाहा फल मिलता है, तो उसका दिल कभी नहीं हारता।

2.18.32

बुद्धेदमखिलं शास्त्रं वाचयित्वा विविच्यताम् । अनुभूयत एवैतन्न तूक्तं वरशापवत् ॥ ३२ ॥

buddhvedamakhilam śāstram vācayitvā vivicyatām | anubhūyata evaitanna tūktam varaśāpavat || 32 ||

Understand this whole teaching, read it, and think it over well. This truth can only be reached by direct experience — it is not like a boon or a curse, which takes effect the moment it is spoken.

इस पूरे शास्त्र को समझो, पढ़ो और अच्छी तरह विचार करो। यह सच्चाई सिर्फ खुद अनुभव करने से मिलती है, यह किसी वरदान या श्राप की तरह नहीं है कि बोलते ही असर हो जाए।

2.18.33

शास्त्रं सुबोधमेवेदं सालंकारविभूषितम् । काव्यं रसमयं चारु दृष्टान्तैः प्रतिपादितम् ॥ ३३ ॥

śāstram subodhamevedaṁ sālaṅkāravibhūṣitam | kāvyam rasamayaṁ cāru drṣṭāntaiḥ pratipāditam || 33 ||

This teaching is easy to understand, and it is dressed up with fine ornaments of speech. It is a beautiful poem, full of feeling, and it makes its point through examples.

यह शास्त्र समझने में आसान है और सुंदर अलंकारों से सजा हुआ है। यह भावों से भरी एक सुंदर कविता है, जो उदाहरणों के ज़रिए अपनी बात समझाती है।

2.18.34

बुध्यते स्वयमेवेदं किञ्चित्पदपदार्थवित् । स्वयं यस्तु न वेत्तीदं श्रोतव्यं तेन पण्डितात् ॥ ३४ ॥

budhyate svayamevedaṁ kiñcitpadapadārthavit | svayaṁ yastu na vettīdam śrotavyam tena paṇḍitāt || 34 ||

Anyone who already knows a little about words and their meanings can understand this by himself. But whoever cannot understand it on his own should hear it explained by a learned person.

जो शब्दों और उनके अर्थ को थोड़ा-बहुत जानता है, वह इसे खुद समझ लेता है। पर जो खुद नहीं समझ पाता, उसे किसी विद्वान से सुनकर समझना चाहिए।

2.18.35

यस्मिन्श्रुते मते ज्ञाते तपोध्यानजपादिकम् । मोक्षप्राप्तौ नरस्येह न किञ्चिदुपयुज्यते ॥ ३५ ॥

yasminśrute mate jñāte tapodhyānajapādikam | mokṣaprāptau narasyeha na kiñcidupayujyate || 35 ||

Once this has been heard, thought over, and truly known, then things like penance, meditation, and chanting are of no further use to a man in reaching freedom.

जब इसे सुन लिया, इस पर विचार कर लिया और सच में जान लिया, तो तपस्या, ध्यान, जाप जैसी चीजें आदमी के लिए मुक्ति पाने में फिर किसी काम की नहीं रहतीं।

2.18.36

एतच्छास्त्रघनाभ्यासात्पौनःपुन्येन वीक्षणात् पाण्डित्यं स्यादपूर्वं हि चित्तसंस्कारपूर्वकम् ॥ ३६ ॥

etacchāstraghaṇābhyāsātpauṇahpunyena vīkṣaṇāt pāṇḍityaṁ syādapūrvam hi cittasaṁskārapūrvakam || 36 ||

From thorough practice of this teaching, and from looking at it again and again, a new kind of learning is born, one that comes only after the mind itself has been refined.

इस शास्त्र का गहराई से अभ्यास करने और बार-बार इसे देखने से एक नई तरह की समझ पैदा होती है, ऐसी समझ जो मन के शुद्ध हुए बिना नहीं आती।

2.18.37

अहं जगदिति प्रौढो द्रष्टृदृश्यपिशाचकः पिशाचोऽर्कोदयेनेव स्वयं शाम्यत्ययत्नतः ॥ ३७ ॥

ahaṁ jagaditi prauḍho draṣṭṛdṛśyapīśācakaḥ piśāco'rko dayeneva svayaṁ śamyatyayatnataḥ || 37 ||

The full-grown ghost that is 'I' and 'the world,' the ghost of seer and seen, quiets down all by itself, without any effort, just as a ghost vanishes the moment the sun rises.

'मैं' और 'जगत' का, 'देखने वाला' और 'दिखने वाला' का यह बड़ा हो चुका भूत अपने आप, बिना किसी मेहनत के शांत हो जाता है, जैसे सूरज उगते ही भूत गायब हो जाता है।

2.18.38

भ्रमो जगदहं चेति स्थित एवोपशाम्यति स्वप्नमोहः परिज्ञात इव नो भ्रमयत्यलम् ॥ ३८ ॥

bhraṁmo jagadahaṁ ceti sthita evopaśamyati svapnamohaḥ parijñāta iva no bhramayatyalam || 38 ||

The illusion of 'the world' and 'I,' even while it goes on appearing, simply quiets down by itself, just as the confusion of a dream, once we have fully recognized it as a dream, no longer confuses us at all.

'जगत' और 'मैं' का यह भ्रम, भले ही वह दिखता रहे, अपने आप शांत हो जाता है, जैसे सपने का भ्रम, एक बार उसे सपना समझ लेने पर, फिर हमें भ्रमित नहीं करता।

2.18.39

यथा संकल्पनगरे पुंसो हर्षविषादिता न बाधते तथैवास्मिन्परिज्ञाते जगद्भ्रमे ॥ ३९ ॥

yathā saṁkalpanagare puṁso harṣaviṣāditā na bādhte tathai vāsmiṁparijñāte jagadbhraṁme || 39 ||

Just as a man is no longer troubled by joy or sorrow over a city he has only imagined in his mind, once he knows it is only imagined, in the same way, once this illusion called the world is fully recognized for what it is, it no longer troubles him.

जैसे कोई आदमी अपने मन में कल्पना किए हुए किसी शहर को लेकर सुख-दुख से परेशान नहीं होता, क्योंकि वह जानता है कि यह सिर्फ कल्पना है, वैसे ही 'जगत' नाम के इस भ्रम को पूरी तरह पहचान लेने पर यह भी परेशान नहीं करता।

2.18.40

चित्रसर्पः परिज्ञातो न सर्पभयदो यथा दृश्यसर्पः परिज्ञातस्तथा न सुखदुःखदः ॥ ४० ॥

citrasarpaḥ parijñāto na sarpabhayado yathā dṛśyasarpaḥ parijñātastathā na sukhaduḥkhadaḥ || 40 ||

Just as a painted snake, once you know it is only a painting, does not frighten you the way a real snake would, in the same way this visible world, once we know it truly for what it is, no longer gives us pleasure or pain.

जैसे किसी चित्र में बना साँप, यह पता चलने पर कि वह सिर्फ चित्र है, असली साँप जैसा डर नहीं देता, वैसे ही यह दिखने वाला जगत, इसे सच में पहचान लेने पर, फिर सुख या दुख नहीं देता।

2.18.41

परिज्ञानेन सर्पत्वं चित्रसर्पस्य नश्यति । यथा तथैव संसारः स्थित एवोपशाम्यति ॥ ४१ ॥

parijñānena sarpatvaṃ citrasarpasya naśyati | yathā tathaiva saṃsāraḥ sthita evopaśāmyati || 41 ||

Through recognizing it fully, the snake-quality of the painted snake is destroyed. In just the same way, this cycle of the world, even while it goes on appearing, simply comes to rest.

पूरी तरह पहचान लेने से चित्र वाले साँप का 'साँपपन' मिट जाता है। ठीक वैसे ही यह संसार, भले ही वह दिखता रहे, अपने आप शांत हो जाता है।

2.18.42

सुमनःपल्लवामर्दे किञ्चिद्व्यतिकरो भवेत् । परमार्थपदप्राप्तौ नतु व्यतिकरोऽल्पकः ॥ ४२ ॥

sumanaḥpallavāmardē kiñcidvyatikaro bhavēt | paramārthapadaprāptau natu vyatīkarō'lpakaḥ || 42 ||

In crushing a soft flower-bud, there may still be some small disturbance. But in reaching the state of highest truth, there is not even that much disturbance.

किसी मुलायम कली को मसलने में भी थोड़ी-बहुत हलचल हो सकती है, पर परम सत्य को पाने में इतनी भी हलचल नहीं होती।

2.18.43

गच्छत्यवयवः स्पन्दं सुमनःपत्रमर्दने । इह धीमात्रोऽधस्तु नाङ्गावयवचालनम् ॥ ४३ ॥

gacchatyavayavaḥ spandaṃ sumanaḥpatramardanē | iha dhīmātrarōdhas tu nāṅgāvayavacālanam || 43 ||

When you crush a flower petal, some part of the hand has to move. But here, reaching the truth needs only the stilling of the mind — no part of the body needs to move at all.

फूल की पंखुड़ी मसलने में हाथ का कोई हिस्सा हिलाना पड़ता है, पर यहाँ सच को पाने में सिर्फ मन को शांत करना है, शरीर का कोई हिस्सा हिलाने की ज़रूरत नहीं।

2.18.44

सुखासनोपविष्टेन यथासंभवमश्रता । भोगजालं सदाचारविरुद्धेषु न तिष्ठता ॥ ४४ ॥

sukhāsanōpaviṣṭēna yathāsaṃbhavamāśnatā | bhōgajālaṃ sadācāraviruddheṣu na tiṣṭhatā || 44 ||

Sitting in a comfortable posture, eating whatever happens to be available, enjoying only the pleasures that come on their own, and never doing anything against good conduct,

आराम की मुद्रा में बैठकर, जो कुछ मिल जाए वही खाकर, जो सुख अपने आप मिल जाएं बस उन्हीं का आनंद लेकर, और अच्छे आचरण के खिलाफ़ कुछ भी न करते हुए,

2.18.45

यथाक्षणं यथादेशं प्रविचारयता सुखम् । यथासम्भवसत्संगमिदं शास्त्रमथेतरेत ॥ ४५ ॥

yathākṣaṇaṃ yathādēśaṃ pravicārayatā sukham | yathāsaṃbhavasatsaṅgamidaṃ śāstramathetarat || 45 ||

at whatever moment and in whatever place he can, let him happily reflect on this teaching, keeping the company of good people whenever it is possible, on this scripture, or on another one like it.

जब भी और जहाँ भी मौका मिले, खुशी से इस शास्त्र पर विचार करे, जब भी संभव हो अच्छे लोगों का साथ रखते हुए, चाहे यह शास्त्र हो या कोई और वैसा ही शास्त्र।

2.18.47

एतावत्यपि येऽभीताः पापा भोगरसे स्थिताः स्वमातृविष्ठाकृमयः कीर्तनीया न तेऽधमाः ॥ ४७ ॥

etāvatyapi ye'bhitāḥ pāpā bhogarase sthitāḥsvamātrviṣṭhākṛmayāḥ kīrtanīyā na te'dhamāḥ || 47 ||

Even after all this has been taught, there are sinners who remain unafraid, still stuck in the taste for pleasure, like worms living in their own mother's dung. Such base men are not even worth naming.

इतना सब सुनने के बाद भी जो पापी बेखौफ़ बने रहते हैं और भोग के स्वाद में डूबे रहते हैं, अपनी ही माँ के मल में कीड़ों की तरह, ऐसे नीच लोगों का नाम लेना भी ठीक नहीं।

2.18.48

शृणु तावदिदानीं त्वं कथ्यमानमिदं मयाराघव ज्ञानविस्तारं बुद्धिसारतरान्तरम् ॥ ४८ ॥

śṛṇu tāvadidānīm tvam kathyamānamidaṁ mayārāghava jñānavistāraṁ buddhisāratarāntaram || 48 ||

Now, Raghava, listen to what I am about to tell you, a spreading-out of knowledge whose inner heart is the very essence of understanding.

अब हे राघव, सुनो जो मैं तुम्हें बताने जा रहा हूँ, ज्ञान का यह विस्तार, जिसके भीतर समझ का सबसे गहरा सार है।

2.18.49

यथेदं श्रूयते चास्त्रं तामापातनिकां शृणुविचार्यते यथार्थोऽयं यथा च परिभाषया ॥ ४९ ॥

yathedaṁ śrūyate cāstraṁ tāmāpātanikāṁ śṛṇuvicāryate yathārtho'yaṁ yathā ca paribhāṣayā || 49 ||

Listen now to this brief introduction: to how this teaching should be heard, how its meaning is to be examined, and in what manner of words it is explained.

अब यह छोटी-सी भूमिका सुनो, कि इस शास्त्र को कैसे सुनना चाहिए, इसके अर्थ पर कैसे विचार करना चाहिए, और किस तरह के शब्दों में इसे समझाया गया है।

2.18.50

येनेहाननुभूतेऽर्थे दृष्टेनार्थेन बोधनम्बोधोपकारफलदं तं दृष्टान्तं विदुर्बुधाः ॥ ५० ॥

yenehānanubhūte'rthe dṛṣṭenārthena bodhanambodhopakāraphaladaṁ taṁ dṛṣṭāntaṁ vidurbudhāḥ || 50 ||

When something not yet experienced is explained through something already seen and known, and this helps bring about understanding, the wise call that an example.

जब किसी ऐसी बात को, जिसे अभी अनुभव नहीं किया गया, किसी पहले से देखी-जानी बात के ज़रिए समझाया जाता है और इससे समझ में मदद मिलती है, विद्वान लोग उसे उदाहरण कहते हैं।

2.18.51

दृष्टान्तेन विना राम नापूर्वार्थोऽवबुध्यते । यथा दीपं विना रात्रौ भाण्डोपस्करणं गृहे ॥ ५१ ॥

dṛṣṭāntena vinā rāma nāpūrvārtho'avabudhyate | yathā dīpaṁ vinā rātrau bhāṇḍopaskaraṇaṁ grhe || 51 ||

Rama, without an example, something new and unfamiliar cannot be understood, just as, without a lamp at night, one cannot find and arrange the things kept in the house.

हे राम, बिना उदाहरण के कोई नई और अनजानी बात समझ में नहीं आती, जैसे बिना दीये के रात में घर का सामान ढूँढा और सँभाला नहीं जा सकता।

2.18.52

चैयैः काकुत्स्थ दृष्टान्तैस्त्वमयेहावबोध्यसे । सर्वे सकारणास्ते हि प्राप्यन्दु सदकारणम् ॥ ५२ ॥

caiyem: kākutstha dṛṣṭāntaistvaṁmayehāvabodhyase | sarve sakāraṇāste hi prāpyandu sadakāraṇam || 52 ||

By these various examples, Kakutstha, you are being made to understand by me here. All of them, though they belong to the world of cause and effect, are used to point toward the truth that has no cause.

हे काकुत्स्थ, इन्हीं तरह-तरह के उदाहरणों के ज़रिए मैं तुम्हें यहाँ समझा रहा हूँ। ये सभी उदाहरण, भले ही कारण-कार्य के जगत के हों, उस सत्य को समझाने के काम आते हैं जिसका कोई कारण नहीं है।

2.18.53

उपमानोपमेयानां कार्यकारणतोदिता । वर्जयित्वा परं ब्रह्म सर्वेषामेव विद्यते ॥ ५३ ॥

upamānopameyānām kāryakāraṇatoditā | varjayitvā paraṁ brahma sarveṣāmeva vidyate || 53 ||

The relation of cause and effect that is spoken of between a thing and what it is compared to holds true for everything, everything, that is, except the supreme Brahman.

जिस चीज़ की तुलना की जाती है और जिससे तुलना की जाती है, उन दोनों के बीच कारण-कार्य का जो संबंध बताया जाता है, वह बाकी सब चीज़ों में होता है, सिर्फ परम ब्रह्म को छोड़कर।

2.18.54

ब्रह्मोपदेशे दृष्टान्तो यस्तवेह हि कथ्यते । एकदेशसधर्मत्वं तत्रान्तः परिगृह्यते ॥ ५४ ॥

brahmopadeśe dṛṣṭānto yastaveha hi kathyate | ekadeśasadharmatvaṁ tatrāntaḥ parigrhyate || 54 ||

Whatever example is given to you here in teaching about Brahman, in that example only a likeness in one point should be taken as meant, and nothing more.

ब्रह्म के बारे में यहाँ तुम्हें जो भी उदाहरण दिया जाता है, उसमें सिर्फ एक ही पहलू की समानता समझनी चाहिए, इससे ज़्यादा नहीं।

2.18.55

यो यो नामेह दृष्टान्तो ब्रह्मतत्त्वावबोधने । दीयते स स बोद्धव्यः स्वप्नजातो जगद्गतः ॥ ५५ ॥

yo yo nāmeha dṛṣṭānto brahmatattvāvabodhane | diyate sa sa boddhavyaḥ svapnajāto jagadgataḥ || 55 ||

Whatever example is given here to make you understand the truth of Brahman, that very example should itself be understood as something born of a dream, something that belongs to this world of appearances.

ब्रह्म के सत्य को समझाने के लिए यहाँ जो भी उदाहरण दिया जाए, उस उदाहरण को भी सपने जैसी चीज़ समझना चाहिए, जो इसी दिखने वाले जगत का हिस्सा है।

2.18.56

एवं सति निराकारे ब्रह्मण्याकारवान्कथम् । दृष्टान्त इति नोद्यन्ति मूर्खवैकल्पिकोक्तयः ॥ ५६ ॥

evaṁ sati nirākāre brahmaṇyākāravāṅkatham | dṛṣṭānta iti nodyanti mūrkhavaikalpikoktayāḥ || 56 ||

Since this is so, foolish and merely argumentative objections such as how can there be an example with form for a Brahman that has no form, simply do not arise.

ऐसा होने पर, 'निराकार ब्रह्म के लिए साकार उदाहरण कैसे हो सकता है' जैसी मूर्खतापूर्ण और सिर्फ बहस के लिए की गई बातें उठती ही नहीं हैं।

2.18.57

अन्यासिद्धविरुद्धादिदृष्टान्तप्रदूषणैः । स्वप्नोपमत्वाज्जगतः समुदेति न किञ्चन ॥ ५७ ॥

anyāsiddhviruddhādirḍḡḡṣṭāntapradūṣaṇaiḥ | svapnopamatvājagataḥ samudeti na kiṃcana || 57 ||

Since the world is like a dream, no objection at all, of the kind that calls an example unproved, self-contradictory, and so on, can really apply to it.

क्योंकि यह जगत सपने जैसा है, इसलिए उदाहरण को असिद्ध, विरोधाभासी वगैरह कहकर जो एतराज़ उठाए जाते हैं, वे यहाँ लागू ही नहीं होते।

2.18.58

अवस्तु पूर्वापरयोर्वर्तमाने विचारितम् । यथा जाग्रत्तथा स्वप्नः सिद्धमाबालमागतम् ॥ ५८ ॥

avastu pūrvāparayorvartamāne vicāritam | yathā jāgrattathā svapnaḥ siddhamābālamāgatam || 58 ||

Not real before, not real after, and not real even when examined right in the present — waking and dreaming are exactly alike in this. This is a settled truth, known even to a child.

पहले भी असली नहीं, बाद में भी असली नहीं, और अभी वर्तमान में जाँचने पर भी असली नहीं, जागने की अवस्था और सपने की अवस्था इस मामले में बिल्कुल एक जैसी हैं। यह बात एक बच्चा भी जानता है।

2.18.59

स्वप्नसंकल्पनाध्यानवरशापौषधादिभिः । यथार्था इह दृष्टान्तास्तद्रूपत्वाज्जगत्स्थितेः ॥ ५९ ॥

svapnasankalpanādhyānavaraśāpauṣadhādibhiḥ | yathārthā iha dṛṣṭāntāstadrūpatvājagatsthiteḥ || 59 ||

Examples drawn from a dream, an imagination, a deep meditation, a boon, a curse, a drug, and the like, are exactly fitting here, because the very existence of this world is of that same nature.

सपने, कल्पना, गहरे ध्यान, वरदान, श्राप, और नशीली दवा जैसी चीज़ों से लिए गए उदाहरण यहाँ बिल्कुल ठीक बैठते हैं, क्योंकि इस जगत का होना भी ठीक इसी तरह का है।

2.18.60

मोक्षोपायकृता ग्रन्थकारेणान्येऽपि ये कृताः । ग्रन्थास्तेष्वियमेवैका व्यवस्था बोध्यबोधने ॥ ६० ॥

mokṣopāyakṛtā granthakāreṇānye'pi ye kṛtāḥ | granthāsteṣvīyamevaikā vyavasthā bodhyabodhane || 60 ||

Whatever other books this same author has written on the means to liberation, in those too, this is the one and only method used for making what needs to be understood, understood.

मुक्ति के उपाय पर यह ग्रंथ लिखने वाले लेखक ने जो भी दूसरे ग्रंथ लिखे हैं, उनमें भी समझाने की यही एक तरीका अपनाया गया है।

2.18.61

स्वप्नाभत्वं च जगतः श्रुते शास्त्रेऽवबोध्यते शीघ्रं न पार्यते वक्तुं वाक्किल क्रमवर्तिनी ॥ ६१ ॥

svapnābhattvaṃ ca jagataḥ śrute śāstre'vabodhyate śīghraṃ na pāryate vaktuṃ vākki la kramavartinī || 61 ||

The dream-like nature of the world becomes clear once this teaching is heard. But it cannot be told all at once, because speech, after all, has to move one step at a time.

इस शास्त्र को सुनने पर जगत के सपने जैसे होने की बात समझ में आ जाती है। पर इसे एक ही बार में पूरी तरह नहीं कहा जा सकता, क्योंकि बोली गई बात हमेशा एक-एक करके, क्रम से ही आगे बढ़ती है।

2.18.62

स्वप्नसंकल्पनाध्याननगराद्युपमं जगत्तस्त एव दृष्टान्तास्तस्मात्सन्तीह नेतरे ॥ ६२ ॥

svapnasamkalpanādhyānanagarādyupamaṃ jagatyatasta eva dṛṣṭāntāstasmātsantīha netare || 62 ||

The world is like a dream, like something imagined, like a deep meditation, like a city built only in the mind. So these are the right examples for it, and no other kind of example fits here.

यह जगत सपने जैसा है, कल्पना जैसा है, गहरे ध्यान जैसा है, मन में बसाए गए किसी शहर जैसा है। इसलिए यही सही उदाहरण हैं, इसके अलावा कोई और उदाहरण यहाँ ठीक नहीं बैठता।

2.18.63

अकारणे कारणता यद्वोधायोपमीयते न तत्र सर्वसाधर्म्यं संभवत्युपमाश्रमैः ॥ ६३ ॥

akāraṇe kāraṇatā yadbodhāyopamīyate na tatra sarvasādharmyaṃ sambhavatyupamāśramaiḥ || 63 ||

When, just to help understanding, we speak of a cause for something that really has no cause at all, a full likeness in every respect is simply not possible there, however hard one tries to make the comparison fit.

जब समझाने के लिए किसी ऐसी चीज़ को कारण वाली कहा जाता है जिसका असल में कोई कारण है ही नहीं, तो चाहे तुलना को कितना भी ठीक बिठाने की कोशिश की जाए, हर तरह से पूरी समानता संभव नहीं होती।

2.18.64

उपमेयस्योपमानादेकांशेन सधर्मता अङ्गीकार्यावबोधाय धीमता निर्विवादिना ॥ ६४ ॥

upameyasyopamānādekāṃśena sādharmaṭā aṅgīkāryāvabodhāya dhīmatā nirvivādinā || 64 ||

A wise person who has no wish to argue should accept only a likeness in one point between the thing and what it is compared to, and accept just that much, for the sake of understanding.

समझदार आदमी जिसे बेकार बहस नहीं करनी, उसे बस इतना मान लेना चाहिए कि जिस चीज़ की तुलना की जा रही है और जिससे तुलना की जा रही है, उनमें सिर्फ एक बिंदु पर समानता है, समझने भर के लिए इतना ही काफी है।

2.18.65

अर्थावलोकने दीपादाभामात्रादृते किल न स्थानतैलवर्त्यादि किञ्चिदव्युपयुज्यते ॥ ६५ ॥

arthāvalokane dipādābhāmātrādṛte ki la na sthānatāilavartyādi kiṃcidavyupayujyate || 65 ||

To see an object by lamplight, nothing else matters except the light itself that comes from the lamp. The stand, the oil, the wick, and everything else about the lamp are, by themselves, of no use for the seeing.

किसी चीज़ को दीये की रोशनी में देखने के लिए सिर्फ उससे निकलने वाली रोशनी काम आती है, दीये का आधार, तेल, बत्ती वगैरह देखने के काम खुद में नहीं आते।

2.18.66

एकदेशसमर्थत्वादुपमेयावबोधनम् । उपमानं करोत्यङ्ग दीपोऽर्थप्रभया यथा ॥ ६६ ॥

ekadeśasamarthatvādupameyāvabodhanam | upamānaṃ karotyāṅga dīpo'rthaprabhayā yathā || 66 ||

Dear one, because it is fit for the purpose only in one respect, the thing used for comparison brings about understanding of the thing compared, just as a lamp makes an object known only through the light it throws on it.

प्रिय, जिस चीज़ से तुलना की जाती है वह सिर्फ एक पहलू में काम की होने के कारण ही समझने में मदद करती है, जैसे दीया किसी चीज़ को सिर्फ उस पर पड़ने वाली रोशनी के ज़रिए ही दिखाता है।

2.18.67

दृष्टान्तस्यांशमात्रेण बोध्यबोधोदये सति । उपादेयतया ग्राह्यो महावाक्यार्थनिश्चयः ॥ ६७ ॥

dr̥ṣṭāntasyāṃśamātreṇa bodhyabodhodaye sati | upādeyatayā grāhyo mahāvākyārthanisścayaḥ || 67 ||

Once understanding of the point has arisen through just one part of the example, the settled meaning of the great sayings of the scriptures should then be grasped and held on to.

जब उदाहरण के सिर्फ एक हिस्से से ही समझ आ जाए, तो फिर शास्त्रों के महावाक्यों के निश्चित अर्थ को पकड़कर अपना लेना चाहिए।

2.18.68

न कुतार्किकतामेत्य नाशनीया प्रबुद्धता । अनुभूत्यपलापान्तैरपवित्रैर्विकल्पितैः ॥ ६८ ॥

na kutārkikatāmetya nāśanīyā prabuddhatā | anubhūtyapalāpāntairapavitrairvikalpitaḥ || 68 ||

One should not fall into bad, quibbling argument and destroy one's own awakened understanding through impure speculations that end up denying one's own direct experience.

बुरी, कुतर्क भरी बहस में पड़कर अपनी जागी हुई समझ को नष्ट नहीं करना चाहिए, ऐसी गंदी उलझी हुई बातों से जो आखिर में अपने ही सीधे अनुभव को झुठला दें।

2.18.69

विचारणादनुभवकारिवैरिणोऽपि वाङ्मयं त्वनुगतमस्मदादिषु । स्त्रियोक्तमप्यपपरमार्थवैदिकं वचो वचःप्रलपनमेव नागमः ॥ ६९ ॥

vicāraṇādanubhava-kārivairiṇo'pi vāṅmayam tv anugatamasmadādiṣu | striyoktamapy apaparamārthavaidikaṁ vaco vacaḥpralapanameva nāgamaḥ || 69 ||

Through careful inquiry, we accept even the words of an enemy, if they bring about true understanding. In the same way, even words spoken by a woman, dealing with the highest truth though they are not themselves from the Veda, are to be accepted. But speech that is nothing but babble is not real teaching at all, whatever its source.

अच्छी तरह विचार करने पर, अगर किसी दुश्मन की बात भी सच्ची समझ दे, तो हम जैसे लोग उसे भी मान लेते हैं। उसी तरह, किसी स्त्री की कही बात भी, भले ही वह वेद से न हो, अगर वह परम सत्य की बात करती है तो माननी चाहिए। पर सिर्फ बकवास भरी बात, चाहे वह किसी की भी हो, सच्ची शिक्षा नहीं है।

2.18.70

अस्माकमस्ति मतिरङ्ग तयेति सर्वशास्त्रैकवाक्यकरणं फलितं यतो यः । प्रातीतिकार्थमपशास्त्रनिजाङ्गपुष्टात्संवेदनादितरदस्ति ततः प्रमाणम् ॥ ७० ॥

asmākamasti matiraṅga tayeti sarvaśāstraikavākyakaraṇam phalitaṁ yato yaḥ | prātītikārthamapaśāstranijāṅgapuṣṭātsaṁvedanāditara dasthi tataḥ pramāṇam || 70 ||

We hold this view, dear one: through this understanding, all the scriptures are brought to speak as one voice. For apart from one's own direct experience, self-sustained, not dependent on any book, and giving the truly felt meaning, is there any other proof at all?

प्रिय, हमारी यह समझ है, इसी समझ के ज़रिए सारे शास्त्र एक ही बात कहते हुए मिल जाते हैं। क्योंकि अपने ही सीधे अनुभव के अलावा, जो अपने आप में पूरा है, किसी शास्त्र पर निर्भर नहीं, और जो सच में महसूस होने वाला अर्थ देता है, और कोई प्रमाण है ही नहीं।

Chapter 19

2.19.1

श्रीवसिष्ठ उवाचविशिष्टांशसमर्थत्वमुपमानेषु गृह्यतेको भेदः सर्वसादृश्ये तूपमानोपमेययोः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvācaviśiṣṭāṃśasamarthatvamupamāneṣu grhyateko bhedaḥ sarvasādr̥śye tūpamānopameyayoḥ || 1 ||

Sri Vasishtha said: In using any comparison, we accept only the strength of one particular point of likeness. For if the thing and what it is compared to were alike in every way, what difference would be left between them at all?

श्री वसिष्ठ बोले: किसी भी उपमा में हम सिर्फ एक खास बिंदु की समानता को मानते हैं। क्योंकि अगर जिस चीज़ की तुलना की जा रही है और जिससे तुलना की जा रही है, वे हर तरह से एक जैसी हों, तो फिर उनमें फ़र्क ही क्या रह जाएगा?

2.19.2

दृष्टान्तबुद्धावेकात्मज्ञानशास्त्रार्थवेदनात्महावाक्यार्थसंसिद्धा शान्तिनिर्वाणमुच्यते ॥ २ ॥

dr̥ṣṭāntabuddhāvekātmajñānāśāstrārthavedanātmahāvākyaṛthasaṃsiddhā śāntinirvāṇamucyate || 2 ||

Once, through the understanding built up by examples, one grasps the meaning the scriptures teach about the one single self, and through the meaning of the great sayings a full peace is achieved, that peace is called liberation.

जब उदाहरणों से बनी समझ के ज़रिए एक ही आत्मा के बारे में शास्त्रों की बात समझ में आ जाती है, और महावाक्यों के अर्थ से पूरी शांति मिल जाती है, उसी शांति को मुक्ति कहा जाता है।

2.19.3

तस्माद्दृष्टान्तदार्ष्टान्तविकल्पोल्लसितैरलम्यया कयाचिद्युक्त्या तु महावाक्यार्थमाश्रयेत् ॥ ३ ॥

tasmāddr̥ṣṭāntadār̥ṣṭāntavikalpollasitairalamyayā kayāchidyuktyā tu mahāvākyaṛthamāśrayet || 3 ||

So enough of endless arguments back and forth over examples and counter-examples. By whatever reasoning works, one should simply take hold of the meaning of the great sayings.

इसलिए उदाहरणों और उनके जवाबी उदाहरणों को लेकर बेकार बहस बहुत हो चुकी। जिस भी तर्क से बात बने, उसी से महावाक्यों के अर्थ को पकड़ लेना चाहिए।

2.19.4

शान्तिः श्रेयः परं विद्धि तत्प्राप्तौ यत्नवान्भव । भोक्तव्यमोदनं प्राप्तं किं तत्सिद्धौ विकल्पितैः ॥ ४ ॥

śāntiḥ śreyah param viddhi tatprāptau yatnavānbhava | bhoktavyamodanam prāptam kiṃ tatsiddhau vikalpitaiḥ || 4 ||

Know that peace is the highest good, and make every effort to reach it. Once the food that is to be eaten is there in front of you, what is the use of arguing over how it got cooked?

जान लो कि शांति ही सबसे बड़ी भलाई है, और उसे पाने की पूरी कोशिश करो। जब खाने के लिए चावल सामने आ ही गए हैं, तो यह बहस करने से क्या फ़ायदा कि वे कैसे बने?

2.19.5

अकारणैः कारणिभिर्बोधार्थमुपमीयते उपमानैस्तूपमेयैः सदृशैरेकदेशतः ॥ ५ ॥

akāraṇaiḥ kārāṇibhirbodhārthamupamīyate upamānais tūpameyaiḥ sadṛśairekaśeṣataḥ || 5 ||

For the sake of understanding, things that truly have no cause are compared to things that do have causes. But the thing used for comparison and the thing being compared are alike only in one respect, not in every way.

समझाने के लिए, जिन चीज़ों का असल में कोई कारण नहीं होता, उन्हें कारण वाली चीज़ों से तुलना करके समझाया जाता है, पर जिससे तुलना की जाती है और जिसकी तुलना की जाती है, वे सिर्फ एक बिंदु पर मिलते-जुलते हैं, हर तरह से नहीं।

2.19.6

स्थातव्यं नेह भोगेषु विवेकरहितात्मना उपलोदरसंजातपरिपीनान्धबेकवत् ॥ ६ ॥

sthātavyaṃ neha bhogeṣu vivekara hitātmanā upalodarasaṃjāta pari pīnāndhabhekavat || 6 ||

A person without discrimination should not stay fixed on the pleasures of this world, like a blind, fattened frog living trapped inside a stone.

जिसमें सही समझ नहीं है, उसे इस दुनिया के भोग-सुखों में जमे नहीं रहना चाहिए, जैसे कोई मोटा, अंधा मेंढक किसी पत्थर के भीतर बंद पड़ा रहता है।

2.19.7

दृष्टान्तर्यत्नमाश्रित्य जेतव्यं परमे पदम्विचारणवता भाव्यं शान्तिशास्त्रार्थशालिना ॥ ७ ॥

dr̥ṣṭāntairyatnamāśritya jetavyaṃ parame padamvicāraṇavatā bhāvyaṃ śāntiśāstrārthaśālīnā || 7 ||

Using examples, and making real effort, one should win the highest state. One should become someone who truly inquires, who has taken to heart the teaching on peace found in this scripture. उदाहरणों का सहारा लेकर और पूरी मेहनत करके परम पद को पाना चाहिए। इंसान को सच में विचार करने वाला बनना चाहिए, जिसने शांति के इस शास्त्र की बात को अपने भीतर उतार लिया हो।

2.19.8

शास्त्रोपदेशसौजन्यप्रज्ञातज्ज्ञसमागमैः अन्तरान्तरसंपन्नधर्मार्थोपार्जनक्रियाः ॥ ८ ॥

śāstropadeśasaujanyaprajñātajjñasamāgamaiḥ antarāntarasampannadharmārthopārjanakriyāḥ || 8 ||

Through the teaching of scripture, through kindness, through wisdom, and by meeting those who truly know, and now and then, along the way, by carrying out the tasks of earning a livelihood and doing what is right,

शास्त्र की शिक्षा से, भलमनसाहत से, समझदारी से, और सच जानने वालों से मिलकर, और बीच-बीच में सही ढंग से रोज़ी कमाने और अपना फ़र्ज़ निभाने के काम करते हुए,

2.19.9

तावद्विचारयेत्प्राज्ञो यावद्विश्रान्तिमात्मनिसंप्रयात्यपुनर्नाशां शान्तिं तुर्यपदाभिधाम् ॥ ९ ॥

tāvadvicārayetprājño yāvadvīśrāntimātmanisamprayātyapunarnāśāṃ śāntiṃ turyapadābhidhām || 9 ||

the wise man should go on inquiring, for exactly as long as it takes, until he reaches within himself a rest that is a peace which is never again destroyed, the peace called the state of the fourth.

समझदार आदमी को तब तक विचार करते रहना चाहिए, जब तक उसे अपने भीतर वह शांति न मिल जाए जो फिर कभी नहीं मिटती, उसी शांति को तुरीय पद कहा जाता है।

2.19.10

तुर्यविश्रान्तियुक्तस्य प्रतीपस्य भवार्णवात्जीवतोऽजीवतश्चैव गृहस्थस्य तथा यतेः ॥ १० ॥

turyaviśrāntiyuktasya pratīpasya bhavārṇavātjīvato'jīvataścaiva gr̥hasthasya tathā yateḥ || 10 ||

For one who rests firmly in the state of the fourth, who has turned back from the ocean of worldly life, whether he goes on living an ordinary life or gives it up, whether he is a householder or a wandering ascetic,

जो तुरीय पद की शांति में टिका हुआ है और संसार के समुद्र से मुँह मोड़ चुका है, चाहे वह आम जीवन जीता रहे या छोड़ दे, चाहे वह गृहस्थ हो या संन्यासी,

2.19.11

न कृतेनाकृतेनार्थो न श्रुतिस्मृतिविभ्रमैः निर्मन्दर इवाम्भोधिः स तिष्ठति यथास्थितम् ॥ ११ ॥

na kṛtenākṛtenārtho na śrutismṛtivyibhramaiḥ nirmandara ivāmbhodhiḥ sa tiṣṭhati yathāsthitam || 11 ||

there is nothing to be gained by doing or by not doing, and nothing to be gained from disputes over the Shruti and the Smriti. Like an ocean that Mount Mandara no longer churns, he simply remains as he is.

उसे न तो कुछ करने से कुछ मिलता है, न कुछ न करने से, और न ही श्रुति-स्मृति की बहसों से कुछ मिलता है। जैसे समुद्र को मंदराचल अब नहीं मथता, वैसे ही वह जैसा है वैसा ही बना रहता है।

2.19.12

एकांशेनोपमानानामुपमेयसधर्मता बोद्धव्यं बोध्यबोधाय न स्थेयं बोधचञ्चुना ॥ १२ ॥

ekāṁśenopamānānamupameyasadharmatā boddhavyaṁ bodhyabodhāya na stheyam bodhacañcunā || 12 ||

The likeness between the thing being compared and the things used for comparison exists only in one part. What needs to be understood should be understood for the sake of understanding, not by going on pecking at it with the beak of endless argument.

जिस चीज़ की तुलना की जा रही है, उसकी तुलना के लिए काम आने वाली चीज़ों से समानता सिर्फ़ एक हिस्से में होती है। जो समझना है उसे समझने के लिए ही समझना चाहिए, बहस की चोंच से उसे बार-बार कुरेदते नहीं रहना चाहिए।

2.19.13

यया कयाचिद्युक्त्या तु बोद्धव्यं बोध्यमेव ते युक्तायुक्तं न पश्यन्ति व्याकुला बोधचञ्चवः ॥ १३ ॥

yayā kayācidyuktyā tu boddhavyaṁ bodhyameva te yuktāyuktaṁ na paśyanti vyākulā bodhacañcavaḥ || 13 ||

By whatever reasoning works, what needs to be understood should simply be understood. But those confused wranglers, forever pecking with the beak of argument, cannot tell right reasoning from wrong.

जिस भी तर्क से बात समझ में आए, जो समझना है उसे बस समझ लेना चाहिए। पर बहस की चोंच चलाने वाले वे उलझे हुए लोग यह फ़र्क़ ही नहीं देख पाते कि कौन-सा तर्क सही है और कौन-सा गलत।

2.19.14

हृदये संविदाकाशे विश्रान्तेऽनुभवात्मनि वस्तुन्यनर्थं यः प्राह बोधचञ्चुः स उच्यते ॥ १४ ॥

hr̥daye saṁvidākāśe viśrānte'nubhavātmani vastunyānartham yaḥ prāha bodhacañcuḥ sa ucyate || 14 ||

Whoever speaks against, calling pointless or harmful, the real truth that already rests quietly in the space of awareness within the heart, in the very nature of direct experience, is the one who is called a mere quibbler pecking with the beak of argument.

जो कोई भी उस सच्चाई को, जो दिल के भीतर चेतना के आकाश में सीधे अनुभव के रूप में पहले से ही शांत टिकी हुई है, बेकार या नुकसानदेह बताता है, उसी को बहस की चोंच चलाने वाला कहा जाता है।

2.19.15

अभिमानविकल्पांशैरज्ञो ज्ञप्तिं विकल्पयेत् बोधं मलिनयत्यन्तः स्वं खमब्द इवामलम् ॥ १५ ॥

abhimānavikalpāṁśairajño jñaptiṁ vikalpayet bodham malinayatyantaḥ svaṁ khamabda ivāmalam || 15 ||

Out of fragments of ego and speculation, the ignorant man throws doubt on true knowing. He clouds his own inner understanding, the way a cloud dirties the clear sky.

अहंकार और उधेड़बुन के छोटे-छोटे टुकड़ों से अनजान आदमी सच्ची समझ पर शक करता है, और अपनी ही भीतरी समझ को गंदा कर देता है, जैसे बादल साफ़ आसमान को धुंधला कर देता है।

2.19.16

सर्वप्रमाणसत्तानां पदमब्धिरपामिव । प्रमाणमेकमेवेह प्रत्यक्षं तदतः शृणु ॥ १६ ॥

sarvaprāmāṇasattānāṁ padamabdhirapāmiva | prāmāṇamekameveha pratyakṣam tadataḥ śṛṇu || 16 ||

There is one single foundation for the truth of all other means of knowledge, the way the ocean is the source of all waters. Here, truly, there is only one valid means of knowledge, which is direct perception. Now hear about it.

जैसे समुद्र सारे पानी का मूल स्रोत है, वैसे ही बाकी सभी प्रमाणों की सच्चाई का मूल आधार एक ही है, और वह है सिर्फ प्रत्यक्ष, यानी सीधा अनुभव। अब इसे सुनो।

2.19.17

सर्वाक्षसारमध्यक्षं वेदनं विदुरुत्तमाः नूनं तत्प्रतिपत्सिद्धं तत्प्रत्यक्षमुदाहृतम् ॥ १७ ॥

sarvākṣasāramadhyakṣam vedanam viduruttamāḥnūnam tatpratipatsiddham tatpratyakṣamudāhṛtam || 17 ||

The wisest know that the very essence of all the senses is this direct awareness itself. And it is this awareness, known the moment it is grasped, that is truly called direct perception.

सबसे समझदार लोग जानते हैं कि सभी इंद्रियों का असली सार यही सीधी चेतना है। और यही चेतना, जो जानते ही सिद्ध हो जाती है, उसी को सच में प्रत्यक्ष कहा जाता है।

2.19.18

अनुभूतेर्वेदनस्य प्रतिपत्तेर्यथाभिधम् । प्रत्यक्षमिति नामेह कृतं जीवः स एव नः ॥ १८ ॥

anubhūtervedanasya pratipatteryathābhidham | pratyakṣamiti nāmeha kṛtaṁ jīvaḥ sa eva naḥ || 18 ||

To direct experience, to awareness, to immediate apprehension, under their various names, we have here given a single name, direct perception. That very thing is the individual self, and that individual self is nothing other than ourselves.

सीधे अनुभव को, चेतना को, तुरंत हो जाने वाली समझ को, अलग-अलग नामों से जाना जाता है, पर यहाँ हमने इसे एक ही नाम दिया है, प्रत्यक्ष। यही असल में जीव है, और वह जीव कोई और नहीं, हम खुद ही हैं।

2.19.19

स एव संवित्स पुमानहंताप्रत्ययात्मकः । स ययोदेति संवित्या सा पदार्थ इति स्मृता ॥ १९ ॥

sa eva saṁvitsa pumānahantāpratyayātmaḥ | sa yayodeti saṁvityā sā padārtha iti smṛtā || 19 ||

That very thing is consciousness, that is the person, whose nature is the sense of I. And whatever appears through that awareness is what we call an object, a thing.

वही चेतना है, वही वह व्यक्ति है जिसका स्वभाव 'मैं' का भाव है। और जो कुछ भी उस चेतना के ज़रिए सामने आता है, उसी को चीज़ या पदार्थ कहा जाता है।

2.19.20

ससंकल्पविकल्पाद्यैः कृतनानाक्रमभ्रमैः । जगत्तया स्फुरत्यम्बु तरङ्गादितया यथा ॥ २० ॥

sasaṁkalpavikalpādyaiḥ kṛtanānākramabhramaiḥ | jagattayā sphuratyambu taraṅgāditayā yathā || 20 ||

That same consciousness, through imagination, doubt, and the like, which create a whole series of shifting illusions, shines forth as the world, just as water appears in the form of waves and so on.

वही चेतना, कल्पना, शक वगैरह के ज़रिए जो एक के बाद एक भ्रम पैदा करती है, जगत के रूप में चमक उठती है, जैसे पानी लहरों वगैरह के रूप में दिखता है।

2.19.21

प्रागकारणमेवाशु सर्गादौ सर्गलीलया । स्फुरित्वा कारणं भूतं प्रत्यक्षं स्वयमात्मनि ॥ २१ ॥

prāgakāraṇamevāśu sargādaḥ sargalīlayā | sphuritvā kāraṇaṁ bhūtaṁ pratyakṣaṁ svayamātmani || 21 ||

At first, though it has no cause at all, at the very start of creation, through creation's own play, it quickly shines forth and becomes the cause of everything, directly known, by itself, within the self.

शुरू में, खुद बिना किसी कारण के, सृष्टि के आरंभ में, सृष्टि की अपनी ही लीला से, वह तुरंत चमक उठती है और सबका कारण बन जाती है, जो अपने आप, आत्मा के भीतर, सीधे जानी जाती है।

2.19.22

कारणं त्वविचारोत्थजीवस्यासदपि स्थितम् । सदिव्यासां जगद्रूपं प्रकृतौ व्यक्तिमागतम् ॥ २२ ॥

kāraṇaṁ tvavicārothajīvasyāsadapi sthitam | sadvāsyāṁ jagadrūpaṁ prakṛtau vyaktimāgataṁ || 22 ||

But the cause behind the individual self, a self that has arisen only out of a failure to inquire, does not really exist at all. Yet it stands there as if it did exist, and in this nature it has come into visible form as the world.

पर जीव का कारण, जो सिर्फ सोच-विचार न करने से पैदा हुआ है, असल में है ही नहीं, फिर भी वह ऐसे खड़ा रहता है जैसे हो, और इसी प्रकृति में वह जगत के रूप में दिखने लगता है।

2.19.23

स्वयमेव विचारस्तु स्वत उत्थं स्वकं वपुः । नाशयित्वा करोत्याशु प्रत्यक्षं परमं महत् ॥ २३ ॥

svayameva vicārastu svata utthaṁ svakaṁ vapuḥ | nāśayitvā karotyāśu pratyakṣaṁ paramaṁ mahat || 23 ||

But inquiry itself, once it has destroyed its own form, the self that had arisen out of itself, quickly brings about the direct realisation of the supreme, the great reality.

पर विचार खुद ही, अपने से पैदा हुए अपने रूप को मिटाकर, तुरंत उस परम, महान सत्य का सीधा साक्षात्कार करा देता है।

2.19.24

विचारवान्विचारोऽपि आत्मानमवगच्छति । यदा तदा निरुल्लेखं परमेवावशिष्यते ॥ २४ ॥

vicāravānvicāro'pi ātmānamavagacchati | yadā tadā nirullekhaṁ paramevāvaśiṣyate || 24 ||

When both the inquirer and his inquiry come to know the self, then only the supreme remains, without any mark or feature left at all.

जब जिज्ञासु और उसका विचार दोनों आत्मा को जान लेते हैं, तब सिर्फ वह परम तत्व बचता है, जिसका कोई चिन्ह या रूप-रेखा नहीं होती।

2.19.25

मनस्यनीहिते शान्ते स्वबुद्धीन्द्रियकर्मभिः । नहि कश्चित्कृतैरर्थो नाकृतैरप्यभावेनात् ॥ २५ ॥

manasyanīhite śānte svabuddhīndriyakarmabhiḥ | nahi kaścitkṛtairartha nākṛtairapyabhāvanāt || 25 ||

When the mind has become free of craving and calm, the actions of one's own intellect and senses serve no purpose at all, whether they are done or left undone, because there is no longer any such notion left in the mind.

जब मन इच्छा-रहित और शांत हो जाता है, तो अपनी बुद्धि और इंद्रियों के कामों से कुछ हासिल नहीं होता, चाहे वे किए जाएं या न किए जाएं, क्योंकि तब मन में ऐसा कोई विचार बचता ही नहीं।

2.19.26

मनस्यनीहिते शान्ते न प्रवर्तन्त एव ते । कर्मेन्द्रियाणि कर्मादावसंचारितयन्त्रवत् ॥ २६ ॥

manasyanīhite śānte na pravartanta eva te | karmendriyāṇi karmādāvasaṁcāritayantravat || 26 ||

When the mind has become free of craving and calm, the organs of action no longer engage in any action at all, like a machine that no one has switched on.

जब मन इच्छा-रहित और शांत हो जाता है, तो शरीर के कर्म-अंग किसी काम में लगते ही नहीं, जैसे कोई मशीन जिसे चालू ही न किया गया हो।

2.19.27

मनोयन्त्रस्य चलने कारणं वेदनं विदुः । प्रणालीदारुमेषस्य रज्जुरन्तर्गता यथा ॥ २७ ॥

manoyantrasya calane kāraṇaṁ vedanaṁ viduḥ | praṇālīdārumēṣasya rajjurantargatā yathā || 27 ||

The wise know that awareness is the hidden cause that moves the machine of the mind, like a rope hidden inside that moves a wooden ram through its channel.

समझदार लोग जानते हैं कि मन नाम की मशीन को चलाने के पीछे वेदना यानी अनुभूति ही कारण है, जैसे किसी लकड़ी के मेढ़े को नाली में चलाने के पीछे उसके भीतर छिपी हुई रस्सी होती है।

2.19.28

रूपालोकमनस्कारपदार्थव्याकुलं जगत् । विद्यते वेदनस्यान्तर्वातान्तः स्पन्दनं यथा ॥ २८ ॥

rūpālokanamanaskārapadārthavyākulaṁ jagat | vidyate vedanasya antarvātāntaḥ spandanaṁ yathā || 28 ||

The world, crowded with forms, light, thoughts, and objects, exists within awareness itself, the way a throbbing movement exists within a gust of wind.

रूप, रोशनी, मन के विचार और चीजों से भरा हुआ यह जगत, चेतना के भीतर ही मौजूद है, जैसे हवा के झोंके के भीतर एक हलचल मौजूद होती है।

2.19.29

सर्वात्मवेदनं शुद्धं यथोदेति तदात्मकम् । भाति प्रसृतदिक्कालबाह्यान्तारूपदेहकम् ॥ २९ ॥

sarvātma vedanaṃ śuddhaṃ yathodeti tadātmakam | bhāti prasṛtadikkālabāhyāntārūpadehakam || 29 ||

As the pure awareness that is the very self of everything arises, it shines forth in that same nature, spreading through space and time, taking the shape of bodies both outside and within.

जब हर चीज़ की आत्मा वाली यह शुद्ध चेतना उठती है, तो वह उसी रूप में चमकती है, समय और जगह में फैलकर, बाहर और भीतर दोनों तरह के शरीरों का रूप लेकर।

2.19.30

दृष्टैव दृश्यताभासं स्वरूपं धारयन्स्थितः । स्वं यथा यत्र यद्रूपं प्रतिभाति तथैव तत् ॥ ३० ॥

dr̥ṣṭvaiva dr̥śyatābhāsaṃ svarūpaṃ dhārayansthitah | svaṃ yathā yatra yadrūpaṃ pratibhāti tathaiva tat || 30 ||

Even while it shows itself as something seen, it still holds on to its own true nature, unchanged.

Wherever it appears, and in whatever form, it becomes exactly that form.

यह दिखने वाली चीज़ जैसा भास तो देती है, पर अपने असली स्वभाव को बनाए रखती है, बदलती नहीं। यह जहाँ भी और जिस भी रूप में दिखे, ठीक वैसी ही बन जाती है।

2.19.31

स सर्वात्मा यथा यत्र समुल्लासमुपागतः तिष्ठत्याशु तथा तत्र तद्रूप इव राजते ॥ ३१ ॥

sa sarvātmā yathā yatra samullāsamupāgataḥ tiṣṭhatyaśu tathā tatra tadrūpa iva rājate || 31 ||

That self of all, wherever and however it bursts forth into appearance, immediately stands there in just that way, and shines as if it had become that very form.

वह सबकी आत्मा, जहाँ भी और जिस भी रूप में प्रकट होती है, वहाँ तुरंत उसी रूप में ठहर जाती है, और मानो वही रूप बनकर चमकने लगती है।

2.19.32

सर्वात्मकतया द्रष्टृदृश्यत्वमिव युज्यते दृश्यत्वं द्रष्टृसद्भावे दृश्यतापि न वास्तवी ॥ ३२ ॥

sarvātmakatayā draṣṭurdṛśyatvamiva yujyate dṛśyatvaṃ draṣṭṛsadbhāve dṛśyatāpi na vāstavī || 32 ||

Because it is the very self of everything, it seems as though the seer itself becomes something seen. But this state of being seen exists only where there is a seer, and even this being seen is not truly real.

क्योंकि वह हर चीज़ की आत्मा है, इसलिए ऐसा लगता है मानो देखने वाला खुद भी दिखने वाली चीज़ बन गया हो। पर यह दिखना सिर्फ तब होता है जब देखने वाला मौजूद हो, और यह दिखना भी असल में सच नहीं है।

2.19.33

अकारणकमेवातो ब्रह्म सिद्धमिदं स्थितम्प्रत्यक्षमेव निर्मातृ तस्यांशास्त्वनुमादयः ॥ ३३ ॥

akāraṇakamevāto brahma siddhamidaṃ sthitampratyakṣameva nirmātr tasyāṃśāstvanumādayaḥ || 33 ||

So this Brahman stands firmly established, without any cause at all. Direct perception alone truly proves it. Inference and the other means of knowledge are only smaller parts within that.

इसलिए यह ब्रह्म बिना किसी कारण के ही सिद्ध होकर टिका हुआ है। इसे सच में सिद्ध करने वाला सिर्फ प्रत्यक्ष है, अनुमान वगैरह तो बस उसी के छोटे हिस्से हैं।

2.19.34

स्वयत्नमात्रे यदुपासको यस्तद्वैशब्दार्थमपास्य दूरेशूरेण साधो पदमुत्तमं तत् स्वपौरुषेणैव हि लभ्यतेऽन्तः ॥ ३४ ॥

*svayatnamātre yadupāsako yastaddaivaśabdārthamapāsyā dūreśūreṇa sādho padamuttamaṁ tat
svapauruṣeṇaiva hi labhyate'ntaḥ || 34 ||*

Whoever relies only on his own effort, and throws far away any idea of fate or divine will, for such a brave man, good friend, that highest state is reached only through his own effort, from within himself.

जो सिर्फ अपनी मेहनत पर भरोसा करता है, और भाग्य या दैव के भाव को दूर फेंक देता है, हे साधु, ऐसे बहादुर आदमी के लिए वह सबसे ऊँचा पद अपने ही पुरुषार्थ से, अपने भीतर से ही मिलता है।

2.19.35

विचारयाचार्यपरम्पराणां मतेन सत्येन सितेन तावत्यावद्विशुद्धं स्वयमेव बुद्धया ह्यनन्तरूपं परमभ्युपैषि ॥ ३५ ॥

*vicārayācāryaparamparāṇāṁ matena satyena sitena tāvatyāvadviśuddhaṁ svayameva buddhayā
hyanantarūpaṁ paramabhyupaiṣi || 35 ||*

Inquire, using the true and pure teaching handed down through the line of teachers, for as long as it takes, until you yourself, through your own understanding, come to reach that pure, endless, supreme reality.

गुरु-परंपरा की सच्ची और शुद्ध शिक्षा के सहारे तब तक विचार करते रहो, जब तक तुम खुद अपनी समझ से उस शुद्ध, अनंत रूप वाले परम तत्व को न पा लो।

Chapter 20

2.20.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । आर्यसंगमयुक्त्यादौ प्रज्ञां वृद्धिं नयेद्वलात् । ततो महापुरुषतां महापुरुषलक्षणैः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | āryasaṅgamayuktyādau prajñāṃ vṛddhiṃ nayedbalāt | tato mahāpuruṣatām mahāpuruṣalakṣaṇaiḥ || 1 ||

Sri Vasishtha said: Through the company of noble people, right reasoning, and such means, one should make one's understanding grow, and grow strongly. Then, through the marks that show a great man, one should come to the state of a great man.

श्री वसिष्ठ बोले: भले लोगों की संगत, सही तर्क वगैरह के सहारे अपनी समझ को ज़ोर लगाकर बढ़ाना चाहिए। फिर एक महापुरुष के लक्षणों के ज़रिए महापुरुष की अवस्था को पाना चाहिए।

2.20.2

यो यो येन गुणेनेह पुरुषः प्रविराजते । शिष्यते तं तमेवाशु तस्माद्बुद्धिं विवर्धयेत् ॥ २ ॥

yo yo yena guṇeneha puruṣaḥ pravirājate | śiṣyate taṃ tamevāśu tasmādbuddhiṃ vivardhayet || 2 ||

Whichever man shines out here through some good quality, one should quickly become a student of that very quality in him. In this way one should keep growing one's understanding.

जो भी आदमी यहाँ किसी खास गुण से चमकता है, उसी गुण का तुरंत शिष्य बन जाना चाहिए। इस तरह अपनी समझ को बढ़ाते रहना चाहिए।

2.20.3

महापुरुषता ह्येषा शमादिगुणशालिनी । सम्यग्ज्ञानं विना राम सिद्धिमेति न कांचन ॥ ३ ॥

mahāpuruṣatā hyeṣā śamādiguṇaśālīnī | samyagjñānaṃ vinā rāma siddhimeti na kāṇcana || 3 ||

This state of being a great man carries with it qualities like calmness and the rest. But, Rama, without right knowledge, it does not reach any real fulfilment at all.

महापुरुष की यह अवस्था शांति जैसे गुणों से भरी होती है। पर हे राम, सही ज्ञान के बिना यह कभी पूरी सिद्धि तक नहीं पहुँचती।

2.20.4

ज्ञानाच्छमादयो यान्ति वृद्धिं सत्पुरुषक्रमाः । श्लाघनीयाः फलेनान्तर्वृष्टेरिव नवाङ्कुराः ॥ ४ ॥

jñānācchamādayo yānti vṛddhiṃ satpuruṣakramāḥ | ślāghaṇīyāḥ phalenaāntarvṛṣṭeriva navāṅkurāḥ || 4 ||

From knowledge, qualities like calmness grow, and with them the ways of good people. Their fruit is worth praising, like fresh green shoots that spring up because of rain soaking into the ground.

ज्ञान से शांति जैसे गुण बढ़ते हैं, और साथ ही भले लोगों वाला आचरण भी बढ़ता है। इनका फल सराहने लायक होता है, जैसे ज़मीन के भीतर बारिश जाने से ताज़े अंकुर फूट पड़ते हैं।

2.20.5

शमादिभ्यो गुणेभ्यश्च वर्धते ज्ञानमुत्तमम् । अन्नात्मकेभ्यो यज्ञेभ्यः शालिवृष्टिरिवोत्तमा ॥ ५ ॥

śamādibhyo guṇebhyaśca vardhate jñānamuttamam | annātmakebhyo yajñebhyaḥ śālivṛṣṭirivottamā || 5 ||

And from qualities like calmness, the highest knowledge grows in turn, like a fine shower of rice that comes from offerings of grain made in a sacrifice.

और शांति जैसे गुणों से सबसे ऊँचा ज्ञान भी बढ़ता है, जैसे अन्न से किए गए यज्ञ से धान की अच्छी बारिश होती है।

2.20.6

गुणाः शमादयो ज्ञानाच्छमादिभ्यस्तथा ज्ञतापरस्परं विवर्धन्ते ते अब्जसरसी इव ॥ ६ ॥

guṇāḥ śamādayo jñānācchamādibhyastathā jñatāparasparaṃ vivardhante te abjasarasi iva || 6 ||

Qualities like calmness grow out of knowledge, and knowledge in turn grows out of qualities like calmness. Each makes the other grow, the way a lotus and its lake help each other flourish.

शांति जैसे गुण ज्ञान से बढ़ते हैं, और ज्ञान भी शांति जैसे गुणों से बढ़ता है। ये एक-दूसरे को बढ़ाते हैं, जैसे कमल और झील एक-दूसरे को फलने-फूलने में मदद करते हैं।

2.20.7

ज्ञानं सत्पुरुषाचाराज्ज्ञानात्सत्पुरुषक्रमःपरस्परं गतौ वृद्धिं ज्ञानसत्पुरुषक्रमौ ॥ ७ ॥

jñānaṃ satpuruṣācārājñānātsatpuruṣakramahparasparaṃ gatau vṛddhiṃ jñānasatpuruṣakramau || 7 ||

Knowledge grows out of the conduct of good people, and the conduct of good people grows out of knowledge. Knowledge and the way of good people move forward together, each one making the other grow.

ज्ञान भले लोगों के आचरण से बढ़ता है, और भले लोगों का आचरण ज्ञान से बढ़ता है। ज्ञान और सदाचार दोनों साथ-साथ चलते हुए एक-दूसरे को बढ़ाते हैं।

2.20.8

शमप्रज्ञादिनिपुणपुरुषार्थक्रमेण चाभ्यसेत्पुरुषो धीमाज्ज्ञानसत्पुरुषक्रमौ ॥ ८ ॥

śamaprajñādinipuṇapuruṣārthakrameṇa caabhyasetpuruṣo dhīmāñjñānasatpuruṣakramau || 8 ||

And by skilfully pursuing the true goals of life, together with calmness, wisdom, and the rest, a wise man should practise both knowledge and the conduct of good people at once.

और जीवन के असली मकसदों को शांति, समझदारी वगैरह के साथ होशियारी से पूरा करते हुए, समझदार आदमी को ज्ञान और सदाचार दोनों का अभ्यास साथ-साथ करना चाहिए।

2.20.9

न यावत्सममभ्यस्तौ ज्ञानसत्पुरुषक्रमौएकोऽपि नैतयोस्तात पुरुषस्येह सिध्यति ॥ ९ ॥

na yāvatsamamabhyastau jñānasatpuruṣakramaueko'pi naitayostāta puruṣasyeha sidhyati || 9 ||

As long as knowledge and the conduct of good people are not practised together, equally, dear child, not even one of the two is truly achieved by a person.

जब तक ज्ञान और सदाचार दोनों को बराबर साथ-साथ अभ्यास में नहीं लाया जाता, हे बेटा, तब तक इनमें से एक भी आदमी के लिए पूरी तरह सिद्ध नहीं होता।

2.20.10

यथा कलमरक्षिण्या गीत्या वितततालयाखगोत्सादेन सहितं गीतानन्दः प्रसाध्यते ॥ १० ॥

yathā kalamarakṣiṇyā gītyā vitatatālayākhagotsādena sahitaṃ gītānandaḥ prasādhyate || 10 ||

Just as the joy of song is made complete when a girl guarding the paddy field sings a melody, spread out with rhythm, together with the cries of birds,

जैसे धान के खेत की रखवाली करने वाली लड़की का लयबद्ध गीत, पक्षियों की आवाज़ों के साथ मिलकर ही गीत का पूरा आनंद बनाता है,

2.20.11

ज्ञानसत्पुरुषेहाभ्यामकर्त्रा कर्तृरूपिणातथा पुंसा निरिच्छेन सममासाद्यते पदम् ॥ ११ ॥

jñānasatpuruṣehābhyāmakartrā kartṛrūpiṇātathā puṃsā niricchena samamāsādyate padam || 11 ||

so too, that highest state is reached only when a man, though he appears to act, is inwardly a non-doer, free of desire, and pursues knowledge and good conduct together.

वैसे ही वह परम पद तभी मिलता है जब आदमी, बाहर से करता हुआ दिखते हुए भी भीतर से अकर्ता हो, इच्छा-रहित हो, और ज्ञान तथा सदाचार दोनों को साथ-साथ अपनाए।

2.20.12

सदाचारक्रमः प्रोक्तो मयैवं रघुनन्दनतथोपदिश्यते सम्यगेवं ज्ञानक्रमोऽधुना ॥ १२ ॥

sadācārakramah prokto mayaiṣam raghunandanatathopadiśyate samyagevaṃ jñānakramo'dhunā || 12 ||

This is how I have described the way of good conduct, Raghunandana. Now, in the same way, let the way of knowledge be properly taught.

हे रघुनन्दन, इस तरह मैंने सदाचार का तरीका बताया। अब उसी तरह ज्ञान पाने का तरीका ठीक से बताया जाएगा।

2.20.13

इदं यशस्यमायुष्यं पुरुषार्थफलप्रदमज्ज्ञादाप्ताच्च सच्छास्त्रं श्रोतव्यं किल धीमता ॥ १३ ॥

idaṃ yaśasyamāyusyaṃ puruṣārthaphalapradamajñādāptācca sacchāstraṃ śrotavyaṃ kila dhīmatā || 13 ||

This is a good teaching that brings fame and long life, and gives the fruit of the true goals of human life. A wise man should certainly hear it from someone who knows it well and can be trusted.

यह अच्छा शास्त्र यश और लंबी उम्र देता है, और जीवन के असली मकसदों का फल देता है। समझदार आदमी को इसे जरूर किसी ऐसे भरोसेमंद जानकार से सुनना चाहिए जो इसे अच्छी तरह जानता हो।

2.20.14

श्रुत्वा त्वं बुद्धिनैर्मल्याद्बलाद्यास्यसि तत्पदम्यथा कतकसंश्लेषात्प्रसादं कलुषं पयः ॥ १४ ॥

śrutvā tvam buddhinairmalyādbalādyāsyasi tatpadamyathā katakasamśleṣātprasādaṃ kaluṣaṃ payah || 14 ||

Once you have heard it, the very purity of your understanding will surely carry you to that state, just as muddy water becomes clear the moment it touches the clearing-nut seed.

इसे सुनने के बाद, तुम्हारी बुद्धि की शुद्धता तुम्हें जरूर उस पद तक ले जाएगी, जैसे गंदा पानी निर्मली के बीज के छूते ही साफ़ हो जाता है।

2.20.15

विदितवेद्यमिदं हि मनो मुनेर्विवशमेव हि याति परं पदम्यदवबुद्धमक्षण्डितमुत्तमं तदवबोधवशान्न जहाति हि ॥ १५ ॥

viditavedyamidaṃ hi mano munervivaśameva hi yāti paraṃ padamyadavabuddhamakhaṇḍitamuttamaṃ tadavabodhavaśānnajahāti hi || 15 ||

Once the sage's mind has come to know what is there to be known, it goes to the highest state on its own, without needing to be forced. And once that whole, supreme reality has been truly realised, the mind, because of that very realisation, never leaves it again.

जब मुनि का मन जानने लायक चीज़ को जान लेता है, तो वह अपने आप, बिना किसी ज़ोर-ज़बरदस्ती के, उस परम पद तक पहुँच जाता है। और एक बार जब वह पूरा, अखंड, सबसे ऊँचा सत्य जान लिया जाता है, तो उसी जानकारी की वजह से मन फिर कभी उसे नहीं छोड़ता।